उत्तर प्रदेश में महिलाओं की स्थिति का एक समाज शास्त्रीय अध्ययन

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

की

डी. फिल. उपाधि के लिए

प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

शोधार्थी

अलका सिंह

शोध निर्देशक

प्रो० चन्द्र प्रकाश झा
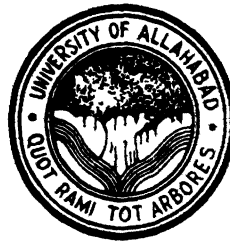
मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

1998

विषय—सूची

प्रस्तावना

पिछले 50 वर्षो मे महिलाओ की स्थिति का विभिन्न स्तरो पर समग्र आकलन हमारी सम्पूर्ण सामाजिक प्रगति के मूल्याकन के लिए अत्यत आवश्यक है। यह हमारी प्रगति के गणित को स्पष्ट कर देता है। शिक्षा के विकास, रोजगार की स्थितियो तथा सामाजिक चेतना के समस्त आकडे महिलाओ के सम्बन्ध मे कितने सार्थक है यह जानना अत्यत आवश्यक है, क्योकि महिलाये देश की जनसख्या का 48 प्रतिशत है जो सामान्यत उपेक्षित है। यह उपेक्षा हमारी परम्परागत समझ और नैतिक सोच का नमूना है। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात बदली परिस्थितियो तथा वैश्विक लिग--चेतना की समझ ने समाज के प्रति हमारी वैज्ञानिक सोच को सुदृढ किया है। महिलाए इससे अछूती नही है।

भारतीय इतिहास के कुछ तथाकथित सुखद अतीत को छोड दे तो भारतीय समाज मे माहिलाओ का जीवन स्तर बहुत अच्छा नही रहा है। ऐसा माना जाता है कि ऋग्वेद काल मे महिलाओ को समाज मे बराबरी का स्थान दिया गया था ऐसा हम बाद की स्थितियो को देखते हुए कह सकते है। उत्तर वैदिक काल तथा उसके पश्चात का सम्पूर्ण साहित्य महिलाओ के पतन का साक्षी है। रामायण के नैतिक आदर्शो मे सीता की अग्नि परीक्षा हो या महाभारत की पृष्ठभूमि मे द्रौपदी का चीरहरण या फिर याज्ञवल्क और गार्गी का सवाद हो, स्त्री हमेशा वही रही है जैसी वह बनायी गयी है। उत्तर--वैदिक काल से लेकर अब तक महिलाओ की सामाजिक स्थिति मे जो ह्रास हुआ वह थोडे बहुत सामयिक परिवर्तनो के साथ यथावत बना रहा। पिछले कुछ वर्षो मे महिलाओ के अन्दर आयी चेतना ने इसे बदलने का पुरजोर प्रयास किया है जिसमे उन्हे आशिक सफलता अवश्य मिली है जो उनके प्रयास को आगे बढाने मे सहायक है।

स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात बीते 50 वर्षो मे सम्पूर्ण देश मे महिलाओ की स्थितियो मे जो सुधार हुआ है उत्तर--प्रदेश उससे अछूता नही रहा है। फिर भी यहॉ की स्थिति कुछ नगरीय क्षेत्रो को छोड दे तो बहुत अच्छी नही है। बुन्देलखण्ड तथा पूर्वी उत्तर--प्रदेश प्रदेश के ही नही देश के सबसे पिछडे क्षेत्रो में से एक हैं। अन्य क्षेत्र भी महिलाओ के सदर्भ मे बहुत प्रगतिशील नही है।

इसलिए इस शोधकार्य मे सम्पूर्ण उत्तर–प्रदेश मे महिलाओ की आर्थिक,सामाजिक तथा राजनीतिक स्थितियो तथा महिलाओ मे इन बिन्दुओ के प्रति समझ को जानने का प्रयास किया गया है।

यद्यपि यह एक बहुत बडा कार्य था और मेरे लिए सर्वथा असम्भव किन्तु इस कार्य के समापन पर मै अपने शोध–निर्देशक प्रोफेसर चन्द्र प्रकाश झा की अत्यत आभारी हूँ जिनके निर्देशन मे यह कार्य सम्पन्न हुआ। मै आभारी हूँ अपनी विभागाध्यक्ष तथा विभाग के उन सदस्यो की जिन्होने मुझे उत्साहित किया विशेषकर श्री पन्नालाल विश्वकर्मा जी की जिन्होने मुझे हमेशा ही प्रोत्साहित किया।

शोधकार्य चूँकि अत्यत जटिल एव श्रम–साध्य कार्य होता है और इसे अकेले कर पाना असम्भव होता है। एक शोध–प्रबन्ध के पीछे प्रत्यक्ष तत्वो के साथ अनेक अप्रत्यक्ष सहयोगी भी होते है। इसलिए अपने इस कार्य के सफलता पूर्वक समापन पर मै प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से अनेक लोगो की आभारी हूँ।

शोध जैसे कार्य मे पुस्तकालयो की अहम भूमिका होती है। मै इस सम्बन्ध गे अनेक पुस्तकालयो, सस्थानो तथा मत्रालयो की अत्यत आभारी हूँ। इनमे प्रमुख रूप से गोविन्द वल्लभ पत सामाजिक शोध सस्थान, झूँसी, इलाहाबाद, केन्द्रीय राज्य पुस्तकालय, इलाहाबाद, गिरी सस्थान, लखनऊ, समर्थन, भोपाल, परिवार कल्याण मंत्रालय, गृह मत्रालय तथा मानव ससाधन मत्रालयो की मै अत्यंत आभारी हूँ।

अत मे, जैसा कि मैने पहले कहा यह कार्य मेरे लिए अकेले कर पाना सम्भव नही था, इसलिए मै उन सभी दोस्तों, मित्रो तथा शुभचिंतको की ह्रदय से आभारी हूँ जिन्होने मुझे सहयोग दिया।

अलका सिंह
अलका सिह

दिनाक 22-12-98

उत्तर प्रदेश – एक परिचय

उत्तर प्रदेश अपने 294413 वर्ग किमी0 के क्षे0 के साथ 13 मण्डलो मे विभाजित हैं जिसमे 68 जिले है यह भौगोलिक रूप से उत्तर भारत मे स्थित है जिसकी सीमा द0 मे मध्य प्रदेश पूर्व मे बिहार, प0 मे पजाब, हरियाणा तथा राजस्थान से लगती है साथ ही इस राज्य के अर्न्तराष्ट्रीय सीमा उ0 मे नेपाल से भी लगती है। सम्पूर्ण प्रदेश का लगभग 17 35 प्रतिशत हिमालय के बर्फीले पहाड है। प्रदेश का यह क्षेत्र अत्यन्त ठडा तथा शरद ऋतु मे बर्फीली वर्षा का क्षेत्र है तथा वार्षिक वर्षा लगभग 200 सेमी0 होती है। यह राज्य के समस्त नदियो का उद्‌गम स्थल है। यहॉ से निकलने वाली प्रमुख नदियॉ है, गगा, यमुना तथा रामगगा। राज्य को पॉच भौगोलिक क्षेत्रो मे सास्कृतिक – आर्थिक तथा Ecologically विभाजित किया जा सकता है ये क्षेत्र है–

1 उत्तरा खण्ड पर्वत श्रेणी – शिवालिक तथा निम्न हिमालय पर्वत श्रेणी
2 बुन्देल खण्ड – विध्याचल पर्वत श्रेणी से बना क्षेत्र
3 पश्चिमी श्रेत्र – यमुना बेसिन से निर्मित क्षेत्र
4 मध्य उत्तर प्रदेश – गगा बेसिन से निर्मित क्षेत्र
5 पूर्वी क्षेत्र – बडे पैमाने पर गगा बेसिन से निर्मित क्षेत्र

प्रदेश के ये उप क्षेत्रा अपनी सामाजिक, सास्कृतिक तथा आर्थिक स्थितियो मे एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है और इन दृष्टियो से इन सभी क्षेत्रो के विकास का परिदृश्य अलग–अलग है। यद्यपि मूल रूप से अन्तर बहुत बडा नही है फिर भी जो दृष्टिगत है उसमे अन्तर निश्चित रूप से दिखाई देता है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश आर्थिक रूप से सम्पन्न है जहॉ सिचाई की पूर्ण और पर्याप्त सुविधा है।

मध्य उत्तर प्रदेश मे औद्योगिक विकास नजर आता है किन्तु कृषि का विकास नही हुआ है। पूर्वी उ0प्र0 तथा बुन्देलखण्ड प्रदेश के सबसे विपन्न तथा अविकसित क्षेत्रा है। इसलिए यहॉं किसी तरह का विकास नही दिखाई देता।

1.उत्तराखण्ड क्षेत्र –

प्रदेश का यह क्षेत्रा भौगोलिक रूप से पर्वतीय और जगलो से ढका हुआ है। यहॉ का आर्थिक और सामाजिक सघटन बहुत ही जटिल तथा कमजोर है। यहॉ की आर्थिक व्यवस्था को पोस्टल इकोनामी के नाम से जाना जाता है।

क्योकि यहॉ के पुरूष पहाडो से मैदानी क्षेत्रो मे रोजगार की तलाश मे पलायन करते है। महिलाए यहॉ के घरेलू तथा सार्वजनिक दोनो ही जीवन की रीढ हैं खेती से लेकर घरेलू कार्य तक प्रति महिला का क्षेत्र है। इसलिए यहॉ की मूल अर्थव्यवस्था महिलाओ के श्रम पर आधारित है। यही कारण है कि इस क्षेत्र मे चलने वाले तीन प्रमुख आदोलन महिलाओ द्वारा ही सचालित किये गये। पहला 1962–63 मे नशाबन्दी, दूसरा 1974–75 मे चिपको तथा तीसरा 1995–96 से उत्तराखण्ड आन्दोलन, इन तीनों मे ही महिलाओ की मुख्य भूमिका थी। उत्तर प्रदेश के इसी क्षेत्र मे साक्षरता दर सबसे अधिक है।

2 बुन्देलखण्ड क्षेत्र –

इस उपक्षेत्रा का अधिकाश भाग असिचित तथा ऊसर है। सिचित क्षेत्र अत्यत कम तथा वर्षा बहुत कम होती है। इन्ही कारणो से इस सम्पूर्ण क्षेत्र की अधिसख्य आबादी गरीबी रेखा से नीचे जाती है। कुछ जिलो, जैसे बॉदा आदि मे जनजातिय जनजीवन जगलो पर आश्रित है। इस पूरे परिक्षेत्र मे मजदूरो को दी जाने वाली मजदूरी राज्य के अन्य क्षेत्रो के अलावा बहुत कम है। इस सम्पूर्ण क्षेत्र मे मध्यकालीन सामतवादी प्रवृत्तियॉ थोडा बहुत अन्तर के साथ यथावत विद्यमान है जो इस क्षेत्र के सामाजिक विकास मे बाधक है। सामान्यत यहॉ महिलाओ की स्थिति पर भी मध्य कालीन प्रभाव हैं अधिकाश महिलाये सामान्यत भारतीय घरेलू महिलाये है।

3 पश्चिमी क्षेत्र –

पश्चिमी उ0प्र0 का कृषीय विकास की दृष्टि से उ0प्र0 ही नही भारत के सबसे सम्पन्न क्षेत्रो मे है यह क्षेत्र सिचाई के साधनो से पूर्ण रूपेण सम्पन्न हैं नहरो के जाल तथा टयूबेलो ने इस क्षेत्र मे हरित क्राति को सफल बनाया जो इस क्षेत्र के विकास के मूल मे है। आर्थिक रूप से सम्पन्न यह क्षेत्र महिलाओ के विकास की दृष्टि से अत्यत पिछडा हुआ है। समाज मे उनकी स्थिति द्वितीय श्रेणी के नागरिक की है। शिक्षा का स्तर बहुत अच्छा नही है। इसलिए इस क्षेत्र मे महिलाओ के विकास की दृष्टि से अत्यत सघन चेतना और कार्य की आवश्यक्ता है।

4 मध्य क्षेत्र –

परम्परागत रूप से मध्य क्षेत्र तथा पूर्वी क्षेत्र की सस्कृति मे कोई बुनियादी अन्तर नही है। यहॉ भूमि का बटवारा जातीय आधार पर ही है और निम्नजातीय लोगो के पास सिचित भूमि नही है। इस परिक्षेत्र मे महिलाओ की गृहउद्योग सम्बन्धी काम की परम्परा है जैसे कसीदाकारी तथा चिकेन की कढाई जिसने अब उद्योग का रूप ले लिया है।

5. पूर्वी क्षेत्र –

उ0प्र0 का पूर्वी उपक्षेत्र भौगोलिक रूप से सबसे बडा तथा पूरी तरह से सामतवादी परम्पराओ का गढ है इस क्षेत्र मे जनसख्या का भार सबसे अधिक है।

अध्याय : 1

इतिहास मे नारी तथा उसके जीवन स्तर का विशद विवेचन का विषय है। यह इसलिए कि इतिहास और नारी का सबध एक गुत्थी की तरह है जिसे समझना अपने आप मे एक जटिल प्रकिया है। इतिहास के अध्ययन मे नारी की भूमिका को सामने लाने का प्रयास मुश्किलो से भरा है। हमारे पास 3000 वर्षों के लिखित इतिहास तथा प्रागैतिहारिक अध्ययन के सबध मे किये गये शोधो मे मानव सिर्फ पुरुष है,[1] के पूर्वाग्रह के कारण स्त्री—पुरुष सहसबधो, समाज मे स्त्री की भूमिका, मानव सभ्यता के विकास मे उसकी उपस्थिति की निरतर उपेक्षा की गयी। फलस्वरुप इतिहास और समाज मे नारी की स्थिति समझने तथा उससे सबधित अध्ययन मे अनेक कठिनाइयॉ आती है। यही कारण है कि सम्पूर्ण विश्व मे नारी सम्बन्धी क्रमबद्ध ऐतिहासिक सामग्री सामान्य रुप से कम उपलब्ध है। मानव के अतीत का सच्चा अध्येता बनने के लिए मुख्यत· प्रागइतिहास से प्राप्त जानकारी का सहारा लेना पडता है।[2] इसके द्वारा हम उन सूक्ष्म तरीको का मूल्याकन एव प्रदर्शन कर सकते है जिनके सहारे भौतिक और सामाजिक वातावरण मानव जीवन को प्रभावित करते रहे है।

प्रागैतिहासिक अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्त्रियॉ सदा पितृसत्ता के जटिल ढाचे मे नही जी रही थी। मातृ सत्ता के काल मे महिलाओ की स्थिति श्रेष्ठ थी।[3]

स्त्रियो पर नियत्रण विशेष परिस्थितियो तथा विशेष प्रक्रिया के कारण हुआ होगा, क्योकि सृष्टि के प्रारम्भ मे एक समय ऐसा अवश्य रहा होगा जब स्त्री और पुरूष जीवन की लगभग प्रत्येक परिस्थिति मे समान रहे होगे। यह वह समय रहा होगा जब सब कुछ प्राकृतिक रहा होगा। [4] प्रागैतिहासिक पुरातत्व के अध्येताओ का मानना है कि मनुष्य के सस्कृति निर्माता पूर्वज लगभग 50 लाख वर्ष पूर्व हुए।[5]

---

1 फ्रायड सिगमंड —

फ्रायड की दृष्टि मे सामान्य मनुष्य पुरूष था। जबकि स्त्री विकृत मनुष्य। फ्रायड की यह सोंच शिक्षा के माध्यम से इस युग मे सामाजिक कार्यकर्ताओ और आम जनता में लोकप्रिय हो गयी जिसने मध्य कालीन दृष्टिकोण को पुष्ट किया।

2 झा एव श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, पृष्ट — 36 1984।

3 चक्रवर्ती उमा, कन्सेप्चुलाइजिग ब्राहमनिकल पेटीयार्की इन अर्ली इण्डिया जेंडर, कास्ट क्लास एण्ड स्टेट इकोनामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली 3 अप्रैल 1993।

4 गेल, इसे पुरा प्रस्तर युग सा उसके पहले की अवस्था मानती है, प्रागैतिहासिक पुरातत्व के अध्येताओं की अवधारणा भी इससे मेल खाती है। एगल्स भी इससे सहमत है। आमवेट गेल, पेटीसार्की एण्ड मेट्रीर्याकी, फेमिनिस्ट कान्सेप्टस सिरीज, एस एन डी टी बम्बई।

5 झा एव श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, पृष्ट — 36 1984।

अपने विकास क्रम मे मानव अनेक सकटो से उबरकर जिया। इस सकट काल और सस्कृति निर्माण दोनो मे ही स्त्री मानव विकास क्रम का हिस्सा अवश्य रही होगी। नैसर्गिक नियमो के कारण स्त्री–पुरूष न केवल समीप आये होगे बल्कि उन्होने विकास क्रम मे एक दूसरे की आवश्यकता को समझा होगा। यह वह काल था जब मानव का सवेदना का स्तर पर विकास होने लगा। यह विकास उसे अन्य जंगली जीवो से अलग रहने को विवश करने लगा।[1] स्वच्छन्द प्राकृतिक तौर तरीको को छोडकर वह अपनी बुद्धि के प्रयोग से प्रकृति के रहस्य खोलने लगा।

मानव विकास विभिन्न कारको के कारण कई स्तरो पर हो रहा था। इसमे सबसे महत्वपूर्ण कारक जलवायु परिवर्तन था।[2] यह जलवायु परिवर्तन विशेष परिस्थिति के रूप मे सामने आया और मनुष्य समूह मे रहने की प्रक्रिया से न केवल जुडने लगा बल्कि समूह गत जीवन उसे सुरक्षा प्रदान करने लगा। यह काल पाशविकता का काल था इस काल मे मनुष्य लगभग जानवरो की तरह रहता भोजन इकट्ठा करता और शिकार मारता था।[3] इस काल तक महिला और पुरुष के सह सम्बन्ध बराबरी पर आधारित थे। बहुत समय तक समूह मे रहने के साथ उपजी सहयोग की भावना ने मानवीय सवेदना को जन्म दिया जिसके कारण मानव समूह विशेष के लिए सस्कृति का निर्माण करने लगा।[4] समूह में रहने की इस प्रक्रिया ने ही भोजन सम्बन्धी आवश्यक्ताओ के लिए सघर्षो को जन्म दिया और इन सघर्षो ने मानव जीवन के महत्व ,जिजीविषा महत्वाकाक्षा तथा पहचान बनाने की इच्छा को जन्म दिया। इन सभी कारणों से पुरुष स्वाभाविक रूप से सक्रिय होता गया। पुरुषों की इस सक्रियता ने ही उत्तरोत्तर नियत्रण की भावना को जन्म दिया। यह नियत्रण ही उत्तरोत्तर गूढ और जटिल होता गया।

---

1 सोहन सस्कृति जो उत्तर पश्चिम प्रात सिधु की सहायक नदियों के किनारे पायी गयी, मे इस विकास के लक्षण स्पष्ट रूप के दिखते हैं। इस सस्कृति से प्राप्त हथियार इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि मानव बुद्धि के प्रयाग की अवस्था में पहुच चुका था।

2– भू वैज्ञानिको के अनुसार पृथ्वी लगभग 48 अरब वर्ष पुरानी है और इस पर जीवन लगभग 35 वर्ष अरब वर्ष पूर्व प्रारम्भ हुआ। मानव के पूर्वज परम्परा को अधिक से अधिक मध्य नूतन युग तक ही खीचा जा सकता यह शिवालिक शिक्षणों से प्राप्त रामा पिथोरस के आधर पर इस विषय पर शोध अध्येताओ का मानना है कि मानव विकास के साथ जलवायु परिवर्तन में जगल छोटे हो गये।

3– एगल्स – ओरिजन आफ द फैमिली, प्राइवेट प्रापर्टी एण्ड द स्टेट पृष्ठ – 1884

4– भारत मे पायी जाने वाली अनेक पुरापाषाण कालीन साक्ष्य इस बात का स्पष्ट प्रमाण है इस सदर्भ में नरासिहपुर (मध्य प्रदेश) आध्र तमिलनाडु, आदि मे पाये गये साक्ष्य।

भारत की मध्य पाषाण कालीन सस्कृति के गुफा चित्रो, शैलाश्रयो के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि महिलाये इस युग मे भोजन एकत्रण के साथ शिकार मे भी भाग लेती थी। इस समाज मे नारी की प्रजनन भूमिका के प्रति आदर भाव था इसलिए महिला की यौनिकता को कोई खतरा नही था।[1]

नव पाषाण स्तर की प्रमुख उपलब्धि थी खाद्य–उत्पादन का अविष्कार, पशुओ के उपयोग की जानकारी और स्थिर ग्राम्य जीवन का विकास। इसका मानव इतिहास मे अद्भुत महत्व है क्योकि इस नयी कृषि जीवन पद्धति का अत्यन्त महत्वपूर्ण परिणाम था जनसख्या वृद्धि। इसलिए इसे नवपाषाण क्राति की सज्ञा दी जाती है। इसलिए यह समझना चाहिए कि नवपाषाण जीवन पद्धति का विकास एक धीमी और क्रमिक प्रक्रिया है। यह कार्य एकाएक सम्पन्न नही हो सकता। इस सस्कृति के प्रसार मे विकासवादी और विसरणवादी दोनो ही पद्धतिया काम करती है इस क्रातिकारी युग मे मनुष्य ने पशुपालन और कृषि का कार्य प्रारम्भ किया फलस्वरूप उत्पादन की इस नवीन प्रक्रिया मे महिलाओ की भूमिका का भी निर्धारण हुआ होगा। वस्तुत ग्राम्य जीवन के स्थायित्व ने मानव को व्यवस्था और नियम बनाने को प्रेरित किया और इस व्यावस्था निर्माण ने महिलाओ को अनेक प्रकार की सुविधाये प्रदान की। उस नवीन जीवन पद्धति के लिए सहयोग और सहसम्बन्ध की आवश्यक्ता थी। इसीलिए स्त्री पुरूष के मध्य एक सहज सहयोग के मनोविज्ञान का उदय हुआ क्योकि अब आपसी सहयोग से उत्पादित भोजन के कारण उन्हे जगलो मे भटकने अनिश्चित जीवन जैसी प्रक्रियाओ से छुटकारा मिल गया। फलस्वरूप अब उनके पास अन्य विकास के पर्याप्त अवसर थे। उत्पादन की इस नवीन व्यवस्था ने कई तरीको से पुरूष के वर्चस्व के मनोविज्ञान को बलवान किया।

1– चक्रवर्ती उमा – कन्सेल्चुलाइजिग ब्राहमनिकल पेट्रियार्की इन अर्थी इण्डिया . जेन्डर, कास्ट, क्लास एण्ड स्टेट , इकानामिक एण्ड पालिटिकल वीकली, 3 अप्रैल 1993,

जनसख्या की वृद्दि ने मानव को अन्य जगली जीवो की तुलना मे अधिक बलवान बना दिया। इसलिए मानव समूहो ने प्रजनन काल मे स्त्रियो की विशेष सुरक्षा की व्यवस्था की। धीरे–2 स्त्रिया इस सुरक्षा की आदी हो गयी और पुरूषो मे स्त्रियो पर नियत्रण की भावना बढने लगी।[1] यह नियत्रण स्त्री की सुरक्षा की दृष्टि से था। अत स्त्रियो की तरफ से इसका प्रतिरोध नही हुआ। फलस्वरूप इस सुरक्षा रूपी नियत्रण ने अपने को अत्यधिक प्रभावशाली बना लिया। यह वह समय था जब उत्पादन मे विस्तार हुआ, काम बढा, नयी श्रम शक्ति की आवश्यक्ता बढी, सामाजिक प्रक्रिया जटिल होती गयी। समय के साथ लिंग आधारित काम का बटवारा हुआ।[2] लिग आधारित श्रम विभाजन ने सम्पूर्ण विश्व को लगभग बाट सा दिया। बाहरी दुनिया से अब महिलाओ का सम्बन्ध न के बराबर रह गया। इस नवीन सामाजिक परिस्थिति ने महिलाओ का सम्बन्धा न के बराबर रह गया। इस नवीन सामाजिक परिस्थिति ने महिलाओ की सामाजिक स्थिति मे परिवर्तन ला दिया। एक ओर तो पूजीवादी श्रम प्रक्रिया प्रारम्भ हुई , दूसरी ओर पितृसत्तात्मक लिग आधारित पदानुक्रम जिसमे स्त्री घरेलू श्रमिक बनकर रह गयी। यानि महिलाये प्रजनन और अपने रख रखाव के लिए लघु उत्पादन मे फसकर घरेलू बन गयी।[3] मारिया मीस कहती हैं " लिगो के बीच श्रम का असमान बंटवारो हिसा की मदद से प्रारम्भ हुआ। फिर परिवार और सरकार जैसी सस्थाओ ने एक मजबूत विचार धारा की मदद से उसे बनाये रखा। नव पाषाण काल से लेकर सिधु सभ्यता तक का काल वैचारिक सक्रमण का काल था। जिसमे मातृप्रभावात्मक व्यवस्था दिखती तो थी किन्तु पितृ सत्तात्मक व्यवस्था अपरोक्ष रूप से प्रभावी होती जा रही थी। नारीवादियो का यह मानना है कि चरवाहा युग मे पहली बार पितृसत्तामक सम्बन्ध बने।[5]

1, नारी वादी शुलामिथ फायर स्टोन का मानना है " महिलायें प्रजनन के कारण दमित है।"
मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है ? पृष्ठ 28 सिस्टम विजन नयी दिल्ली 1994

2, लर्नर गर्डा, द क्रियेशन ऑफ पेट्रियार्की आक्सफोर्ड एण्ड न्यूयार्क (आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1986) पृष्ठ –217

3, मारिया मीस का शोध पत्र, विमन द लास्ट कालोनी (काली फार विमन 1988 दिल्ली)

4, मारिया मीस, विमन द लास्ट कालोनी (शोध पत्र) काली फार विमन 1988 दिल्ली

5, मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है ? पृष्ठ 23 सिस्टम विजन नयी दिल्ली 1994

प्रजनन चूकि महिलाओ से जुडा था इसलिए स्त्री की प्रजनन शक्ति के प्रति आदर भाव बना रहा। स्त्रियो के प्रति दक्षिण एशिया के आदिवासियो मे यह सम्मान आज भी है। स्त्री तथा पुरूष के बीच यहा अधिक अन्तर नही है क्योकि दोनो के सहयोग के बिना जी पाना यहा सम्भव नही है।[1]

सिन्धु कालीन समाज में नारी (2300 ई.पू. से 1750 ई. पू.) :–

मानव विकास क्रम मे सिन्धु सभ्यता एक महत्वपूर्ण पडाव है। सिधु एव उसकी सहायक नदियो के उपजाऊ मैदान की इस कास्य कालीन सभ्यता का उदय हुआ था।[2] सिधु सभ्यता के कुल स्थलो की गिनती 350 के लगभग है।[3] क्षेत्र की दृष्टि से यह सुमेरियाई सभ्यता से कही विशाल थी।

सम्पूर्ण सिन्धु कालीन सभ्यता का अध्ययन लिखित साक्ष्यो के अभाव मे उपलब्ध पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर ही किया गया है। इसलिए इस समाज मे महिलाओ की स्थिति के विषय में , अनुमान के आधार पर सह सबध जोडने का प्रयास किया गया है। यद्यपि हमारे पास इस सस्कृति से सबधित लिखित प्रमाण, लिपि अपठनीय होने के कारण नही है किन्तु हम पुरातात्विक साक्ष्यो को नकार नही सकते।

इस सभ्यता के आधार क्षेत्र सिंध तथा पंजाब रहे हैं जहॉ के अनेक पुरास्थलो से नारी मृण्यमूर्तियॉ तथा मुहरे प्राप्त हुई है। मोहन जोदडो से प्राप्त नर्तकी की मूर्ति से लेकर अन्य सभी मृण्यमूर्तियॉ अपने नैसर्गिक नारी सुलभ आकर्षणो के साथ प्राप्त हुई है।

1, समाजवादी नारीवादियो विरोनिका विची की आन पेट्रियार्की में उद्वृत।

2 पाण्डेय जगनारायण, सिन्धु घाटी की सभ्यता पृष्ठ -५

2 झा एव श्रीमाली,प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ -

ये इतनी अधिक सख्या मे है कि इतिहासकारों को इस सभ्यता और नारी के सदभो को गम्भीरता पूर्वक विचार का विषय बनाना पडा। साथ ही मुहरो पर उकेरे गये चित्र तथा उनकी स्थितियो की सामान्यतया अनदेखी नही की जा सकती । विद्वानो ने इन मुहरो पर उकेरे गये चित्रों की विवेचना कर इसे मातृशक्ति की उपासना से जोडा है। मातृशक्ति की उपासना सम्बधित कुछ प्रमुख साक्ष्यो मे हडप्पा से प्राप्त एक आयताकार मुहर है जो लेखयुक्त होते हुए अपठनीय है। "इसमें एक तरफ सिर के बल खडी एक स्त्री का चित्र है जिसकी योनी से एक पौधा प्रस्फुटित है। मुहर के दूसरी तरफ एक पुरुष शस्त्र लिये खडा है तथा एक हाथ ऊपर उठाये एक स्त्री खडी है।"[1]

इस मुहर पर अकित चित्र के आधार पर हम सिधु कालीन समाज को मातृ प्रभावात्मक समाज की सज्ञा दे सकते है। "ऐसे समाजो मे नारीत्व के गुणो को सभी तरह के उत्पादन के स्रोतो के रुप मे देखा गया, उन्हे ही सारे ब्रह्माण्ड के मुख्य सक्रिय सिद्धान्त के रुप मे स्वीकारा गया तथा सभी महिलाओ को मॉ के रुप मे परिभाषित किया गया।"[2]

प्रत्येक ऐतिहासिक युग मे पुरुषत्व एव नारीत्व को अलग–अलग ढग से परिभाषित किया गया है।[3] यह परिभाषा निर्भर करती है उस युग के उत्पादन के विशिष्ट ढग पर।

---

1 पाण्डेय जगनारायण, सिन्धु घाटी की सभ्यता।

2 मारिया मीस का शोध–पत्र, विमन द लास्ट कालोनी काली फार विमन 1988 नई दिल्ली।

3 भसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? पृष्ठ 35, सिस्टम विजन नयी दिल्ली 1984।

नगरीकरण सैधव कालीन सभ्यता की प्रमुख विशेषता थी। यह विकसित एव जटिल आर्थिक सगठन का परिचायक है।[1] कृषि, पशुपालन के साथ शिल्प और व्यापार सिन्धु सभ्यता के प्रमुख आधार थे। जिस समाज मे व्यापार तथा सुगठित राजतत्र के लक्षण परिलक्षित हो वहॉ मातृ–सत्ता का होना एक विरोधाभास से अधिक कुछ नही। इसलिए तमाम साक्ष्यो के आधार पर यह माना जा सकता है कि सैधव कालीन सभ्यता के धार्मिक एव पारिवारिक पक्ष पर मातृत्व की प्रधानता थी, किन्तु सैधव सभ्यता के सामाजिक तथा राजनीतिक पक्ष मे यह प्रधानता समान रुप से थी यह प्रश्न अनुत्तरित है।

व्यापार एक उन्नत सामाजिक सगठन का परिचायक है, किन्तु साथ ही यह समाज मे श्रम विभाजन, दास प्रथा निचले स्तर पर नारी श्रम के शोषण तथा उच्च्व स्तर पर नारी अकर्मन्यता को इगित करता है।[2] फेयर सर्विस ने लिखा है कि नगरीय समाज मे यथा स्थिति वनाये रखने के लिए सतुलन आवश्यक है किन्तु सभ्यता की जटिलता तथा वाह्‌य परिस्थितियो के कारण यह संतुलन बिगड जाता है।[3] इस संतुलन को ही मार्क्स ने उत्पादन के साधनो से जोडकर देखा है। मार्क्सवादी दर्शन ने नारी की स्थिति को उत्पादन सम्बधो मे परिवर्तन की प्रक्रिया से जोडकर देखा है। अपने विश्लेषणो मे उन्होने नारी जीवन तथा आर्थिक क्षेत्र के अन्तरसम्बन्धों की विशद व्याख्या की है।

इन समस्त अध्ययनों के आधार पर हम सिंधु कालीन समाज के मातृसत्तात्मक प्रधानता को सिर्फ धार्मिक तथा पारिवारिक क्षेत्र तक ही सीमित मान सकते है। जहॉ तक आर्थिक एव राजनीतिक क्षेत्र का प्रश्न है उसमे महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करना अत्यत कठिन है।

---

1 पाण्डेय जगनारायण, सिन्धु घाटी की सभ्यता पृष्ठ 46, प्रमानिक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
2 पाण्डेय जगनारायण, सिन्धु घाटी की सभ्यता पृष्ठ 40।
3 वही 42।

श्रम क्षेत्र मे उनका योगदान अवश्य रहा होगा क्योकि महिलाये परिवार की प्रमुख सदस्य थी जो पारिवारिक उत्पादन और उद्योग मे अपने श्रम के बल पर प्रमुख भूमिका निभाती है और रही होगी।[1] यह कहना अत्यत कठिन है कि उत्पादन मे उनकी यह सक्रियता अत तक बनी रहती थी। वस्तुत. यह कहा जा सकता है कि सिन्धु काल लिग आधारित श्रम के बटवारे की सहमति का काल था। स्त्री –पुरुष दोनो ही एक दूसरे के कार्य के महत्व को समझकर उसे उचित सम्मान देते थे। यही कारण था कि समाज पुरुष–प्रधान होते हुए भी मातृवशात्मक था।

वस्तुत यह कहा जा सकता है कि सिन्धु सभ्यता मे महिलाओ की दशा सामान्य थी और कथित रुप से पूरी सभ्यता मातृ सत्तात्मक थी। महिलाओ की स्थिति सम्मान जनक होते हुए भी यह समाज पुरुष–प्रधान ही था। पुरुष की प्रधानता होने पर भी नारी की यौनिकता को कोई खतरा नही समझा जाता था तथा मातृत्व और प्रजनन मे छिपी नारी शक्ति की पूजा होती थी।[2] आर्यो द्वारा भारत के बडे भूभाग पर कब्जा कर लेने और यहॉ के मूल निवासियो को जिन्हे वो जातीय तौर पर अपने से हीन समझने थे, को अपने अधीन कर लेने के बाद वर्गों मे बटा हुआ समाज विकसित हुआ और धीरे–2 नारी शक्ति की पूजा की जगह पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने ले ली।[3] अपने अधीन की हुई जाति के लोगो में आर्यों ने अधिकांश पुरुषों को मार डाला तथा स्त्रियो को दास बना लिया। भारत की धरती पर दास बनाया जाने वाला पहला समूह महिलाओ का था।[4] महिलाओ की दासता के साथ ही दास प्रथा को सस्थागत रुप मिला।[5] बुनियादी स्तर पर पितृ सत्ता की स्थापना के लिए किसी एक कारण या इतिहास मे किसी एक क्षण को जिम्मेदार नही ठहराया जा सकता।

---

1 कलपगम यू, लेबर एण्ड जेन्डर, पृष्ठ 234।

2 चक्रवर्ती उमा, "कन्सेप्चुलाइजिग ब्राहमनिकल पेट्रियार्की इन अर्ली इण्डिया जेन्डर कास्ट, क्लास एण्ड स्टेट" इकोनामिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली 3 अप्रैल 1993।

3 वही ।

4 वही तथा शर्मा आर, एस मिटीरियल कल्चर एण्ड सोशल फारमेशन इन ऐन्शेंट इडिया, पृष्ठ 38

5 लर्नर गर्डा, द क्रियेशन आफ पेट्रीयार्की, आक्सफर्ड एड न्यूयार्क

आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 1986 पृष्ठ 217

हम पुरुष प्रभुत्व को जिस रुप मे आज देखते है उसके पीछे लगभग 2500 सालो 3100 ई0 पू0 से लेकर 600 ई0 पू0 तक की सतत प्रक्रिया है, कई घटक और ताकते इसके लिए उत्तरदायी है।[1] गेल आमवेट का यह निष्कर्ष कि नारी विकास के तीन चरण है बहुत तर्क सगत है। वे कहती है –

1 सबसे प्राचीन मानव समाज मातृकेन्द्रित समूह थे, या जेन्डर विहीन खानाबदोश समाज थे।

2 शासन तत्र के गठन के पूर्व के कौटुम्बिक समाज। जिसमे महिलाये रिश्ते–नातो के माध्यम से सशक्त थी और स्वतत्र सत्ता रखती थी।

3 शासन तथा वर्ग वाले समाज जिसने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक तत्रो के माध्यम से नारी अधीनता पर बल दिया।

यद्यपि आर्यो के आगमन के साथ पितृसत्तात्मक विचार धारा वाले शासनतंत्र का उदय हुआ किन्तु उसका सिधु कालीन मातृ–पूजा के साथ निरन्तर सघर्ष होता रहा। यह तनाव ऋगवेद मे प्राय देखने को मिलता है। कुछ दृष्टान्तो से वैदिक आर्यो का नारी समूह के प्रति दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है।[2]

---

1 लर्नर गर्डा,द क्रियेशन आफ पेट्रियार्की, आक्सफर्ड एव न्यूयार्क पृष्ठ 217 आक्सफर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1986

2 चक्रवर्ती उमा, 'कन्सेप्चुलाइजिग ब्राहमनिकल पेटियार्की इन अर्ली इण्डिया जेन्डर कास्ट, क्लास एण्ड स्टेट'' इकोनामिक खण्ड पॉलिटिकल वीकलीए 3 अप्रैल 1993।

ऋग्वैदिक समाज मे नारी –

नारीवादियो का मानना है कि आर्यों के भारत मे आगमन के पश्चात यहाँ के स्थिर नगरीय जीवन का विध्वस नारी स्वतत्रता के लिए घातक सिद्ध हुआ।[1] स्त्रियो को इस काल मे दास बनाया जाने लगा।[2] ऋग्वेद युद्धो के वर्णन से भरा हुआ है। इसका कारण है भारत मे आर्यों का आगमन तथा सिन्धु सभ्यता के पतन के बीच अनेक क्षेत्रीय सस्कृतियाँ बची हुयी थी जिससे लगभग 250 वर्षों तक आर्यों को अनवरत रुप से युद्धरत रहना पडा। इन युद्धो ने स्त्री–पुरुष सबन्धो की समानता को न केवल खण्डित किया बल्कि नये सामाजिक चितन को जन्म दिया। इस नवीन चितन को ही सामान्यत पितृसत्तात्मक विचारधारा की सज्ञा दी गयी। ऋग्वेदिक अध्ययन तथा समाज शास्त्रियो की विवेचना से यह निष्कर्ष निकलता है कि ऋग्वेदकालीन समाज एक सुगठित कबायली समाज था। उनके भैतिक जीवन मे पशुचारण का महत्व था। पशुचारण की प्रधानता ने पितृसत्तात्मक सामाजिक सरचना का निर्माण किया।[3] यह एक मनोवैज्ञानिक अवस्था थी। ऋग्वैदिक आर्य युद्धो के समय अपनी प्रजाति को न तो हारता हुआ देख सकते थे और न ही अपमानित होता हुआ। यही कारण था कि उन्होने अपने कबीलो की सुरक्षा के लिए नियमो का विकास किया साथ ही स्त्रियो के प्रति विशेष सतर्कता रखी।

निर्वाह अर्थव्यवस्था की पृष्ठभूमि तथा युद्धों के सर्वव्यापी वातावरण मे महिलाओ की स्थिति निश्वित रुप से शोचनीय रही होगी। यद्यपि जीवन स्थायी नहीं था किन्तु फिर भी उन्होने समाज निर्माण तथा जीवन दर्शन के प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया।[4] इस समाज निर्माण की प्रक्रिया ने राजनीतिक सस्थाओं के रुप मे जन, विश तथा विदथ को जन्म दिया।[5] इस सम्पूर्ण प्रक्रिया मे महिलाओ का योगदान क्या रहा इसकी जानकारी इमे नही मिलती।

---

1 चक्रवर्ती उमा, कान्सेप्चुलाइजिग ब्राह्मनिकल पेट्रियार्की इन अर्ली इण्डिया जेन्डर, कास्ट, क्लास एण्ड स्टेट E P W 3 अप्रेल 1993 ।

2 शर्मा आर, एस, मिटीरियल कल्चर एण्ड सोशल फारमेशन इन ऐन्शेंट इडिया, पृष्ठ 38, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड 1983

3 मारिया मीस का शोध–पत्र, विमन द लास्ट कालोनी काली फार विमन 1988 नई दिल्ली।

4 शर्मा आर, एस, मिटीरियल कल्चर एण्ड सोशल फारमेशन इन ऐन्शेंट इडिया, पृष्ठ 38

5 वही पृष्ठ-38

ऐसा लगता है आर्यों ने समाज निर्माण को दो भागो मे प्रमुख रुप से विभाजित किया। पहली थी समाज निर्माण के साथ राजनीतिक दर्शन और दूसरी थी समाज निर्माण के साथ जीवन दर्शन। आर्यों ने समाज निर्माण की दूसरी प्रक्रिया से ही महिलाओ के सरोकार को जोडा और उसका विकास किया। यद्यपि ऋग्वैदिक नारियो को जीवन के कई क्षेत्रो मे अपेक्षाकृत अधिक अधिकार प्राप्त थे, लेकिन नारी विकास की एकतरफा प्रक्रिया ने उन्हे सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण घटक प्रशासन से दूर रखा। दूसरी तरफ मलिाओ को वैचारिक रुप से परिवार तथा उसके शुभ के दृष्टिकोण से जोड दिया।[1]

प्राय ऋगवैदिक नारियो की स्थिति के विषय मे जो बाते कही जाती है वह बहुत सुखद प्रतीत होती है। ऋगवैदिक आर्यो ने जिस समतामूलक समाजवादी समाज की कल्पना की थी, उसमे समाज बहुत हद तक वर्गविहीन था। इस वर्गहीन कहे जाने वाले समाज ने स्त्रियो पर नियत्रण प्रारम्भ किया।[2] ऋगवेद मे स्त्रियो से सम्बन्धित विषय जैसे नारी शिक्षा, परिवार मे उसकी स्थिति, विश्पला, मुदगलानी जैसी स्त्रियो का विवरण वस्तुत एक सुखद स्थिति थी। शिक्षा जैसे क्षेत्र स्त्रियों के लिए व्यापक रूप से खुले थे। वैदिक काल मे जब वेद ही अध्ययन के प्रमुख विषय थे स्त्रियो को भी समान रूप से वेदाध्ययन का अधिकार प्राप्त था।[3] वेदो की बहुत सी ऋचाये स्त्रियो द्वारा लिखी गयी। परिवार से लेकर समाज तक में स्त्री शिक्षा तथा शिक्षित स्त्रियो दोनों का विशेष महत्व था।[4] स्त्राी पुरूष के सहसम्बन्ध को शिक्षा तथा गृहस्थ जीवन दोनों पर आश्रित बताया गया।[5] पति सेवा का जो एकतरफा और गलित रूप आज हमे समाज मे मिलता है उसके बीज हमे ऋगवेद मे देखने को मिलता है।[6] ऋगवेद में स्त्रियों की शिक्षा, सुन्दरता तथा प्रेमपूर्ण व्यवहार की चर्चा बार–2 हुई है।[7]

---

1 मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है?

2 चक्रवर्ती उमा, कन्सेपचुलाइजिग ब्रहमानिकस पेट्रियार्की उन अर्ली इण्डिया जेन्डर, कास्ट क्लास, एण्ड स्टेट इकानामिक एण्ड पालिटिकल वीकली 3 अप्रैल 1993।

3 1 यत सुपर्णा विप्रणें अजमीवा विवेवे
तत्र मे गच्छताद्धवें शल्य इद्र कुल्मलं यथों।

4 एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शी व्युच्छन्ती युवति अथर्ववेद शुक्रवासाः
विश्वस्येशना पार्थिवस्य वस्व उषों अधेह सुभ्मगे व्युच्छ।

5 शर्मा, आर एस, मिटीनीयल कल्चर एण्ड स्पेशल फार्मेशन इन एन्सेन्ट इण्डिया।

6. ऋग्वेद 8/73/3

7. ऋग्वेद 3/58/8

इन तीन बिन्दुओ मे शिक्षा ही ऐसा उपकरण। था जो आगे चलकर पुरूष प्रधान राजनीतिक तत्र के लिए खतरा उत्पन्न कर सकता था। इसलिए कालान्तर मे शिक्षा को नारी के विकास मे बाधक समझा जाने लगा। फलस्वरूप नारी जगत का विकास प्रारम्भ हो गया जो अत्यत रहस्यपूर्ण था

जैसा की नगरहीन लोगो से आशा की जा सकती थी आर्यो मे विकसित आर्थिक प्रणाली नही थी। पशुचारण की तुलना मे कृषि का स्थान नगण्य था। यही कारण था स्त्री के मातृप्रभाव को हम इस काल मे नही पाते। ऋगवेद मे जो स्त्री सम्बधी अवधारणा थी वह उत्तोरत्तर विकसित हो गयी जो अनेक अर्थो मे बाद के सदर्भो को पुष्ट करता है। ऋगवेद कहता है घर मे सधवा स्त्रियो का प्रथम स्थान है (ऋ 10/18/7) इनको सदा निरोग अज्जप घृत आदि स्निग्ध पदार्थो से विभूषित, मूल्यवान धातुओ से अलकृत तथा अश्रुविहीन होना चाहिए (ऋ 0/18/7) सुरूपिणी, हसमुख (3/58/8) शुद्ध, कर्तव्यनिष्ठ, पतिप्रिया (8/73/3) सुवस्त्रा (10/71/4) विचारशील (1/28/3) पति मात्र परायण (ऋ 10/85/47) होना चाहिये। ऋगवेद की इसी अवधारणाओ को परवर्ती साहित्य ने धर्म तथा स्त्री को जोडकर स्त्रीधर्म का निर्माण किया किन्तु शुद्ध धार्मिक प्रक्रिया से स्त्री को न केवल दूर रखा अपितु सन्यास तप, घ्यान की अवस्था के लिए उसे शत्रु घाषित कर दिया।

इस तथ्य का प्रमाण इस बात से मिलता है कि ऋगवैदिक देवकुल मे देवियो की स्थिति निम्न है।[1]

---

1 वाशम, ए एल, वाण्डर दैट वाज इण्डिया पृष्ठ-५०

यद्यपि कि ऋचाओ मे देवियो को उचित स्थान नही प्राप्त था। किन्तु आर्यो के भौतिक जीवन के धार्मिक अनुष्ठानो मे पत्नियो को पूर्ण अधिकार प्राप्त था।[1] भाई–चारा,सिद्धान्त और धर्म एक दूसरे के पूरक है।यही कारण है कि आर्यो का यज्ञ प्रधान धार्मिक पक्ष बहुत सगठित है। धीरे–धीरे धर्म ओर नारी का सम्बन्ध बहुत जटिल हो गया और स्त्रियॉ अपने परिवार के हित के लिए शुभ सोचने वाली उपकरण बन गयी। ऋगवेद का एक महत्वपूर्ण वर्णन है इन्द्र द्वारा उषा का बलात्कार , जिसका उल्लेख कई बार हुआ है।[2] बलात्कार जैसे घृणित सदर्भो के पश्चात भी इन्द्र का इस काल मे एक देवता (प्रमुख) के रूप मे बने रहना एक विचारणीय प्रश्न है। शायद यही कारण है कि उत्तर वैदिक काल मे जिन विवाह पद्धतियो का वणर्न है उसमे राक्षस और पैशाच विवाहो को अनैतिक कर्म न मानकर विवाह पद्धतियो की श्रेणी मे रखा गया । ऋगवेद मे एक पत्नी वाले पितृसत्तामक परिवार की अवधारणा के चिन्ह नही मिलते। यद्यपि इस समाज मे स्त्रिया कई क्षेत्रो मे समान अधिकार रखती थी। किन्तु व्यापक रूप से लगभग सम्पूर्ण ऋगवैदिक साहित्य मे स्त्रियो की कल्पना सुघड गृहणी के रूप में की गयी है।[3] उपनयन के पश्चात कन्याओ को अपने जीवन साथी चुनने का पूर्ण अधिकार था जो किसी भी समाज के उन्नतिशील विचारो का सूचक है।

ऋगवेद काल के अध्ययन के लिए हमारे पास पुरातात्विक साक्ष्यो का अभाव है और अगर हम मान ले कि इतिहास पुरातत्व से भिन्न मनुष्य जाति के अतीत का लिखित साधनो द्वारा एक अध्ययन है तो भारतीय इतिहास आर्यो से प्रारम्भ होता है।[4] समाज शास्त्र के अध्ययन की विधियो द्वारा हम इस समाज मे कबायली समाज के लक्षण पाते है। हो सकता है कि यह समस्त लक्षण नये परिवेश मे जीवन की मूलभूत आवश्यक्ताओ और अपने को स्थापित करने के दोहरे सघर्षो का परिणाम हो।

1 ऋग्वेद 10/18/7

2 वाशम ए एल, वाण्डर दैट वाज इण्डिया पृष्ठ - 58

3 परायती नामन्वेंति पाथ आयतीना प्रथमा शश्रुतीनाम
व्युच्छन्ती जीवमुदीयरन्त्युषा मृत क चन बोधयन्ती ऋगवेद 1/2/6

4 बाशम ए एल, पाण्डर दैट वाज इण्डिया - 61

लिपियो के विकास के अभाव मे भी ऋगवैदिक आर्यो ने जिस प्रकार के समाज की कल्पना की तथा स्त्री शिक्षा को समाज की प्राथमिक आवश्यक्ता के रूप मे विकसित किया यह एक सराहनीय प्रयास था। स्त्री को राजनैतिक सगठनो तथा प्रशासन से दूर रखने का कारण शायद युद्धो से दूर रखना रहा हो।[1]

उत्तर वैदिक काल मे होने वाले जटिल राजनीतिक विकास, अधिशेष पर आधारित अर्थतत्र के विकास ने, ऋत के ह्रास ने ऋगवैदिक आर्यो की सम्पूर्ण सकल्पना को एक दूसरी दिशा दे दी। अगर ऐसा न होता तो शायद नारियो को योगदान न तो उपेक्षित रहता और न ही बाहित और ऐसी स्थिति मे एक सतुलन स्त्री पुरूष दोनो के बीच दिखता।

उत्तर वैदिक काल (1000 से 500 ई पू)

ऋग्वेद के रचनाकाल तथा बौद्ध युग के मध्य लगभग चार पाच सौ वर्षो का अन्तर है।[2] इस अवधि मे अनेक उत्तर वैदिक ग्रथो की रचना यजुस, अथर्वन, ब्रहमण तथा उपनिषदो के रूप मे हुई [3] यह वह काल था जब सम्पूर्ण उत्तरी भारत के जीवन मे एक निश्चित दिशा मे परिवर्तन हो रहा था।[4] आर्यो के कबायली जीवन मे परिवर्तन आ रहा था। यह परिवर्तन उनके जीवन मे आने वाली स्थायित्व की झलक देता है। इस स्थायित्व से जीवन के सभी क्षत्रो मे कुछ मूलभूत परिवर्तन हुए जो थोडे बहुत अन्तर के साथ लम्बे समय तक चलते रहे। इस काल की प्रमुख विशेषता थी– कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था कबायली जीवन मे दरार का पडना और वर्णव्यवस्था का जन्म।[5] इन तीनो बिन्दुओ ने वैदिक कालीन मानव जीवन के लगभग सभी पहलुओ को प्रभावित किया।

---

1 बाशम ए एल, वाण्डर दैट वाज इण्डिया – 67
2 वाशम, ए एल, अद्भुत भारत, पृष्ठ 30
3 वही
4 एस आर शर्मा मिटीरियल कल्चर एण्ड सोशल फार्मेशन इन एशेंट इण्डिया पृष्ठ
5 दिलीप चक्रवर्ती ' बिगिनिग आफ आयरन अण्ड सोशल चेंज इन इण्डिया स्टैडीज पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट खण्ड 14 अक 4, 1973

यह विचारणीय है कि उत्तर वैदिक काल मे कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था तो बनी किन्तु महिलाओ की समानता का आधर खत्म सा हो गया। ऐसा शायद इसलिए था कि ऋगवेद काल के नारी सम्बन्धी जीवन दर्शन ने महिलाओ को सामाजिक न बनाकर घरेलू बना दिया था साथ ही वर्णव्यवस्था जैसी जटिल सामाजिक सरचना की अवधारणा का विकास हो रहा था जिसमे ब्राह्मण के रूप मे एक सशक्त वर्ग जन्म ले रहा था जो समस्त राजनीतिक तथा धार्मिक गतिविधियो का नियत्रण कर्ता था।[1] इन सभी परिवर्तनो ने स्त्री तथा पुरूष के मध्य स्पष्ट विभाजक रेखा खीचनी प्रारम्भ कर दी। पितृसत्ता की जडे गहरी होती गयी। जीवन के सभी क्षेत्र पुरूष प्रधान होते गये और महिलाये अब सिर्फ पुत्री, बहन, मॉ और पत्नी की सीमा मे आबद्ध हो गयी।

महिलाओ को पुरूषो द्वारा नियत्रित करने की झलक तथा उस प्रक्रिया से उपजे तनाव को हम ऋग्वेद मे आसानी से देख सकते है।[2] कुछ दृष्टान्तो से ऐसे सुझाव भी मिलते है कि महिलाओ को शक्तिशाली नही बनने दिया जाना चाहिए।[3] यही कुछ मूल कारण थे जिससे उत्तर बैदिक कालीन नारी की शैक्षिक दशा मे गिरावट आयी।

कृषि, व्यापार तथा शिल्पो के उदय ने अधिशेष उत्पादन को जन्म दिया। इस अधिशेष से सशक्त राजनीतिक सामाजिक तथा धार्मिक सगठनो का उदय हुआ। इन सगठनो ने न केवल नारी के विकास मे बाधा पहुचायी बल्कि स्त्री पुरूष के भेद को नैसर्गिक तथा ईश्वरीय बताकर और अधिक गहरा कर दिया। समाज मे पुरूष की प्रधानता बढती गयी फलस्वरूप स्त्री समाज का अग बनने के स्थान पर उपयोग की वस्तु बनती गयी।[4]

---

1 एस आर शर्मा , '' क्लास फार्मेशन एण्ड इटस मैटिरियल बेसिन इन द अपर गैजिटिक बेसिक ईसा पूर्व लगभग 1000–500) अगस 1917 म हिस्टारिक रिव्यू एण्ड 2 मे प्रकाशित

देखिये चन्द्रा चक्रवर्ती, कामन लाइफ इन द ऋगवेद एण्ड अथर्ववेद ऐन एकाउन्ट आफ दी फोकलोर इन दी बैदिक पीरियड 1977,

2 चक्रवर्ती उमा, कन्सेप्चूलाजिग ब्राह्मनिकल पेट्रियार्की इन आर्ली इण्डिया जेन्डर कास्ट, क्लास एण्ड स्टेट E P W 3 अप्रेल 1996

3 वही

4 भसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? पृष्ठ 9

उत्पादन सम्बन्ध, पारिवारिक रिश्ते और सम्पत्ति गत अधिकार अब कानून के माध्यम से मॉ से छीनकर पिता को दे दियो। उत्तर वैदिक काल मे लिखे जाने वाले अनेक ग्रन्थ और वेद इस बात का प्रमाण है कि अब स्त्री अपने ऋगवेद कालीन अधिकार भी खो चुकी थी। अथर्ववेद मे दहेज देने के स्पष्ट सुझाव है [1] समाज ने दहेज देने की इस प्रथा को आर्थिक सम्बन्धो से जोडकर देखा। फलस्वरूप ब्राहमण साहित्य मे पुत्री को सभी दुखो का श्रोत और पुत्र को वरदान कहा गया है। मैत्रायणी सहिता मे उसे सुरा तथा पासा के समान बताया गया है।

उत्तर वैदिक कालीन सस्कृति ऋग्वेद कालीन सस्कृति की तुलना मे भौतिकता मे अधिक विकसित थी। समाज के विकास की इस अवस्था ने व्यक्ति तथा समाज दोनो के नैतिकता सम्बन्धी अवधारणाओ मे भी परिवर्तन करना प्रारम्भ कर दिया। उत्तर वैदिक काल के 500 वर्षो का और उसके विकास का विश्लेषण करें तो वर्णव्यवस्था पर आधारित समाज तथा समाज मे विकसित होने वाली लगभग समस्त व्यवस्था पुरूष प्रधानता को क्रमश सुदृढ करती गयी। चार वर्णो मे बटे समाज मे नारी का भी स्तरीकरण हुआ।[2] यह स्तरीकरण कालान्तर मे विधि निर्माताओ के लिए नियत्रण के नवीन सूत्रीकरण का प्रतिपादन करने मे सहायक हुआ। सम्पूर्ण राजनीतिक सगठन पुरूष योग्यता और क्षमता पर आधारित होते गये।

---

1 एस आर शर्मा, मिटिरियल कल्चर एण्ड सोशल फार्मेशन इन एशेंट इण्डिया पृष्ठ 47

2 नारीवादियो, तथा अन्य विचारधाराओं की सभी महिलाओं का मानना है कि महिलाओ के प्रति भेदभाव सभ्यता के विकास के साथ ही आरम्भ हुआ। उनका मानना है कि सभ्यता और नारी दोनों का एक दूसरे में समाहित होनो ही विकास का द्योतक है। उदाहरण के रूप में भारतीय सभ्यता, मिश्री सभ्यता तथा अन्य सभी द्योतक है। उदाहरण के रूप में भारतीय सभ्यता, मिश्री सभ्यता तथा अन्य सभी प्राचीन सभ्यताए पुरूषों के लिए नारी के त्याग पर ही आधारित थी।

उत्तर वैदिक कालीन परम्परा मे जिस कुल का उल्लेख है वो ऋग्वेद मे अप्राप्य है।[1] कुल के विकास मे समाज मे परिवार के साथ अनेक मनोवैज्ञानिक अन्तर सम्बन्धो का विकास किया जिसने परम्परा के रूप मे स्थान ग्रहण कर व्यक्ति की पहचान को बौना बना दिया और महिलाओ को पहचानहीन। धर्म के विकास ने स्त्री और कुल की जटिल व्याख्या प्रस्तुत की।

उत्तर वैदिक कालीन परम्परा मे जिस कुल का उल्लेख है वह ऋग्वेद मे अप्राप्य है। कुल के विकास मे समाज मे परिवार के साथा अनेक मनोवैज्ञानिक अर्न्तसम्बन्धो का विकास किया जिसने परम्परा के रूप मे स्थान ग्रहण कर व्यक्ति की पहचान को बौना बना दिया और महिलाओ को पहचानहीन। धर्म के विकास मे स्त्री और कुल की जटिल व्याख्या प्रस्तुत की।

उत्तर वैदिक कालीन परम्परा मे ब्राम्हण का एक अनुत्पादित वर्ग था जो अधिशेष पर अपना जीवन यापन करने का आदी था। यही कारण था कि उसने अपने को विशेषाधि ाकार सम्पन्न बर्ग बनाये रखा। इसके लिए आवश्यक था कि वह अपनी धार्मिक श्रेष्ठता की छाप लोगो पर बनाये रखे। इस धार्मिक श्रेष्ठता के लिए भी आवश्यक था कि ऐसे वर्ग को चुना जाये जो अपने अवचेतन से शुभ अशुभ की स्थिति से जुडा हो। इस स्थिति से महिलाओ को ऋग्वेद काल मे ही जोड दिया गया था। फलस्वरूप धर्म की सेध जो समाज मे महिलाओ के माघ्यम से लगी वह आज तक स्थापित है। शिक्षा उस सम्पूर्ण क्रिया कलाप की शत्रु थी। इस लिए महिलाओ को शिक्षा से वचित रखा जाने लगा। ब्राम्हणो की इस समाज रचना के सबल पोषक क्षत्रिय थे।

---

1 शर्मा एस आर मिटीरियल कल्चर एण्ड सोशल फार्मेशन इन ऐशेट इण्डिया पृष्ठ-10 ।

2 श्रीमाली एव झा – प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ 16 ।

इसलिए ब्राम्हणो ने चतुराई पूर्वक साहित्यों की रचना के माध्यम से क्षत्रिय पुरूषो को महिमामन्डित करके स्त्रियो की स्थिति को अपने अनुसार नियत्रित किया। इस विचारधारा की स्थापना मे दो महाकाव्यो रामायण तथा महाभारत मे प्रमुख भूमिका निभायी।

रामायण शैली तथा विषय की दृष्टि से वस्तुत भिन्न है। इसमे महाभारत की तरह प्राचीन लक्षण नही प्राप्त होते तथापि महाभारत मे राम का उपाख्यान इस रूप मे वर्णित है, जिससे सूचित होता है कि महाभारत का अंतिम संकलनकार रामायण से परिचित था। रामायण के पात्रो की मर्यादा में सम्पूर्ण भारतीय समाज को नैतिक नियमो मे कमोबेश बाध दिया। जहाँ तक उत्तर प्रदेश का प्रश्न है यह उस मर्यादा की ही भूमि है इसलिए यहा की स्त्रियो ने सीता के चरित्र को ढोया है। यह एक अनवरत रूप से चलने वाली प्रक्रिया रही है जो आज भी थोडे बहुत अन्तर के साथ बनी हुई है। सीता का चरित्र उत्तर प्रदेश की स्त्रियो की विडम्बना है।

विशिष्ठ सृष्टि सिद्धान्त तथा उससे जुडी नारी सम्बन्धी अवधारणा सामाजिक आर्थिक सिद्धान्त पर गढी गयी नारी को समझने मे बडी सहायता करता है। भारतीय दार्शनिक व्याख्या कहती है कि " प्रलय के अवसान एवं सृष्टि के आरम्भ मे जब उसी सर्वाधार सद्रूप प्रभू की इच्छा शक्ति अभिव्यक्त होती है, तब वह प्रभु महेश्वर एव मायी और उनका शक्ति समूह प्रकृति माया आदि शब्दो में वर्णित होता है।[1] उपनिषदो ने नारी को प्रभु की शक्ति के रूप में जोडा हैं उपनिषद कहते है। कि जब पुरूषावतार (ब्रह्म) को एकाकीपन का भय सताने लगा तब उनका विराट शरीर गिर गया और दो भागो मे विभक्त हो गया ।[2]

---

1 भारतीय दर्शन में उपनिषद इसकी व्याख्या करते है।

2 स इममेवात्मान द्वेधापातयत (बृहदारण्यक उपनिषद 9/4/3)

एक भाग का नाम पति और दूसरे का पत्नी पडा [1] और ब्रहम जो सुख और आकाश दो रूपो मे थे वे भी दोनो मे विभक्त हो गये।[2] सुख विशेषाक पति (नर) आकाश विशेषाक पत्नी (नारी)। अत शक्ति शक्तिमान का युगल अनादि अनन्त है। शक्तिमान के बिना शक्ति का पृथक अस्तित्व नही रह सकता। उस शक्तिमान की वह महाशक्ति ज्ञान, बल, क्रिया आदि अनेक रूपो से उसकी सहकारिणी एव सहधर्मिणी बनी रहती है।[3] वही शक्ति परा एव अपरा भी कहलाती है[4] और अशी का अश भी कहलाती है।[5] अत नारी बिना नर शरीर अर्ध वृगल कहलाता है। इस अपूर्णता की पूर्ति नारी द्वारा ही हो सकती है।[6] इन समस्त दार्शनिक व्याख्याओ के पीछे पितृसत्ता तथा परिवार के अन्तरसम्बन्धो को जोडकर देखना होगा। परिवार की स्थापना ऋग्वैदिक काल मे भी थी किन्तु ऋग्वैदिक नारी की स्वतत्रता परिवारवाद की स्थापना मे बाधक थी। इसलिए स्त्री पुरूष सम्बन्धो की दार्शनिक व्याख्या की गयी। इस दार्शनिक व्याख्या को धर्म के साथ कुशलता से जोडा गया। धर्म से जुडते ही उपनिषदों और गीता का यह सूक्ष्म विचार स्थूल रूप मे परिणत हो गये। धर्म ने इन व्याख्याओ को महिलाओ के लिए इनको हमेशा तर्कसगत बनाये रखा। परिवर्ती स्मृति साहित्य ने इसी को आधार बनाकर महिलाओ के लिए कानूनी बेडियॉ तैयार की जो आज तक अनेक विरोधो के होने पर भी समाज मे अपनी जडे जमाये हुए है। यह नियत्राण की वैचारिक पहल थी जो समाज के स्वरूप को गढती है।

मौर्य काल मे नारी :–

मौर्य साम्राज्य की सामाजिक–आर्थिक दशा , शासन प्रबन्ध तथा धर्म और कला सम्बन्धी जानकारी के लिए हमारे पास प्रचुर सामग्री है।

---

1 क बहम ख बहम (छान्दोग्य 4/10/5)
2 छान्दोग्य उपनिषद
3 वही
4 उपरेदमितस्त्वन्या प्रकृति विद्धि में पराम।
जीवमूता महाबाही (गीता 7/8)
5 ममैकाशों जीवतो के जीवमूत सनातन (गीता 15/7)
6 कस्य रूपममूद द्वेधा यत्कायमकिचस्ज्ञते (गीता 3/12/52)

कौटिल्य का अर्थशास्त्र, मेगस्थनीज की इण्डिका तथा अशोक के अभिलेखो का ठीक से अर्थ लगाया जाय तो पता चलेगा कि वो तत्कालीन समाज को जानने के लिए एक दूसरे के पूरक है।

पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रो की भाति कौटिल्य ने भी वर्णव्यवस्था को सामाजिक सगठन का आधार माना।[1] राज्य की अर्थव्यवस्था कृषि, पशुपालन और वाणिज्य व्यापार पर आधारित थी।[2] सुदृढ होती व्यवस्था ने, फैलते हुए वाणिज्य और व्यापार ने, सगठित राज्य व्यवस्था ने महिलाओ को अपनी सुविधानुसार नियमो मे बाधना प्रारम्भ कर दिया। मौर्यकाल मे स्त्रियो की स्थिति अतयत सुरक्षित दीखती है।[3] इस सुरक्षा का अर्थ है बधनो का बढना।[4] इस काल मे स्त्रियो को नियोग तथा पुर्नविवाह की अनुमति थी।[5] समाज का विभाजन स्त्रियो के स्तर पर भी स्पष्ट रुप से दिखता है। सभ्रात घरों की स्त्रिया प्राय घर से बाहर नही निकलती थी। इन्हें अर्थशास्त्र मे अनिष्कासिनी कहा गया है।

अर्थशास्त्र जो धार्मिक नीति ग्रथो से अधिक उदार है, दुराचारिणी स्त्रियो के लिए अत्यधिक कठोर नियम निर्धारित करता है। एक स्त्री जो अपने पति की इच्छा की इच्छा के प्रतिकूल क्रीडा मे भाग लेती है मदिरा पान करती है, उसे 3पण का अर्थदण्ड देना चाहिए। यदि वह अपने पति की आज्ञा के बिना दूसरी स्त्री से भेट करने उसके घर जाती है ऐसी दशा मे उसे 6पण का अर्थदण्ड देना होगा। यदि किसी पुरुष से भेट करने जाती है तो 12पण का दण्ड देना होगा। इस प्रकार पति को पूर्णरुप से अपनी पत्नी की गतिविधि ा पर लगभग असीमित अधिकार थे। उच्च श्रेणी की स्त्रियो पर पर्याप्त रुप से प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। जिससे उनके सतीत्व पर किसी तरह की आच न आये।

---

1 बाशम ए एल, अद्‌भुत भारत, पृष्ठ, 85
2 वही पृष्ठ - 85
3 पाथरी भगवती प्रसाद, मौर्य साम्रज्य का सांस्कृतिक इतिहास,
4 जैगर एलिसन, फेमिनिस्ट पालिटिक्स एण्ड हयूमन नेचर, न्यूजर्सी रोमन एण्ड एलन हैण्ड, 1993
5 बाशम ए एल अद्‌भुत भारत

जो भी हो एक पत्नी को जो थोडी सी स्वतत्रता प्राप्त थी, उसका प्रथम कर्तव्य यह था कि अपने पति की सेवा करे, उसकी आज्ञाओ को शिरोधार्य करे, थक जाने पर भी उसके चरण दबाये—उससे पहले सोकर उठे तथा उसके पश्चात भोजन ग्रहण करे तथा सोये।

नियत्रण का तरीका अनेक स्तरो पर अलग—अलग ढग से कार्य करता है।[1] पहला ढग विचारधारा के स्तर पर कार्य करता है जो चरित्रो के माध्यम से सप्रेषित होता है।[2] यह सप्रेषण यदि सकारात्मक रुप से कार्य करता है तो व्यक्ति के अवचेतन से होता हुआ अन्त करण को प्रभावित करता है। इस स्तर पर स्त्री ने पतिव्रता के चरित्र को अपने मन और रुप मे अपना लिया। इसी कारण असामनता पूर्ण व्यवस्था आगे भी चलता रहा। इस स्थिति मे उनकी स्वय की सहभागिता के कारण उनके निचले स्तर पर उगली उठाने वाला कोई नही रहा। इस तरह धारणा के रुप में पितृसत्ता इतनी दृढता से जम गयी कि स्वाभाविक सी दिखने लगी।

ऐसा नहीं था कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था मे स्त्रियो के साथ किसी तरह का दुराचार या शोषण होता था।[3] इस व्यवस्था ने कुल के लोगो के बीच स्नेह के बीज बोये। स्नेह के इस बन्धन ने स्त्री को अतिवादिता की हद तक सुरक्षा प्रदान की और इस सुरक्षा ने धीरे—धीरे स्त्री की बची हुई स्वतंत्रता का भी हनन करना प्रारम्भ कर दिया। दूसरी तरफ स्नेह और सुरक्षा के मिले—जुले प्रयास ने कुल की परम्परा, सस्कृति तथा प्रतिष्ठा का निर्माण किया। फलस्वरुप स्त्री और प्रतिष्ठा एक दूसरे के पर्याय बन गये जिसने महाभारत जैसे युद्धो का स्वरुप ग्रहण कर लिया।

---

1 मीस मारिया का शोध पत्रा, विमन द लास्ट कालोनी (कालीफार विमन 19988, दिल्ली)

2 लर्नर गर्डा, द क्रियेशन आफ पेटियार्की आक्फोर्ड एण्ड न्यूयार्क · आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 1986

3 हायडी हार्डमन, द अनहैपी मैरिज ऑफ मार्किस्जम एण्ड फेमिनिज्म टुवर्डस ए मोर प्रोग्रसिव यूनियन इन कैपिटल एण्ड क्लास समर।

हार्टमन का कहना है कि पितृसत्ता रिश्तों का एक समूह है, उन रिश्तों का नैतिक आधार है। इसमें पुरुषों के भी ऊच—नीच या पदानुक्रम के सम्बन्ध होते हैं साथ ही सभी पुरुषों में, मर्द होने के नाते भाईचारा होता है जिसके कारण वे महिलाओं को दबाने में सफल होते हैं।

स्त्री ने बहुत सहजता से अपने आप कोइन तीनो से जोडकर देखना प्रारम्भ किया। यदि किसी ने कुल मे बनायी परम्परा को स्वीकार नही यिा तो उसे समस्त समाज ने तिरस्कृत कर दिया। समाज का यह तिरस्कार स्त्री के लिए अभिशाप साबित हुआ क्योकि उसे अब सामाजिक उपभोग की वस्तु बना दिया गया। फलस्वरुप स्त्री एक नये रुप मे समाज के समक्ष आयी। यह स्वरुप था गणिका का।

वास्तव मे स्त्री के प्रति प्राचीन भारतीय प्रवृत्ति रहस्यपूर्ण थी। ऋग्वेद काल के पश्चात शिक्षा का अधिकार छिन जाने से महिलाओ के विषय का समस्त चित्रण पुरूषो द्वारा किया गया। यही कारण है कि महिलाओ ने क्रमिक विकास के रूप मे पुरूषो के विचारो, उनके शासनतत्र को तथा उनके विश्लेषण को सर्वमान्य रूप से ग्रहण कर लिया। [1] मौर्य काल की विशेषता यह है कि वह जटिल सामाजिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। एक तरफ पुत्र प्राप्ति के लिए नियोग तथा दूसरी तरफ पर पुरूष से मिलने पर अर्थदण्ड , विरोधाभास को प्रकट करता है।

एक तरफ स्त्रियों के घर से निकलने पर प्रतिबध तथा दूसरी तरफ वेश्याओ के स्वरूप का गठन तथा राज्य के लिए उनका उपयोग। [2] ऐसा नही था कि इन वेश्याओ को इस काल मे घृणित समझा जाता था। देवदीन नामक चित्रकार सुतनुका नामक देवदासी से प्रेम करता था।[3] बोद्ध कथाओ मे वर्णित वैशाली की वेश्या आम्बपाली समस्त सभ्य भाग मे प्रसिद्ध थी। वह अपने नगर के अमूल्य रत्नों मे थी। समन्ती समाज मे प्राय ही शक्तिशाली और समद्ध गणिकाए सामाजिक, सास्कृतिक और राजनीतिक हलचलो की केन्द्र होती है। वेश्या स्वतत्र नारी है।[4] स्वतत्रता उसकी सजा है इसलिए वह वेश्या है। लेकिन यह भी सही है कि इस गतिशील स्वतत्र चेता नारी ने हर समय के कथाकार को प्राय· अपनी ओर आकर्षित किया है।[5]

---

1 मारिया मीस, वीमन द लास्ट कालोनी,
2 बाशम ए एल , अद्‌भुत भारत
3 वही
4 जैन अरविन्द औरत होने की सजा पृष्ट 5
5 वही पृष्ठ -5

बौद्ध भिक्षुणिया भी बन्धनो से मुक्त होती थी। हम उन्हे भी स्वतत्र कह सकते है। वे स्वय लिखती है

> मुक्त हू मै जी भर कर मुक्त
> मुक्त हू मै तीन क्षुद्र वस्तुओ से
> खरल से, मूसल से और अपने
> ऐठे हुए देवता से।[1]

वस्तुत दोनो की स्वतत्रता मे अन्तर है, वेश्या ने समाज मे रहकर न तो पुरूष का सरक्षण स्वीकार किया है, न ही सामाजिक स्वीकृति किन्तु भिक्षुणी मुक्त होते हुए भी सरक्षण के सम्बल के साथ ही जीवन यापन करती है और यही अन्तर समाज मे सम्मान के मनोविज्ञान का प्रश्न खडा करता है। यही से समाज मे स्त्री और स्त्री के बीच भेद उत्पन्न करता है। वेश्या चूकि यौन शुचिता के आडम्बर से निर्भय हो जीवन यापन करती है इसीलिए वह घृणित है। किन्तु भिक्षुणी को भिक्षुणी होने के पश्चात भी उस आडम्बर को यथावत ग्रहण कना होता है। अत वह निश्चित रूप से पराश्रित है।

मौर्य साम्राज्य की लडखडाती हुई दीवार ई पू 187 मे ढह गयी फलस्वरूप भारतीय इतिहास की राजनैतिक एकता कुछ समय के लिए खण्डित हो गयी। उत्तर पश्चिमी से विदेशी आक्रमण मौर्यतर काल की सबसे महत्वपूर्ण घटना थी। लगभग 5 विदेशी सस्कृतियो से भारतीयो के परिचय ने सम्पूर्ण भारतीय सामाजिक परिदृश्य को प्रभावित किया।

---

1 बौद्ध भिक्षुणियो द्वारा रचित कविता के अश।

निश्चित रूप से उस काल मे नारियो की सामाजिक दशा भी प्रभावित हुई जो आक्रमण काल की विशेष परिस्थितियो को छोड कर सामान्य रूप से सकारात्मक ही रही।

दक्कन मे मौर्य सत्ता के पतन के पश्चात नये राज्यो का उदय हुआ। उन नवोदित राज्यो मे नयी सस्कृति का निर्माण हुआ। जिसमे तुलनात्मक रूप से महिलाओ को सम्मान अधिक प्राप्त था। सभी सातवाहन शासको को उनकी माता के नाम से जाना जाता था।[1] सातवाहन सस्कृति के मुख्य केन्द्र प्रतिष्ठान गोर्वधन (आधुनिक नासिक) एव वैजन्ती थे।[2] यही कारण है भारत के अन्य क्षेत्रो की तुलना मे महाराष्ट् मे महिलाओ को सम्मान अधिक प्राप्त है।

विकसित राजनीति ने वैवाहिक सम्बन्धो को कूटनीति का अस्त्र बनाना प्रारम्भ किया और इसी क्रम मे सेल्युकस ने अपनी पुत्री का विवाह चन्द्रगुप्त से कर टकराहट को समाप्त करने का प्रयास किया। यह राजनीति मे महिलाओं के उपयोग की सबसे सम्मानित रीति थी। यही वह समय था जब बौद्ध भिक्षुणियो ने संघ मे प्रवेश कर धर्म के प्रचार मे अपना सक्रिय सहयोग दिया।

गुप्त काल मे स्त्री :—

गुप्त काल भारतीय इतिहास का स्वर्णिम काल माना जाता है। यह काल लम्बे ऐतिहासिक क्रमिक विकास का परिणाम था राजनैतिक तत्र के सुगठित विकास ने समाज मे स्थिरता को जन्म दिया। सामाजिक स्थिरता ने संस्कृति तथा समृद्धि का निर्माण किया।

---

1 सातवाहन शासको को उनकी माता के नाम से जाना जाता था। सातवाहनों के महान शासक गौतमी शतकर्णी को उसकी माता गौतमी तथा वशिष्ठी पुत्रा पुलुमावी को उसकी माता वशिष्ठी के नाम से जाना जाता था।

2 श्रीमाली एव झा प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ 223 ।

यही कारण था कि गुप्त काल साहित्य, कला तथा शिल्प की दृष्टि से अति समृद्ध रहा है। इस काल मे साहित्य, कला तथा शिल्प तीनो ही का केन्द्र बिन्दु नारी रही है। इस केन्द्र बिन्दु की स्थिति ने गुप्त कालीन नारी को भौतिक दृष्टि से नारीत्व का प्रतीक बना दिया। दूसरी तरफ इस काल मे पनपने वाले धर्म ने स्त्री को न केवल रहस्य और घृणा का पात्र बनाया बल्कि उसे गूढ धार्मिक अनुष्ठानो से दूर रखा।

स्त्रियो की समाजिक मर्यादा को लेकर इस काल मे कुछ ऐसी बाते विकसित हुई जो बात की शताब्दियो मे उनकी विशेषता बन गयी। अल्पआयु विवाह, सतीप्रथा आदि प्रथाए इस काल मे सामने आयी। यही वह काल था जब जन्म से मृत्यु तक वह पुरूष नियत्रण मे रहने को निर्देशित की गयी। स्त्री की यौन शुचिता और पवित्रता की परिकल्पना ने स्त्री और पुरूष के परस्पर सम्बन्धो के मध्य अपरोक्ष दीवार खडी कर दी। जिसके फलस्वरूप स्त्री पूर्वोक्त सहधर्मिणी, सहचरी आदि स्थानो से युक्त हो 'भोग्या' बन गयी। अब उसके व्यक्तित्व को प्रत्येक कोणो के मानदण्ड प्रत्येक पुरूष द्वारा अपनी विचारधारा के स्तर पर तैयार किये जाने लगे। धार्मिक, आर्थिक और व्यक्तिक सभी स्थितियो मे स्त्रियो पर प्रतिबन्ध लगाये गये, उन्हे ऐसी सम्पत्ति कहा गया जो किसी को भी दी जा सकती है। उनकी यह निरन्तर अधीनता पितृसत्ताम्मक समाज का सबसे सुगठित रूप था और है।

उच्च वर्ग की स्त्रियो को थोडी शिक्षा दी जाती थी जिसका उद्देश्य मात्र इतना था कि वह बुद्धिमत्तापूर्ण वार्तालाप कर सके। सार्वजनिक जीवन मे भाग लेना उनके लिए आवश्यक नही समझा गया।

इस काल के साहित्य के अध्ययन से स्त्रियो के विषय मे पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है किन्तु यह सभी सूचनाए उच्चवर्गीय स्त्रियो से सम्बन्धित है।

सती प्रथा के सम्बन्ध मे भी गुप्त कालीन अभिलेखीय प्रमाण मिले है। सती प्रथा का महत्वपूर्ण साक्षी 510 ई का एरण शिला लेख है। जिसमे गोपराज नामक सेनापति की पत्नी के सती होने का वर्णन है।

पृष्ठ 315

गुप्त काल विधिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण काल रहा मनु महराज की मनु सहिता ने समाज को लिखित विधिक स्वरूप प्रदान किया जिसके परिणाम स्वरूप समाज अब एक निश्चित दिशा मे गति करने लगा। सामान्यत मनु ने स्त्रियो से उनके अधिकार छीन लिये और उन्हे पूर्ण रूप से पति पर आश्रित सेविका बना दिया। मनु ने सर्वप्रथम कन्या के विवाह की आयु सामान्य परिस्थितियो मे निश्चित करके 12 वर्ष कर दी।[1] यह एक ऐसी परम्परा रही कि उससे स्त्रिया का उभर पाना अत्यन्त कठिन कार्य बन गया। इन परिस्थितियो मे स्त्री शिक्षा समृद्ध वर्गो तक सीमित रह गयी।

यद्यपि जन साधारण मे सती होने का प्रचलन नही था किन्तु विधवाओ की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। उच्च तथा ब्राम्हण वर्ग की विधवाओं का जीवन अत्यन्त कष्ट पूर्ण था।[2] इस काल के विधिकारों ने स्त्री की पवित्रता को पुर्नजन्म के सिद्धान्त से जोडकर उसके ऊपर मानसिक नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास करने लगे। बृहस्पति के अनुसार " पति के मरने पर जो पतिव्रता साध्वी निष्ठा का पालन करती है वह पापो को छोडकर पतिलोक मे जाती है।"[3]

---

1 कात्रामामरणत्तिएठेदृगृहे कन्यर्तुमत्यपि
न चैवैना प्रयच्छेतु गुणहीनायकर्हिचित" मनु स्मृति 989 ।

2 आल्तेकर ए एस, दि पोजीशन आफ विमेन इन हिन्दू सिविल एजूकेशन, पृष्ठ . 60

3 कल्याण, नारी अंक 1948, गीता प्रेस गोरखपुर।

गुप्तकालीन अनेक स्मृतियो से विधवा के लिए ब्रहमचर्य ब्रत नियम आदि का विधान है।

स्त्रियो के सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकारो के विषय मे विभिन्न स्मृतिकारो ने पर्याप्त मतभेद है। याज्ञवल्क स्मृति मे पत्नी को पति की सम्पत्ति का अधिकारी बताया गया है। उनका कहना है पुत्र के अभाव मे पत्नी सम्पत्ति की अधिकारी होगी।[1] बृहस्पति और नारद ने कन्या भी पुत्र के समान सन्तान होती है अत पुत्र के अभाव मे उसका सम्पत्ति पर अधिकार होना चाहिए। किन्तु व्यवहारिक रूप से यह विषय विवादग्रस्त है। ऐसे भी शास्त्रकार हुए है जिन्होने कन्या तथा पत्नी किसी को सम्पत्ति मे अधिकारी नही माना है।

गुप्त काल चूकि हिन्दू धर्म के पुनरूत्थान का प्रतीक माना जाता है इसीलिए इस विधियो को इस पुनरूथान के साथ कठोरता से अपनाया गया। जिसके समाज मे नारियो की स्थिति को अत्यन्त निम्न बना दिया।

स्मृतिकार मनु ने स्त्रियो के उपनयन में व्यवधान उत्पन्न किया। गृहकार्य ही अग्नि कार्य के समान पवित्रा होने से स्त्रायों के उपनयन की आवश्यकता नही रह गयी।[2] आल्तेकर का मत है कि 500 ई0 पूर्व से स्त्रियों का उपनयन समाप्त हो चुका था।[3] 9वी शताब्दी मे मेघातिथि के महाभाष्य से स्त्रियों के उपनयन संस्कार मे पुन. प्रतिरोध उत्पन्न हो गया। यही कारण था कि सामान्य वर्गों मे कुछ कारणों से स्त्री–शिक्षा विचारणीय विषय ही नही रह गया।

---

1 " आमन्त्रिका तु कार्येय स्त्रीवामावृदशेषत
सस्कायार्य मारीरस्य यथाकाल यथाक्रमम।
वैवाहिको विधि स्त्रीणाम सस्कारों वैदिक स्मृत
पतिसेवा गुरौ वासौ मृहार्थेग्नि परिक्रमा ।।" मनु 2,66,67

2 आल्तेकर ए एस पोजीशन ऑफ वुमन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृष्ठ – 202

3 वही

स्मृतिकारो के आदेशानुसार इस काल मे बाल विवाह की प्रथा का प्रचलन बढने लगा याज्ञवल्क [1], सवर्त एव यम [2] आदि स्मृतिकारो ने कहा कि जो अभिभावक अपनी कन्या का विवाह तारुण्य प्राप्ति से पूर्व नही कर देते वे अपराधी है। इस धार्मिक प्रलोभन की प्रतिक्रिया का ज्ञान अलबरुनी [3] के कथन से स्पष्ट हो जाता है। अलबरुनी कहता है – 'हिन्दू अपनी बालिकाओ का विवाह अल्प वय मे ही कर देते है। बारह वर्ष तक कोई ब्राहमण अपनी कन्या कुमारी नहीं रख सकता।''

इस प्रकार बारह वर्ष की अवस्था मे विवाह हो जाने से स्त्रियो की शिक्षा सम्भव नही थी। [4] बाशम के अनुसार बौद्ध धर्म के अर्न्तगत तंत्रा शाखा के जन्म से जो अनाचार फैला उससे बचाने के लिए भी बालिकाओ का विवाह अल्पवय मे ही कर दिया जाता था।[5]

बौद्ध धर्म तथा कालान्तर मे हिन्दू धर्म मे पनपे तत्रा विज्ञान ने स्त्री को साधना का साधन बताया। बौद्ध सिद्धो की यह वाममार्गी शाखा थी सिद्ध साधक नारी भोग मे विश्वास करते थे। यही कारण था कि आगे चलकर सिद्ध साधको के विरोध मे नाथ सम्प्रदाय का उदय हुआ जिसने योग की पवित्रता के लिए स्त्री के दर्शन को ही वर्जित कर दिया। राजतरंगिणी (12वी सदी) से ज्ञात होता है कि किन्नर पुर मे एक राजा की स्त्री का अपहरण एक बौद्धभिक्षु ने अपनी ऐन्द्रजालिक विद्या से कर लिया था।[6]

---

1 ''अप्रयच्छन्समाप्नोति भ्रूणहत्या ऋतौ –ऋतौ'' याज्ञ स्मृति , 9 64।

2 9 67 1 22 उद्धृत, आल्तेकर एजूकेशन इन एंशेन्ट इण्डिया पृष्ठ– 217।

3 साउच, अलबेरुनीज इण्डिया भाग दो पृष्ठ– 131।

4 आल्तेकर एजूकेशन इन एंशेन्ट इण्डिया पृष्ठ 217।

5 बाशम ए एल द वान्डर दैट वाज इण्डिया पृष्ठ189।

6 राज पृष्ठ 13–14 श्लोक 199–200।

सन् 750 से 1200 का काल भारतीय इतिहास मे अनेक राजवशो के उत्थान और पतन का काल रहा है। इन राजवशो मे गुर्जर–प्रतिहार चौहान, परमार, चालुक्य, चदेल, गहडवाल, शुहिल, तोमर आदि अधिकाश वश 'राजपूत' माने जाते है। यूरोपीय इतिहासकारो ने राजपूतो को विदेशी मूल का प्रमाणित करने का प्रयास किया है।[1] जो भी हो मध्ययुग की इस शासन–परम्परा ने एक नवीन तथा विशिष्ठ सांस्कृतिक चेतना का निर्माण किया। जिसे हम 'राजपूत सस्कृति' कह सकते है। इस संस्कृति मे अनेक तत्व सम्मिलित है, जैसे राजपूतो की युद्धप्रियता, शोर्य, क्षमाशीलता बहुविवाह, प्रशासन के रीति–रिवाज। विदेशी आक्रमण के विरूद्ध अनवरत युद्धरत रहने के कारण ये हिन्दू–समाज के राजनीतिक नेता मान लिए गये। यही कारण था कि लगभग छ· शताब्दियो तक राजपूत जाति का विशिष्ठ सामाजिक महत्व बना रहा। राजपूतो की सस्कृति का सबसे सुन्दर चित्रण राक्षो साहित्य मे है। यह साहित्य समकालीन सामतवादी पृष्ठ भूमि का सबसे अच्छा प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता है। इन ग्रन्थों के नायको को जितना युद्धो मे रत दिखाया गया है उतना ही सुन्दरियो के साथ विवाह के लिए उत्सुक भी।[2] इस प्रकार समकालीन वीरगाथात्मक साहित्य सम्पूर्ण राजनीतिक परिस्थितियो को बहुत अच्छे ढग से मुखरित करता है।

समकालीन माहिलाओ से भी वीरागना होने की अपेक्षा की जाती थी। वीरागना सम्बन्धी आदर्शों की उनकी अपनी सहिता थी। महिलाये अपने पुरुषो को युद्ध मे भेजने के लिए प्रेरणा श्रोत बने। पति को युद्ध में मारे जाने को अपना गौरव माने।[3] पति के युद्ध मे माने जाने के साथ उच्च वर्गो मे सती[4] तथा जौहर[5] जैसी परम्पराओं का प्रारम्भ हुआ। इस काल में स्त्रियों की स्थिति मे भयकर पतन हुआ क्योंकि नारी को भी युद्धो का कारण माना जाने लगा।[6]

---

1 कर्नल राड अपने शोधों में राजपूतों को शक्त, कुषाण तथा हूण आदि विदेशी शासको के वशजों से सम्बन्धित माना है।
2 डा नागेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास।
3 इस सम्बन्ध मे राजपूताने की स्त्रियो के मध्य उक्तियाँ प्रचलित हो गयीं उदाहरण–भिल्ला हुआ जो मरिया बहिण म्हारो कत।
4 सती प्रथा का अर्थ है कि मृत्यु के पश्चात उसके मृत शरीर के साथ जलना है।
5 जौहर युद्ध के समय पुरुष के युद्धरत रहने की अवस्था में आक्रमण कारियों से अपनी सम्पूर्ण रक्षा के लिए स्त्रियों द्वारा स्वय को अग्नि मे समर्पित करना है।
6 जेहि की बिटिया सुन्दर देखी तेहि पर जाइ धरे हथियार।

इस प्रकार श्रगार और वीर–रस जैसे दो विरोधी तत्व समकालीन जीवन मूल्यो के प्रतीक बन गये।

पृथ्वी राज रासो, जो हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है ये कवि चन्द्रवरदाई पृथ्वीराज को जितना वीर दिखाया है उतना ही श्रृगार प्रेमी भी। कवि ने एक ओर तो युद्धो के वर्णन मे वीरता और पराक्रम की अद्‌भुत सृष्टि की है दूसरी ओर रूप–सौंदर्य और प्रेम के भी सरस चित्र उभारे हैं। नारी दोनो इसो के केन्द्र मे है।[1] वस्तुत सामती व्यवस्था मे नारी सिर्फ एक वस्तु है, सम्पत्ति है।[2] समस्त मध्ययुगीन साहित्य स्त्रियो की पतिपरायणता, धर्म परायणता, त्याग तथा बलिदान की गाथाओ से भरा पडा है।[3] यही उनका स्त्रीत्व है और यही शील। हर विजेता ने शत्रु–राज्य के पशुओं और गुलामो को लूटा उनके साथ ही स्त्रियो को भी 'लूटा', क्योंकि मूलत वह सम्पत्ति ही थीं।

इस काल में मुख्य रूप से स्त्रियो को धर्म से जोडने का प्रयास भी किया गया। परिव्यक्ता, विधवा तथा समाज से बहिष्कृत स्त्रियो के लिए प्रभु चरण को ही मुख्य बनाया गया है। मध्य काल के 'रास साहित्य' में इस प्रकार के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। इन कवियो ने राजाओ की वीरता तथा युद्धो का विस्तार से विवेचन किया हैं किन्तु साथ ही मोक्ष के अपने दार्शनिक विचार को मुख्य रूप से प्रतिपादित किया है।

कौशाम्बी के राजा शतानीक द्वारा चम्पापुर पर आक्रमण के समय उसके सेनापति ने चदन बाला नामक युवती का अपहरण कर सेठ के हाथो बेच दिया। इस युवती ने अपार कष्टो को सहते हुए भी अपने अतीत्व की रक्षा की तथा अन्ततः जैन धर्म अगीकार कर लिया जिससे वह मोक्ष को प्राप्त हुई।[4]

---

1 डा नागेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास
2 जैन अरविन्द औरत होने की सजा पृष्ठ–21 राजकमल प्रकाशन
3 वही

4 चदन बाला रास (जैसा साहित्य)

यह तथा ऐसी कथाये पुरुष समाज की स्त्रियो के प्रति दोहरे चरित्र की परिचायक है। चन्दन बाला का अपने सतीत्व की रक्षा करना समाज के लिए श्रद्धा परिचायक रहा।

भारतीय इतिहास मे इस्लाम के प्रभुत्व ने यहॉ की व्यवस्था को हर स्तर पर प्रभावित किया। इस सत्ता परिवर्तन ने न केवल राजनीतिक सरचना मे घुसपैठ की अपितु सामाजिक सरचना को भी सभी स्तरो पर प्रभावित किया। इस्लाम के आगमन के साथ–साथ महिलाओ की दशा मे भारी परिवर्तन आया। यह परिवर्तन सकारात्मक न होते हुए भी नारी की निरतर गिरती हुई स्थिति मे सहायक रहा। यही कारण था कि सम्पूर्ण सल्तन तथा मुगल काल नारी के सदर्भ मे सराहनीय नही रहा। इसके दो कारण थे– (1) शासक वर्ग विदेशी था (2) उसका धर्म भिन्न था। इन दोनो ही कारणो ने भारतीय समाज को हर स्तर पर प्रभावित किया। चूकि मध्यकालीन समाज तर्क विवेक और मनुष्य की प्रधानता से इतर समूह के लिए, समूह के द्वारा के सिद्धान्त पर चलता था इसलिए इस समाज से अत्यधिक आशा नही की जा सकती थी। कुरान के वचन और हदीस के नियम इस्लाम को मानने वालो के लिए शिरोधार्य थे और ये दोनो ही ग्रन्थ औरत की स्वतत्राता की परिकल्पना नही करते। इसलिए स्वय इस्लाम के अनुयानियो के समाज मे स्त्री की दशा अच्छी नही थी। दूसरी तरफ उनके भारत आगमन ने यहॉ के अपेक्षाकृत अलग समाज पर अपना पूर्ण प्रभाव डाला। फलस्वरूप भारतीय समाज जो गुप्त काल तक स्त्रियो के दोहरे चरित्रा का परिचायक बन गया था जब और भी रूढिवादी हो गया। स्त्रायो के सम्बन्ध मे इस्लाम के दर्शन ने भारतीय स्त्रियों की दशा का दयनीय बनाने मे अपनी प्रमुख भूमिका निभाई। यद्यपि इस्लाम में महिलाओ को सम्पत्तिगत अधिकार प्रदान किये थे किन्तु ये अधिकार व्यवहारिक रूप से नही मिलते थे।

चूँकि इस्लाम को मानने वाला शासक वर्ग था तथा नये आर्थिक, सामाजिक तथा वैचारिक पृष्ठभूमि वाला वर्ग था। इसलिए देशी समाज का उसके प्रति आकर्षण स्वाभाविक था। दोनो समाजो के एक दूसरे के प्रति आकर्षण ने इस काल मे महिलाओं की स्थिति को अत्यत कठिन तथा उलझा हुआ बना दिया।

ऐसा कहा जा सकता है कि उत्तर भारत मे मुहम्मद गोरी की विजय से जिससे दिल्ली मे सुल्तानो के राज्य (1206–1526) की स्थापना हुई, भारत मे मध्य काल की असली शुरूआत हुई।[1] यह एक ऐसे शासन की स्थापना थी, जो कई दृष्टियो से पुराने शासन से भिन्न था। 12 वी शताब्दी के तुर्की आक्रमण के पश्चात् राजनीतिक व्यवस्था का जो स्वरूप स्थापित हुआ वह ऊपर से आरोपित प्रणाली के समान था। दूसरी तरफ विजेता न केवल नयी सस्कृति के वाहक थे बल्कि नये धर्म के अनुयायी थे। यह नवागन्तु इस्लाम धर्म अपनी धार्मिक विधि सहिता के प्रथम सूत्र मे ही कहता है "हमने पुरुषो को स्त्रियों पर हाकिम बना के भेजा है।"[2] ऐसी स्थिति मे विजित और विजेता दोनो ही समाजो में स्त्री के संदर्भ मे कोई मूलभूत अन्तर नही था।

फख्रे मुदब्बिर के अनुसार जब मुइज्जुदीन मुहम्मद गोरी 1205–6 ई0 मे खोखरो को हराकर गजनी वापस लौट रहा था तो उसने औपचारिक रूप से ऐबक को अपने भारतीय ठिकानो को प्रतिनिधि चुन लिया।[3] इस प्रकार भारत मे तुर्की सम्राज्य की विधिवत स्थापना हुई।[4] ऐबक के शासन काल से हम किसी निष्कर्ष पर इसलिए नहीं पहुँच सकते क्योकि यह न केवल प्रारम्भिक काल था अपितु बहुत छोटा भी था।

इल्तुतमिश का 26 वर्ष का शासन–काल अत्यत महत्वपूर्ण काल रहा विशेषकर हमारे अध्ययन के दृष्टिकोण से। सन् (1210–1236) तक का शासनकाल राजनीतिक उथल–पुथल तथा स्थापना का काल रहा। इल्तुतमिश विश्व इतिहास का ऐसा पहला शासक था जिसने अपनी समस्त सन्तानो मे अपनी पुत्री। रजिया को योग्य उत्तराधिकारी समझा। उत्तराधिकारी के रूप मे रजिया का चयन समय और काल की सीमा रेखा के विपरीत था और यही कारण था कि रजिया को अपने शासन काल की अल्प अवधि मे निरतर सधर्षरत रहना पडा। इल्तुतमिश की लिग निरपेक्ष चयन नीति के विपरीत समाज मे स्त्री की क्षमताओ के प्रति गलत धारणाओ ने रजिया की स्थिति को कमजोर बना दिया।

रजिया को उत्तराधिकारी चुने जाने के बाद भी इल्तुतमिश की मृत्यु के पश्चात गद्दी पर नही बैठाया गया। रजिया ने उचित अवसर देखकर सत्ता पर अधिकार कर लिया। जनता ने उसका पूर्ण समर्थन किया। रजिया का विरोध तुर्क अभीरो ने किया। समकालीन इतिहासकार मिनहाज का कहना है "रजिया ने कुशलता से अपने विरोधियो को कुचल दिया। लखनौती से देवल तक सारे अमीरो ने उसकी सत्ता को स्वीकार कर लिया।"

रजिया ने पर्दा त्याग दिया और पुरुषो के समान 'कुबा' (कोट) और कुलाह (टोपी) पहनकर जनता के सामने जाने लगी। शासन का समस्त कार्य वह स्वयं करने लगी। मिनहाज के अनुसार – रजिया ने तीन वर्ष 6 माह और 6 दिन तक शासन किया। उसके शब्दो मे सुल्तान रजिया एक महान शासक थी – बुद्धिमान, न्यायप्रिय, उदारचित्त और प्रजा की शुभचिन्तक, सम्प्रदाय प्रजा पालक और अपनी सेनाओ की नेता। उसमे सभी बादशाही गुण विद्यमान थे – सिवाय नारीत्व के और इसी कारण पुरूषो की दृष्टि मे उसके सब गुण बेकार थे।

इतिहासकार मिन्हाज का यह कथन इस बात का प्रमाण है कि नारी की प्रशासन सम्बन्धी सभी योग्यताये पुरूष प्रभावी व्यवस्था मे पनप नही सकती। रजिया का राज्यारोहण और उसकी क्षमता मध्यकालीन सामतवादी पुरूष प्रधानता को चुनौती थी। दूसरी तरफ सामान्य महिलाओ की स्थिति मे कोई परिवर्तन नही था। क्योकि रजिया परिस्थिति विशेष की देन थी। फिर भी पितृ सन्नात्म समाज व्यवस्था मे स्वय को सत्ता के शीर्ष पर स्थापित कर पाना स्वय मे बहुत बडी सफलता थी। रजिया के पश्चात सत्ता के शीर्ष पर महिलाओ के विषय मे सोच पाना भी कल्पना थी क्योकि आम स्त्री अनेक नियम कानून, मान प्रतिष्ठा तथा धर्म के बन्धनो की शिकार थी जो प्रशासन और राज्य जैसे विषयो पर सोच भी नही सकती थी।

रजिया के पश्चात आये सुल्तानो मे अलाउद्दीन खिलजी ने अपने धार्मिक सस्कारो को महिलाओ के लिये अत्यत रूढिवादी तरीके से पेश किया। एक तरफ घरेलू महिलाओ के बाजार जाने तथा बाहर निकलने पर कडा प्रतिबन्ध था दूसरी तरफ सुन्दर कन्याओ को जो विषय भोग के लिए होती थी का बाजार मूल्य होता था। अलाउद्दीन के राज्य मे घर मे काम करने वाली दासी का मूल्य 5 से 12 टके विषय भोग के लिए दासी का मूल्य 20 से 40 टके होती थी मध्य कालीन शासन व्यवस्था निरकुश और स्वेच्छाचारी शासन व्यवस्था थी। जिसमे शासक सर्वशक्तिमान होता था।

समकालीन लौकिक हिन्दी साहित्य के अमर कवि अमीर खुसरो जो सामतवादी प्रवृत्तियो से पूर्णत. विलग समकालीन जन सस्कृति के है, ने जन साहित्य को अपनी लेखनी का विषय बनाया।

खुसरो ने जन साहित्य के आदर्श को बहुत सार्थक रूप दिया। खुसरो ने अपनी रचनाओ में स्त्री के दर्द और समकालीन परिवेश का चित्रण किया है। तत्कालीन साहित्य के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि इस्लाम के सामाजिक धार्मिक मतवाद के साथ भारतीय सिद्धान्त और चिन्तन का जो सघर्ष ारम्भ हुआ उसमे महिलाओ की दशा सरक्षित जीव से अधिक नही रह गयी। फलस्वरूप जर जोरू जमीन के लिए प्रचलित मान्यता को और अधिक बल मिला। चूकि इस्लाम को स्वय को एक सामाजिक धार्मिक मतवाद तथा राजनीतिक सत्ता के रूप मे स्थापित करना था। यही कारण था कि शासक वर्ग मे अपने को हर स्तर पर स्थापित करने का प्रयास किया। इसके विरूद्ध तत्कालिक प्रतिक्रिया को निषक्रियता का नाम दिया जा सकता है। कारण यह नही था कि समकालीन शासक वर्ग मे कोई सुनिश्चित प्रतिरोध करने की शक्ति नही थी बल्कि ऐसा प्रतीत होता है कि समाज ने इसकी ओर कोई खास ध्यान नही दिया था क्योकि भारतीय जीवन धर्म तात्रिाक ढग से श्रेणीबद्ध तथा सामन्तवादी व्यवस्था पर आधारित ग्रामीण कृषक समाज के ढर्रे पर चलता चला आ रहा था। इस समस्त उपक्रम मे महिलाओ के प्रश्न सर्वथा गौण थे। उनकी स्थिति को ईश्वरीय विडम्बना के साथ जोड का देखा जाता था महिलाओ मे भी अपनी स्थिति को यथावत स्वीकार कर लिया था यही कारण था कि स्थिति ज्यो कि त्यों बनी रही। औरंगजेब की मृत्यु के बाद भारत का प्रशासनिक तन्त्र कमजोर होने लगा अग्रेजो ने इसे अन्ततः ध्वस्त कर दिया ।जैसे जैसे देश पर अंग्रेजी प्रभुत्व बढा शोषण की गति तेज होती गई और देश का आर्थिक आधार हिलने लगा। इसका भारत के सामाजिक जीवन पर घातक प्रभाव पडा। नये शसन मे अनेक खामियां थी तथा लोक कल्याणकारी तत्वो को अभाव था। अत देश के स्थिति सुधारने के लिये कोई प्रयत्न नही हुआ।

ऐसी हालत मे देश के अन्दर आर्थिक विपन्नता के साथ सामाजिक कुरीतिया भेदभाव एव धार्मिक अधविश्वास बढते गये परिणाम यह हुआ कि 18वी शताब्दी के अत तक भारत दरिद्रता एव पिछडेपन की सीमा तक पहुन गया इस समय अधविश्वासो और धार्मिक आडम्बर का बोल बाला था और इसकी सबसे अधिक शिकार महिलाये थी यही कारण था कि सर्वप्रथम धार्मिक आडम्बरो कर ही चुनौती दी गई फलस्वरूप धर्म सुधार आदोलनो का प्रमुखता दी गई यह सुधार आदोलन सिर्फ धर्म तक सीमित नही रहा इसका प्रभाव धर्म से अधिक राजनीतिक क्षेत्र पर पडा। तत्कालीन भारतीय समाज मे कई ऐसी मान्यताये थी जिनका आधार अधविश्वास और अज्ञान था। इस सदर्भ मे सुधारको को ध्यान सबसे पहले स्त्रियो की दशा सुधारने की ओर गया। सती, बाल विवाह, पर्दा, बाल हत्या तथा जातीय भेद भाव इसके ज्वलत अदाहरण हैं। सदियो के अत्याचार तथा शोषण के कारण ही महिलाओ की यह दशा थी। व्यक्तिगत कानूनो तथा धार्मिक प्रथाओ ने स्त्रियों को समाज मे बहुत ही निम्न स्तर दे रखा था। परम्परागत रूप से महिलाओ को मां और पत्नि के रूप मे प्राय प्रशसा की जाती थी। निम्नवर्गीय महिलाओं से खराब स्थित उच्च वर्गीय महिलाओ की थी। उन्हें व्यक्तिगत स्वतत्रता नही थी और न ही उन्हें व्यक्तित्व को विकसित करने का अधिकार ही था ऐसा माना जाता है कि हिन्दु महिलाये सिर्फ एक बार विवाह कर सकती हैं किन्तु पुरूषो का इच्छानुसार विवाह करने की छूट थी। पुरूषो के लिये बहु विवाह तथा मुसलमानों मे ही मान्य थी इस तरह सम्पूर्ण देश में लगभग स्थितियां सामान्य थी और महिलायें समाजिक कुरीति तथा दुर्दशा का शिकार थी। ब्रिटिश भारत में महिलाओ की दशा खराब होने के अनेक कारण थे इनमें सबसे प्रमुख हिन्दु मुस्लिम सस्कृतियो का एक दूसरे पर पडने वाला गहरा प्रभाव था। युद्धपरक परिस्थितियों से उत्पन्न स्थितियो मे महिलाओ बच्चों की सुरक्षा के विचार में तथा इससे उपजी कठिनाइयो ने महिलाओ को सरक्षण तथा सीमाओं के रहने का आदी बना दिया।

युद्ध की विभीषिका का महिलाओ पर दुहरा असर पडता था। पहला उनके ऊपर होने वाले शारीरिक अत्याचारो के रूप मे तथा विधवाओ के रूप मे उत्पन्न स्थिति से अपने समाज और लोगो द्वारा होने वाले अत्याचार इन दोनो ही स्थितियो से महिलाओ को बचाने के लिए उन्हे धर्म के आडम्बरो मे बुरी तरह जकड दिया गया फलस्वरूप सती प्रथा तथा पर्दा प्रथा का प्रचलन समाज तथा महिला के लिये आवश्यक समझा जाने लगा ब्रिटिश भारत मे लडकियो के विवाह की उम्र 8 से बारह वर्ष थी ऐसा नही था कि इन लडकियो का विवाह हमउम्र लडको से ही किया जात था लडकियो का विवाह किसी भी उम्र के व्यक्ति से किया जा सकता था इसका परिणाम यह होता था कि भारत में विधवाओ की एक बहुत बडी सख्या थी 12 वर्ष की क्नया भी अगर विधवा हो जाये तो उसे पुनर्विवाह का अधिकार नही था। विधवाओ द्वारा अपने पति के लाश के साथ जल जाना अच्छा माना जाता था। आर्थिक रूप से हिन्दु तथा मुसलमान दोनो ही धर्मो की दशा अच्छी नही थी। मध्यमवर्गीय स्त्रियो का आर्थिक उपक्रम में हिस्सेदारी बनना समाज की दृष्टि मे अच्छा नही माना जाता था यही कारण था कि हिन्दुओ मे महिलाओ का सपत्तिगत अधिकार नही था। मुसलमानो मे दोख्तरी के रूप मे यह अधिकार पुत्रियो को सैद्धान्तिक रूप से प्राप्त था लेकिन व्यवहारिक रूप से यह अधिकार नही था यही कारण था कि आर्थिक रूप स महिलाये पुरूषो पर निर्भर थी। इस आर्थिक निर्भरता ने भारतीय महिलाओ की स्थिति अत्यत दयनीय बना दी जो इस काल कर पहचान थी। इस काल मे हिन्दु विधि के अनुसार हिन्दु महिलाओ को तलाक का अधिकार नहीं था मुस्लिम महिलाओ को यह अधिकार सिर्फ सैद्धान्तिक रूप से था व्यवहारिक रूप से उन्हे यह अधिकर प्राप्त नही था।

महिलाओ को किसी भी तरह की स्वतत्रता नही थी सामान्यत उनकी शिक्षा को भी अच्छा नही माना जाता था ऐसी स्थिति मे यह अति आवश्यक है कि स्थिति का गहन अध्ययन किया जाय और महिलाओ के उत्थान की दिशा मे कुछ सार्थक कार्य किये जाये। पश्चिम के विचार और एक नई सस्कृति के सम्पर्क से यहा कि सामाजिक दशा मे आना और लाना दोनो की अवश्यभावी था। सह बदलाव आना यद्यपि स्वभाविक था किन्तु इसको दिशा देना अति आवश्यक था अन्यथा स्थितियां शायद कुछ अलग तथा नियत्रण के बाहर होती इन्हीं को ध्यान मे रखकर मानवतावादी तथा सामतवादी भावनाओ से प्रेरित होकर सुधारको ने महिलाओ की दशा सुधारने के लिए आदोलन प्रारम्भ कर दिये। आदोलन अपने प्रारम्भिक वर्षो मे समतावादी तथा व्यक्तिवादी सिद्धान्तो का समर्थक रहा किन्तु परिस्थितयो के टकराव ने वस्तुस्थिति को बहुत हद तक स्पष्ट कर दिया फिर भी जनता को यह समझाने का प्रयास किया जाने लगा कि किसी भी धर्म मे महिलाओ का स्थिति को नीचा कर के नही रखा गया बल्कि लगभग सभी धर्मो मे महिलाओ का सम्मानपूर्ण अधिकार दिया गया है। व्यवहारिक रूप से महिलाओ की जो भी स्थिति थी उसमें सबसे अधिक खराब स्थिति बगाल की थी। बगाल मे सती बाल शिशु हत्या तथा विधवाओ की स्थिति तीनो ही स्थितियो मे महिलाओ के साथ अत्याचार अपने चरम पर था। बगाल की इन स्थितियो का वहा के सुधारक अत्यंत गम्भीरतापूर्वक अध्ययन कर रहे थे और उन्होने इस स्थिति से महिलाओ को उबारने के लिये सकल्प कर लिया था राजा राम मोहन राय ने इस दिशा मे सबसे पहला कदम उठाया और सती प्रथा को कम करने के लिये पूरी शक्ति से प्रयास करने लगे। सती प्रथा को बन्द करने के लिये राजा राम मोहन राय ने कम्पनी की सरकार से सहयोग मागा।

लार्ड विलियम बेटिक ने जो इस समय भारत मे ब्रिटिश सरकार का प्रतिनिधि था ने राजा राम मोहन राय को पूर्ण सहयोग तथा समर्थन दिया और 1829 मे कानून बना कर विधवाओ को जीवित जलाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया तथा न्यायालयो को यह आदेश दिया कि ऐसे मामलो मे सदोष मानव हत्या का मुकदमा चलाया जाय और अपराधी को दण्ड दिया जाय। 1830 मे इा कानून को बम्बई तथा मद्रास मे भी लागू कर दिया गया सती प्रथा के विरोध मे बना यह कानून अत्यत सफल सिद्ध हुआ और बगाल मे इस कानून के बनने के पश्चात सती प्रथा की घटनाओ मे अत्यत कमी आई।

महिलाओ से सम्बन्धित दूसरी कुप्रथा शिशु वध की थी जो महिला शिशुओ से सम्बन्धित थी। यह प्रथा बगालियो तथा राजपूतो मे अत्यंत प्रचलित थी। इस प्रथा के विरोध मे भी सर्वप्रथम राजा राम मोहन राय ने ही विरोध का स्वर उठाया और 1870 मे कानून बना कर इस प्रथा को रोकने का प्रयास किया गया किन्तु विज्ञान की प्रगति के साथ आज स्वतत्राता के 50 वर्षों के उपरान्त M.T.P. के रूप मे अन्यत विकट रूप से हमारे सामने है।

स्त्रियो की दशा सुधारने मे बाल विवाह निषेध तथा विधवा पुनर्विवाह आदोलन प्रारम्भ किया गया। इस ओर कलकत्ता के सस्कृत कालेज के आचार्य ईश्वर चन्द्र विद्यासागर का कार्य सबसे अधिक उल्लेखनीय है। यद्यपि विद्या सागर के कार्यों का व्यापक विरोध हुआ और इसे अपने समय मे व्यापक सफलता नही मिली किन्तु यह विधवाओ की स्थिति के विषय मे न केवल महत्वपूर्ण कार्य था अपितु एक महत्वपूर्ण चिन्तन था उन्होने वेदो के उदाहरण देकर प्रमाण प्रस्तुत किये कि वेदो मे विधवा पुनर्विवाह की अनुमति थी। 1856 मे अन्तत हिन्दु विधवा पुनर्विवाह अधिनियम द्वारा विधवा विवाह को वैद्य मान लिया गया और ऐसे विवाह से उत्पन्न बच्चे वैद्य घोषित किये गये।

बम्बई के प्रोफेसर डी0 के0 कर्वे और मद्रास मे वीरेश लिगम पाण्डुल ने इस दिशा मे विशेष प्रयत्न किया वे विधवा पुनर्विवाह सघ के सचिव थे। 1899 मे उन्होने विधवा आश्रम स्थापित किया जिसमे विधवाओ को जीविकोपार्जन का साधन प्रदान किया जाता था। सुध ाारको ने बाल विवाह का भी विरोध किया इसके फलस्वरूप 1872 मे एक कानून नेटिव मैरिज एक्ट पास किया गया जिसमे 14 वर्ष से कम आयु की बालिकाओ का विवाह वर्जित कर दिया गया था तथा पुरूषो द्वारा किया जाने वाला बहुविवाह भी अवैद्य घोषित कर दिया गया किन्तु यह कानून बहुत प्रभावशाली नही हो सका। भारत सरकार ने बाल विवाह के विरूद्ध सबसे महत्वपूर्ण कदम 1930 मे उठाया उस वर्ष हरविलास शारदा के अथक प्रयासो से बसल विवाह निरोधक कानून पास हुआ जिसे शारदा एक्ट के नाम से जाना जाता था। इसमे 18 वर्ष से कम लडके तथा 14 वर्ष से कम लडकी का विवाह अवैद्य घोषित कर दिया गया एक्ट के विरू काम करने वाले लोगो के लिए सजा भी थी किन्तु इस कानून को पास कराने तथा सरकार द्वारा लागू कराने की सजगता के अलावा सुधारको ने कोई अन्य कदम नही उठाया यही कारण है कि बाल विवाह की प्रथा आज भी प्रचलित है। 19वी शताब्दी मे एक गलत धारणा प्रचलित थी कि हिन्दू शास्त्रो मे स्त्री शिक्षा की अनुमति जैसे ही सास्कृतिक जागरण प्रारम्भ हुआ सुधारको ने इस भ्राति का जोरदार खडन किया। स्त्रियो की शिक्षा के प्रसार के लिये तात्कालिक प्रयास प्रारम्भ हो गये।

नारी शिक्षा :—

18वी शताब्दी के अत तक भारतीय समाज वस्तुत सामतवादी था जिसमे अनेक वर्ग और अनके जातियां निवास करती थी। भारतीय शासको ने शिक्षा की जिम्मेदारी नही ली थी। विद्यालय मंदिर तथा मस्जिदो मे चलाये जाते थे।

स्त्रिया कभी विद्यालय मे शिक्षा ग्रहण करने नही जाती थी। राजा राम मोहन राय मे जब भारतीय जनमानस मे नवयुग के प्रकाश के स्रोत के रूप मे शिक्षा को प्रचारित किया तो उन्होने स्त्री शिक्षा का भी समर्थन किया। जे ई डी. बेथुन ने भारतीय बालिकाओ के जिए 1849 मे एक विद्यालय स्थापित किया बेथुन के देहान्त के पश्चात लार्ड डलहौजी ने इसे अपने हाथ मे ले लिया और बेथुन महाविद्यालय स्त्रियो की शिक्षा का प्रमुख केन्द्र बन गया। स्त्री शिक्षा के क्षेत्रा मे ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का योगदान भी सराहनीय रहा। ये बगाल के कम से कम 35 विद्यालयो से सम्बद्ध थे। स्त्री शिक्षा के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायी ज्योति बा फुले ने, फुले ये जानते थे कि पुरूष शिक्षा से महत्वपूर्ण है स्त्री शिक्षा इस क्षेत्र मे उनका साथ दिया उनकी पत्नि सावित्री बाई ने। 1 जनवरी 1848 को दोनो ने पुणे मे लडकियो का पहला स्कूल खोला जिसके प्रथम वर्ष मे मात्रा 6 लडकिया थी महाराष्ट्र मे ज्योति बा फुले के इस कार्य का धर्मगुरूओ द्वारा खुलकर विरोध किया गया। 15 मई 1848 को उन्होने हरिजन महिलाओं की शिक्षा के हरिजन बस्ती मे एक स्कूल खोला। इस काल मे शिक्षा ही प्रत्युत सम्पूर्ण शिक्षा को लेकर भारतीय समाज सुध ाारक न केवल चितित थे अपितु आदोलित और इनके सतत् प्रयासो के परिणामस्वरूप 1854 मे वुड्स का घोषणापत्र आया जो भारतीय शिक्षा के विकास मे सरकार द्वारा किया गया पहला सगठित प्रयास था। इसके अनुसार तीनों प्रेसीडेन्सियो कलकत्ता, बम्बई, मद्रास मे विश्वविद्यालयो की स्थापना कीगई प्रत्येक प्रान्त मे शिक्षा विभाग बनाये गये तथा प्रादमरी के बजाय माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। सरकार की इस नीति से काफी प्रभावित भी रही। 1882 मे आये हन्टर आयोग ने महिला शिक्षा के सदर्भ मे कहा जहा तक महिलाओ की शिक्षा का सबन्ध है हन्टर आयोग महिला शिक्षा के पर्याप्त प्रबन्ध के अभाव पर खेद प्रकट करता है।

1882 से 1902 के मध्य शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास हुआ किन्तु प्राथमिक शिक्षा की उपेक्षा के कारण इसका विकास नही हो सका। इस काल मे पिछडे वर्गो के शिक्षा के साथ महिला शिक्षा के क्षेत्र मे वृद्धि हुई। द्वैत शासन के अन्तर्गत ब्रिटिश भारत के अधिकाश प्रान्तो मे प्राथमिक शिक्षा से अनिवार्य शिक्षा अधिनियम बनाये गये जिसके अन्तर्गत लडके तथा लडकियो की शिक्षा का आयोजन किया गया। 1922 से 1927 के काल मे प्राथमिक शिक्षा का विस्तार तेज गति से हुआ प्राथमिक विद्यालयो की सख्या जो 1921–22 मे 1,55,017 थी 1926–27 मे बढकर 1,84,829 तक पहुच गयी। इन विद्यालयो मे शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रो की सख्या 1921–22 मे 61,09,752 से बढकर 1926–27 मे 80,17,923 हो गयी। शिक्षा के इस विस्तार के होने के बाद भी महिला शिक्षा का विकास नही दिखाई पडा। 20वी शताब्दी के प्रारम्भ मे हुई जनगणना के अनुसार 5 गावो मे 4 गावो मे कोई स्कूल नही था। प्रति 1000 स्त्रियो में केवल 7 पढना जानती थी। 1935 मे भारत सरकार अधिनियम के अन्तर्गत प्रान्तो मे द्वैत शासन का अंत हो गया और सम्पूर्ण प्रान्तीय प्रशासन को एक मत्रालय के अधीन कर दिया गया। इस कारण शिक्षा के क्षेत्र मे भारी वृद्धि हुई। छात्रो की सख्या 10 वर्षो मे अत्यधिक बढ गई। यह प्रसार जनता मे समान रूप से जागृति के फैलने माध्यमिक शिक्षा के प्रसार पिछडे वर्गो तथा स्त्रियों द्वारा उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा से हुई जिसने सम्पूर्ण समाज मे बदलाव की प्रक्रिया को जन्म दिया। 1947 तक आते आते महिला शिक्षा के द्वार तो खुले किन्तु उन्हे पूर्ण रूप से आत्मसात नही किया गया। सामान्यत लडको की अपेक्षा लडकियो की बुद्धि अधिक तेज होती है परन्तु शरीर मे मस्तिष्क मे मृदुता भी अधिक होती है यही कारण है कि गणित जैसे शुष्क और बुद्धि ग्राहय विषयो मे उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाये शरीर से प्राय. निस्तेज और निर्बल हो जाती है। ऐसी स्त्रियां सम्भवत गृहस्थी में दयनीय स्थिति उत्पन्न कर देती है। सदा बीमार रहने से वे स्वयं तो दुखी रहती है कुटुम्ब भी सुखी नही रहता।

विद्या सुख के लिए होती है परन्तु यहा दुखदायी हो जाती है। दूध और घी अमृत है पर जितना पच सके अन्यथा विष भी बन सकता है। इसी तरह महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय की शिक्षा भी है। इसलिए उच्च शिक्षा देने और दिलाने के लिए माता पिता को लडकी की शरीर की स्थिति का भी ख्याल रखना चाहिये साधारणत मैट्रिक सम्मेलन की प्रथमा अथवा महाविद्यालय की विद्या विनोदनीय की परीक्षा तो प्रत्येक लडकी के लिये एक तरह से जरूरी ही है। घर गृहस्थी चलाने योग्य इतना पर्याप्त अतएव सद्गृहणी होकर ही स्त्रिया विदुषी बने ऐसी ही पढाई की आवश्यकता है। इस दृष्टि से आज की युनिवर्सिटियो की शिक्षा नारी जाति के निरर्थक ही नही अत्यंत हानिकारक भी है। स्त्री शिक्षा के प्रति समाज का यह दृष्टिकोण 1947 की स्थितियो को स्पष्ट करता है। ऐसा इसलिये भी था क्योकि सक्रमण काल मे आधुनिक शिक्षा तथा परम्परागत रहन सहन मे टकराव की स्थिति उत्पन हो चुकी थी। नवीन शिक्षा पद्धति ने

अध्याय : २

1947 का वर्ष भारतीयो के लिए लम्बे सघर्ष की समाप्ति का वर्ष था। 15 अगस्त 1947 का देश 200 वर्षो पुरानी अग्रेजी दासता से मुक्त हुआ। सन् 1947 को हम विश्लेषण के आधार पर दो चरणो मे विभाजित कर सकते हैं।

पहला 15 अगस्त 1947 से पूर्व तथा दूसरा 15 अगस्त 1947 के पश्चात। इन दोनों ही चरणो की अपनी विशिष्ट राजनीतिक, सामाजिक स्थितियॉ ही समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित करती रही है। इनमे महिलाये भी सम्मिलित हैं।

1921 की जनगणना के अनुसार भारत की सम्पूर्ण जनसख्या का 80 प्रतिशत गावो मे रहता था तथा शेष 20 प्रतिशत नगरो मे। इस सम्पूर्ण जनसख्या का लगभग 47 प्रतिशत महिलाएं थी। भारत के गॉव आत्मनिर्भर कृषि प्रधान गॉव हैं। जहॉ स्त्री पुरुष दोनो कार्य करते हैं। भारतीय समाज मे कार्यो का जातिगत वटवारा था। जिसमे पिछले दो दशको मे थोडा परिवर्तन हुआ है।

भारत का ग्रामीण समाज मूल रुप से अशिक्षित समाज था। इसलिए मध यकालीन सामाजिक मूल्यों के प्रचलन से महिलाओं की सामाजिक सक्रियता को बहुसंख्यक समाज की स्वीकृति नहीं थी। यह प्रवृत्ति राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए अच्छी नही थी। इसलिए गॉधी जी ने जब तीसरे चौथे दशक के प्रारम्भिक वर्षो मे क्रमश असहयोग और सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाये तो उन्होंने स्त्री पुरुष दोनो से, समान रुप से विदेशी ब्रिटिश राज के कानूनों को मानने से इन्कार करने का आहवान किया।[1] गॉधी जी ने इस बात को पहले ही समझ लिया था कि महिलाओं के सहयोग से ही निरक्षर किसान का घर स्वतत्रता का गढ बन सकेगा। इसके लिए उन्होने चरित्र के नैतिक नियमो का प्रतिपादन किया।

---

1 चक्रवर्ती रेणु , भारतीय महिला आन्दोलन में कम्युनिस्टों की भूमिका, पृष्ठ –1

स्त्री तथा उसके परिवारीजनो को भयमुक्त किया। सही कारण था कि भारत के इतिहास मे पहली बार महिलाये पुरुषो के कन्धे से कन्धा मिलाकर स्वतत्रता सग्राम के उतर आयी।[1] महिलाओ की सक्रिय सहभागिता को पुरुष समाज की आशिक स्वीकृति मिली। यह अनायास नही था इसके मूल मे 20वी शताब्दी का क्रातिकारी चितन था। यह ऐसा समय था जब सम्पूर्ण विश्व क्रातिकारी स्थितियो का सामना कर रहा था और महिलाओ की सामाजिक भागीदरी को स्वीकृति मिल रही थी। भारत मे यह सक्रियता परिस्थितिजन्य थी, क्योकि राष्ट्रीय आन्दोलन मे महिलाओ की सक्रिय भूमिका तथा राष्ट्रीय नेताओ के सहयोग के बाद भी मूल सामाजिक सरचना तथा जीवन दर्शन मे कोई ढाचागत परिवर्तन नही हुआ। महिलाओ को पुन परम्पराओ और मर्यादाओ मे सिमटकर जीने के उपदेश दिये जाने लगे।[2]

19वी शताब्दी के प्रारम्भिक सुधारक जब भारतीय सभ्रात वर्ग की स्वराज सबधी माग को बुलंद करने मे लगे थे, तब वे ही नारी शिक्षा के विस्तार और विधवा विवाह [3] आदि महिलाओ से सम्बधित समाज सुधरों में भी अग्रणी थे। यही समय था जब विश्व स्तर पर, 19वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध और लगभग सम्पूर्ण 20वी सदी के काल मे सामाजिक चिंतन, मजदूर तथा महिला शोषण की प्रकृति के कारणों पर, उस ऐतिहासिक समय की सीमाओ के अन्दर कुछ प्रमुख चितको जैसे – मार्क्स, उंगेल्स, बेवेल, स्तालिन, लेनिन, माओ क्लारा, रोजा लीबनेख्त आदि द्वारा प्रकाश डाला जा रहा था।[4] फलस्वरूप समाज के लिए चल रहे आन्दोलन मे सुधारवादियों, रूढिवादियों आदि के मध्य स्पष्ट विभाजक रेखाए रही और वैचारिक सघंर्ष जारी रहा। भारत की तत्कालीन परिस्थतियो में भारतीय समाज मे परोक्ष रूप से बडे परिवर्तन की पृष्ठभूमि बनानी प्रारम्भ कर दी थी।

1वही

2 ईश्वर चन्द विद्यासागर के प्रयासों से 1856 में विधवा पुनर्विवाह कारण पास हुआ।

3 कुमुदनीपति, मार्क्सवादी एवं नारी,

4.

शिक्षा का विकास 1947 मे नगरीय स्तर तक ही सीमित था तथा शिक्षा से सम्बन्धित रोजगार विशेषकर महिलाओ की स्थिति, जो शूद्रो से भी खराब थी। इसका कारण था क्योकि महिलाओ का भी सामाजिक स्तरीकरण था।[1] प्रत्येक समुदाय की स्त्री अपने समाज मे दूसरी श्रेणी की नागरिकता रखती थी।[2] लगभग सभी मानवीय अधिकारो से वचित जीवन के प्रत्येक क्षेत्रा मे दया एव करूणा की पात्र थी। जहॉ उच्च तथा मध्यमवर्गीय महिलाओ दहेज, विधवा, सती, बाल–विवाह जैसी कुप्रथाओं की शिकार थी वही निम्न वर्गीय महिलाए पति की प्रताडना, शारीरिक श्रम तथा बलात्कार जैसी भयानक पाशविकता का शिकार थी। जिसे सहन करना इन महिलाओ की नियति थी।

स्वतत्रता प्राप्ति के समय भारतीय समाज की मान्यताये पूर्णरूप से सामतवादी थी। सामती व्यवस्था एक पिरामिड है जो ऊपर से नीचे की ओर फैलती है।[3] यहॉ सारी मूल्य सहिता और व्यवस्था की बनावट यही है। सामंतवादी समाज मे नारी मात्र सम्पत्ति है। तभी तो जर, जोरू और जमीन पुरूष समाज के झगडे की जड है। क्योकि मूलत यह तीनो ही सम्पत्ति है। मूलतः इस समाज मे स्त्री की न कोई जाति है, न नाम है और न इच्छा है। " वह सिर्फ एक बेनाम, बेचेहरा और बेपहचान औरत है।"[4] " पुरूष नारी को उसी तरह सजाता, सुरक्षा देता है और उसकी जिम्मेदारी लेता है, जैसे अपने हाथियो, घोडो और बैलो को सजाता, सॅवारता और सरंक्षण देता है।"[5] इन सामंतवादी जजीरो मे महिलाये विशेष रूप से जकडी रही क्योकि यह एक वैचारिक नियत्रण भी था जो युद्ध, धर्म तथा अतिपितृसत्तावाद के युग्म से उत्पन्न हुआ था। जिससे भय, आस्था और सरक्षण की मनोवृत्ति का विकास हुआ। इस अवस्था ने महिलाओं को पालतू बना दिया।[6]

---

1 ड्रीकुले डी.एय वुमन इन पालिटिकल थिमोरी पृष्ठ 52
2 बउमा सिमोन, द सेकेन्ड सेक्स के प्रभा खेतान द्वारा अनुदित पुस्तक के पृष्ठ -20 से
3 जैन अरविन्द, औरत होने की सजा, पृष्ठ 19 राजकमल प्रकाशन
4 16 अप्रैल 1988 के टाइम्स ऑफ इण्डिया में इस्लाम ग्रहण करने तथा पाकिस्तान में 6 हफ्ते के पश्चात लिडा बर्क फेंक लिखती है पर्दा पुरूषों का अविष्कार है उनका भय हमारी जान का बोझ बन गया है।
5 जैन अरविन्छ
6 सिह 67 श्रीनाथ, आदर्शनारी, कल्याण नारी अंक 1947

महिलाओ ने पारिवारिक और सामाजिक दोनो ही स्तरो पर हो रहे महिला शोषण को राष्ट्रीय बहस का विषय बनाया।[1] राष्ट्रीय आन्दोलन मे निभाई गई उनकी सक्रिय भूमिका ने उन्हे हर प्रकार के शोषण और परतत्रता के प्रति न केवल सचेत किया था बल्कि अपने सामाजिक दायित्वो तथा अधिकारो के प्रति नई जाग्रति प्रदान की थी। बीसवी शताब्दी मे लैगिक समानता के प्रति महिलाओ की जागरूकता को चिन्हित किया।[2] विश्वस्तर पर हो रही वैचारिक क्रान्ति का असर भारत पर पडना स्वाभाविक था।, पडा भी, किन्तु स्वभावत रूढिवादी और बन्द समाज होने के कारण स्थितिया 1947 तक यथावत बनी रही।

1947 मे मिली स्वतत्रता देश के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी। बीते वर्षों मे मिले आत्मविश्वास तथा नये नैतिक समाजिक मूल्यो के साथ हमे एक नवीन राष्ट् का निर्माण करना था। यह स्वतंत्रता हमने अनेक विसगतियो के साथ प्राप्त की थी। इस मुक्ति–सघर्ष के साथ हमने सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक स्तर पर बहुत कुछ ग्रहण किया। हमने स्वतत्रता के वास्तविक अर्थ को भी समझा तथा देश के भीतर चल रहे आन्तरिक आन्दोलनो का भी नेतृत्व किया। इन आन्दोलनों मे से कई हमारी स्वतत्रता पर प्रश्न चिन्ह लगाते थे। इनमे प्रमुख था दलित आन्दोलन और नारी आन्दोलन। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात भी यह प्रश्न यथावत बने रहे। सम्पूर्ण देश मे महिलाओ औरा दलितो की स्थिति विचारणीय थी।

---

1 वीना मजुमदार, चेंजिग टर्मस ऑफ पालिटिकल डिसकोर्स, इकोनामिक एण्ड पालिटिकल वीकली, जुलाई 22 1995ए

2 वही

गॉधी ने इस सामतवादी रूढिवादी लोगों के प्रति अपने विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त किये –

" यदि मेरा जन्म नारी के रूप मे हुआ होता तो मै पुरूष के इस आडम्बर के विरूद्ध कि नारी का जन्म उसकी क्रीडा वस्तु बनने के लिए हुआ है, विद्रोह मे उठ खडा होता।" [1]

गॉधी के इन वक्तव्यो ने, साथ ही महिलाओ के साहस ने एक शक्तिशाली आन्दोलन की आधारशिला रखी।

वस्तुत यह ऐसा समय है जब हमे राष्ट् निर्माण की प्रक्रिया को नये अर्थो से जोडना था। ऐसे समय मे महिलाओ की सक्रिय भागीदारी भारत के इतिहास मे एक नये अध्याय का प्रारम्भ था।

परिवार –

परिवार जो किसी भी समाज की प्राथमिक इकाई है। सबसे अधिक पितृसत्तात्मक है।[2] पुरुष इस संस्था का मुखिया है। इसी के भीतर हम आने वाली पीढियो को पितृसत्तात्मक पूल्य देने का कार्य करते हैं। परिवार के भीतर ही हम सबसे पहले ऊच–नीच पदानुक्रम और लिग आधारित भेदभाव का पठा पढते हैं। परिवार अपने आइने मे न केवल समाजिक व्यवस्था को प्रतिबितम्बत करता है और बच्चों को उसे मानने का पाठ पढाता है बल्कि परिवार निरतर इस व्यवस्था को गढता और मजबूत करता है।" [3]

---

1 चक्रवर्ती रेणु की पुस्तक, भारतीय महिला आन्दोलन में कम्युनिस्टों की भूमिका
2 मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? तथा वुमेन इन पॉलिटिकल थॉट पृष्ट –10
3 लर्नर गर्डा, द क्रियेशन ऑफ पेट्रीयार्की आक्सफोर्ड एण्ड न्यूयार्क

परिवार का व्यक्ति के विकास मे सकारात्मक और नकारात्मक रहा कि वह जडवत हो गया। इसका कारण था [1] इन सयुक्त परिवारो पर मध्यकालीन तथा धार्मिक मान्यताओ की पकड। भारत मे प्राय सयुक्त परिवार की ही प्रथा रही जिसमे परिवार के सगगठन को बनाये रखने के लिए मध्यमवर्गीय महिलाओ को विशेषकर लम्बे समय हक अपने मूलभूत अधिकारो से वचित रहना पडा है।

1947 तक भारत मे सयुक्त परिवार ही थे। 1947 की सामाजिक स्थितियो को जानने के लिए कल्याण के कुछ लेखो के अश

" हमारे सयुक्त परिवारो की प्रथा ने लोकत और धर्मत प्रत्येक स्त्री के आजीवन भरण–पोषण का अनिवार्य भार उसके पिता–माता के वश पर रखता था और सभी पुरूषो को विवाह करने का आदेश होने के कारण प्राय सभी अबलाओ को पुरूष के साथ विषम प्रतियोगिता मे उतर कर धनोपार्जन के क्षेत्रा मे अपमान और अत्याचार नही सहन करना पडता था। सभी स्त्रियो को प्रथम यौवन से ही – जिस समय इद्रिया बहुत ही प्रबल होती है। कामोपभोग की सुविधा होने से प्रकट या अप्रकट रूप से वेश्या वृत्ति नही करनी पडती।" [2]

" यद्यपि कहने सुनने को अग्रेज इस देश को छोडकर चले गये, तथापि अग्रेजियत से हमारा पिड अभी नही छूटा ओर न शीघ्र छूटने की आशा है। सम्पादक महोदय क्षमा करना। हमारी धारणा तो यह है कि अग्रेजियत के प्रभाव से तो आप भी नही बच सके। यदि ऐसा न होता, तो नारी अक की योजना का कार्य आप क्यू करते? हमारी आर्य सस्कृति मे तो नारी का स्वतत्र अस्तित्व ही नही माना गया है।"[3]

---

1 सयुक्त परिवार का अर्थ है कई पीढियों तक एक साथ, एक परिवार के रूप में रहना।
2 चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद जी, आधुनिक नारी, कल्याण नारी विशेषांक पृष्ठ –144
3 मित्रा श्री चारुचन्द्र जी (एटर्नी एट ला), नारी . पाश्चात्य समाज में और हिन्दू समाज में, कल्याण नारी अक पृष्ठ 201 गीता प्रेस, गोरखपुर

उन दो उदाहरणो से यह स्पष्ट है कि 1947 तक भारतीय जनमानस अपने पौराणिक मापदण्डो से निकल कर नयी दिशा मे कदम रखने को तैयार नही था। इसके दो परिणाम हुए – पहला यह कि नारी उद्धार से सम्बन्धित अधिकांश प्रश्न सीमित रहे। दूसरी तरफ धर्म तथा समाज के भय ने सुधारको को आगे बढने से रोक दिया। यह तत्कालीन मध्यमवर्गीय तथा उच्च वर्गीय महिलाओ की परिवारिक स्थिति की जो चेतना तथा विकास के साथ गहरे मथन की स्थिति के बीच फसा हुआ था।

दूसरी तरफ निम्नवर्गीय परिवारो मे महिलाओ की स्थिति भी विचारणनीय थी। जहा मध्यमवर्गीय महिलाओ को समातवादी मूल्यो की जकडन मे मानसिक उत्पीडना तथा अनेक अन्य शोषणो जैसे – दहेज, सती, बाल–हत्या आदि के साथ जीना पडता था। वही निम्नवर्गीय परिवारो मे महिलाओ के शारीरिक तथा मानसिक शोषण दोनो को ही देखा जा सकता है। परिवार के पोषण के लिए बाहर से कमा कर लाने तथा उसे भोजन के रूप मे परिवार मे सामने प्रस्तुत करने तक के अन्तराल में निम्न वर्गीय तथा मजदूर मिहलाओ को अने क पारिवारिक तथा सामाजिक त्रासिदियो से गुजरना पडता है। इसीलिए परिवार जहा व्यक्ति की सुरक्षा तथा व्यक्ति के विकास की गारन्टी समझे जाते है वही महिलाओ के व्यक्तित्व के विकास ही नही अपितु मूलभूत आवश्यक्ताए उपलब्ध कराने मे नाकारा साबित रहे है।

परिक्कर कहते है कि भारत की सामाजिक संरचना दो मूलभूत तत्वो के पीछे घूमती रही है, यह है जाति तथा सयुक्त परिवार।धर्म को छोडकर अन्य सबकुछ उन दो सस्थाओ से जुडा हुआ है।

परिवार, विवाह, महिलाओ की स्थिति शिक्षा, यह सभी तत्व उसी मूलभूत सरचना के अग है। इसीलिए विवाह महिलाओ की स्थिति तथा शिक्षा भारतीय समाज के सदर्भ मे अत्यन्त महत्वपूर्ण है। परिवार चूकि सभी क्रिया–कलापो का केन्द्र बिन्दु है, इसीलिए समस्त गतिविधिया यही से सचालित होती है।

भारतीय गॉवो की जातिगत स्थितिया ही मध्यम वर्ग, निम्न मध्यमवर्ग तथा निम्न वर्ग का निर्धारण करती है। उ0प्र0 भारतीय जाति व्यवस्था का गढ है। जहा से इस जटिल सस्कृति का फैलाव भारत के विभिन्न क्षेत्रो मे समय–समय पर होता रहा है।

विवाह :–

भारत मे हिन्दू मान्यताओ के अन्तर्गत विवाह जन्म जन्मान्तरो का बन्धन है। जिसे सहजता से तोडा नही जा सकता यह मूल रूप से हमारी मान्यता का अग है और यह मान्यता 1947 तक अपने मूलस्वरूप मे विद्यमान थी। पत्नी का समस्त चिन्तन श्रगार तथा जीवन पति के लिए ही था। हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 [1] के पूर्व हिन्दू विवाह की जो शर्ते थी वह 1947 की स्थितियो को स्पष्ट करती है। इन शर्तो मे–

1 दोनो पक्ष का हिन्दू होना आवश्यक था।[2]

2 विभिन्न न्यायालयों द्वारा अनुलोम तथा प्रतिलोम विवाह अमान्य थे।[3]

3 वर वधू को भिन्न गोत्र एव प्रवर का होना आवश्यक था किन्तु 1946 मे केन्द्रीय अधिनियम पारित करके यह उपबन्ध किया गया कि कोई विवाह इसीलिए अवैध नही होगा कि विवाह के पक्षकार समान गोत्र, प्रवर या वर्ण वाले है।[4]

---

1 1955 हिन्दू विवाह अधिनियम के पश्चात वैवाहिक सस्कार में अनेक अवै[illegible] परिवर्तन किये गये।

2 हिन्दू विधि, पृष्ठ 25

3 वही

4 वही

4 हिन्दू पुरूष एक से अधिक स्त्रियो से विवाह कर सकता था, किन्तु स्त्री मात्र एक पति से विवाह कर सकती है।[1]

5 विवाह के पक्षकारो को सपिण्ड सिद्धान्त के अन्तर्गत सम्बन्धित न होना आवश्यक था।[2]

हिन्दू विवाह के लिए सामान्यत आयु का निर्धारण नही था।[1] पुरूषो का विवाह लगभग 25 वर्ष की अवस्था मे किये जाने के सकेत मिलते थे। जबकि कन्या का विवाह 8–12 वर्ष मे करना पुण्य कर्म करना माना जाता था। हिन्दू विवाह चूकि धार्मिक कृत था अत शारीरिक रूप से अक्षम पुरूष भी विवाह कर सकते थे, किन्तु आधुनिक युग मे ऐसे व्यक्तियो के साथ विवाह प्रभावहीन माना गया है।[2] मानसिक रूप से अक्षम व्यक्तियो के साथ भी विवाह होते थे। जिसे सामाजिक मान्यता प्राप्त थी, किन्तु प्रिवी कौसिल ने मत व्यक्त किया कि गभीर कोटि की मानसिक अक्षता होने पर विवाह अविधिमान्य होगा।[3]

इन सामाजिक मान्यताओ और स्थितियो के विपरीत समाज मे नारी को लेकर चल रहे चिन्तन ने भी इसी काल मे अपने लिये वैचारिक धरातल तलाशना प्रारम्भ कर दिया। फलस्वरूप भी आन्दोलनो को लेकर दो धाराए स्पष्ट रूप से परिलक्षित होने लगी। 1 परम्परागत सामती विचारधाराए 2 आधुनिक समाजवादी विचारधारा।

पहली विचारधारा देश की बहुसख्यक जनता की विचारधारा थी जिसका नेतृत्व हमारे धार्मिक पुरोहित कर रहे थे तथा दूसरी विचारधारा का नेतृत्व सिर्फ शिक्षित (उनका प्रतिशत भी कम था) तथा नगरीय लोगो पर ही था। फलस्वरूप भारत मे स्वतत्रता प्राप्ति तक बाल विवाह की प्रथा विद्यमान रही। बाल विवाह की परम्परा का परिवहन आज भी भारत की कई जातियो तथा क्षेत्रो मे देखने को मिलता है।[4]

---

1 बाल विवाह अधिनियम 1929 जो राय हरविलास शारदा बहादुर द्वारा सरकार के समक्ष प्रस्तावित किया गया था, शारदा एक्ट कहलाता है।

2 जैन अरविन्द, औरत होने की सजा पृष्ठ 49 राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली तथा हिन्दू विधि पृष्ठ - 36

3 वही पृष्ठ 49

4 हिन्दू विधि तथा जैन अरविन्द के औरत होने की सजा पृष्ठ 49 तथा पृष्ठ 36

भारतीय जीवन दर्शन मे विवाह चूकि धार्मिक कृत्य है इसलिए वह नारी के विकास क्रम को पूर्ण रूप से बाधित कर देता है। अत बाल विवाह नारी विकास को किसी तरह पनपने का अवसर नही देता। जहॉ तक पुरूषो का सम्बन्ध है विवाह उनके विकास मे किसी तरह की बाधा नही पहुँचाते। वस्तुत विवाह कन्या के लिए भी बाधा स्वरूप नही होना चाहिए, किन्तु हमारी परम्परागत विचारधारा मे कन्यादान की वस्तु है।[1] इसलिए वह पशु समान है। मेवात के लोक कवि सादल्ला कहते है–

बाबल तेरा देस मे, एक बेटी एक बैल
हाथ पकड के दीना जामे, परदेसी के गैल। *
सादल्ला (मेवाती जनकवि)

" हर साल अक्षय तृतीय यानि अखा तीज के मगलकारी दिन हजारो अबोध और नाबालिग (दूध पीते समेत) बच्चो को विवाह के पवित्र बंधन मे बॉध दिया जाता है। * "बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1929 तथा हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 5 (111) मे विवाह के लिए अन्य आवश्यक शर्तो मे से एक यह भी है कि " विवाह के समय दूल्हे की उम्र 21 साल और दुल्हन 18 साल से अधिक होनी चाहिए।"

विवाह मूल रूप से एक व्यक्तिगत प्रश्न है किन्तु मध्यकालीन मान्यताओ के अन्तर्गत यह एक धार्मिक प्रश्न है।[2] मध्यकालीन मान्यताओ मे जकडे पुरूषो का सामाजिक वैचारिक स्तर भी अच्छा नही कहा जा सकता।

---

1 बाशम ए. एल, अद्भुत भारत पृष्ठ
2 अहमद अकील, मुस्लिम विधि पृष्ठ 35 (निकाह)
~~3 वही पृष्ठ 36~~

भारत मे यह मान्यता पुरूष के अहकार और दभ को इतना अधिक विकसित कर देती है कि वह तर्क पूर्ण वैचारिक प्रश्नो पर भी रूढिवादी धर्म का अनुयायी ही बना रहता है।

जो समाज के विकास मे बाधा उत्पन्न करती है यह बाधा विवाह जैसे प्रश्न पर स्पष्ट रूप से दिखायी पडती है। सामती परिस्थितियो के अन्तर्गत महिलाओ को हजारो तरह के बन्धनो तथा अवरोधो मे रखा गया और सहिताओ, विशेषकर मनु सहिता के धार्मिक समादेशो को उद्धृत करके पुरूषो के साथ उनकी असमानता का प्रचार किया गया एव उसे वैध बनाया गया। लडकी को बचपन मे पिता के अधीन युवावस्था मे पति के अधीन और वृद्धावस्था मे पुत्र के अधीन रहना होता है। इस उक्ति की पुनरावृत्ति वास्तव मे महिलाओ की अपमानजनक स्थिति को ही प्रतिबिम्बित करती है। सामतवाद महिलाओ को या तो देवी के रूप मे। मानवीय मूल्यो के आधार पर उसका मूल्याकन एक मानव के रूप मे कही भी स्वीकृत नही है। मनृ स्मृति जिसका चलन हमे आज तक हिन्दू विवाह व्यवस्था मे देखने को मिलता है, जिसमें स्त्री सदा ही पिता, पति और पुत्र की आश्रिता मानी गयी हो – को हम कैसे किसी प्रगतिशील समाज के निर्माण से जोड सकते है? कुछ ऐसी ही स्थिति मुस्लिम समाज की भी है।

विवाह एक सस्था है। " यह सस्था मानव सभ्यता का आधार है।" कुरान मे लिखा है " हमने पुरूषो को स्त्रियोपर हाकिम (अधिकारी) बनाकर भेजा है।"[4]

पैगम्बर ने कहा – " पुरूष स्त्रियो से विवाह उनकी धर्मनिष्ठा, सम्पत्ति या उनके सौन्दर्य के लिए करते है, परन्तु उन्हे विवाह केवल धर्मनिष्ठा के लिए करना चाहिए।"[5]

---

4 वही पृष्ठ 60

5 खालिद रशीद मुस्लिम विधि, पृष्ठ 54

मुस्लिम विधि मे अवज्ञाकारिणी पत्नी के विरूद्ध पति को निम्न उपचार प्राप्त है 1 विवाह विच्छेद, 2 निर्वाह–वृत्ति देने से इन्कार, 3 दाम्पत्य अधिकारो के पुनर्स्थापन के लिए दीवानी वाद ।[1]

ये तीनो ही अवस्थाये पुरूष समाज के हक मे है, जहॉ तर्क करने के लिए कुछ भी शेष नही बचा है। वस्तुत मुस्लिम विवाह एक सविदा है किन्तु इसका सामाजिक पक्ष भी है।[2]

स्वतत्रता प्राप्ति के 50 वर्षो के बाद भी कुछ अपवादो को छोडकर विवाह एक धार्मिक सस्कार ही है। धर्म और रूढिवादिता से जुडे सस्कारो को प्रगतिशील से जोडना बहुत ही दुष्कर कार्य है।

एक निष्ठ विवाह किसी भी समाज के सभ्यता का सूचक है, किन्तु यह एक निष्ठता भारतीय ही नही लगभग सभी समाजो मे सिफ महिलाओ के चारित्रिक उच्चता का बोधक है। इसलिए जो लोग विवाह सस्था को समय और काल से काटकर देखते है वह इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि पौराणिक काल मे महिलाओ को सम्मान हासिल था। इसको स्थापित करने के लिए उन्हे भारतीय दर्शन से शिव और शक्ति, पुरूष और प्रकृति जैसे बिम्बो का सहारा लेना पडता है। यह विचार प्रक्रिया कुल मिलाकर महिलाओ के विकासक्रम को पीछे ढकेलने का कार्य करती है। यह एक प्रतिगामी चिन्तन है। जो 1947 से लेकर आज तक समान रूप से बना रहा है। अधिकतर लोग नारी के ऐतिहासिक विकास क्रम को जो सम्मानजनक नही दिखता, को नकारने का प्रयास करते है।

---

1. अकील अहमद मुस्लिम विधि पृष्ठ - 85.
2. वही पृष्ठ - 60

दहेज :–

भारतीय समाज की वेदकालीन सरचना के काल से ही दहेज को सामाजिक मान्यता प्राप्त थी। वेदो मे स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कन्या के पिता को उपहार देना चाहिए।[1] राजा जनक ने अपनी प्रिय पुत्री सीता के विवाहोत्सव पर प्रभूत कन्या धन दिया था।[2] तत्कालीन समाज मे दहेज का क्या दार्शनिक आधार था यह एक विशद विवेचना का विषय है, किन्तु कालान्तर मे यह प्रथा समाज के लिए अभिषाप बन गयी। स्वेच्छा से दिया जाने वाला उपहार वर पक्ष की आवश्यक्ता बन गया। भारतीय समाज मे इस कुरीति ने अपनी जडे स्वतत्रता पूर्व से लेकर आज तक बहुत सुदृढता से जमा ली है। आकडे बताते है कि दहेज के कारण मरने वाली नववधुओ की सख्या उत्तरोत्तर बढ रही है।[3] भारतीय समाज की यह प्रथा भारतीय समाज के आन्तरिक विरोधाभासो को परिभाषित करती है। जहॉ विवाह एक धार्मिक कृत्य था वही दहेज विरोध के अनेक रूप प्रस्तुत करता है। विवाह दो आत्माओ के मिलन, जन्म – जन्मान्तर की बात करता है। वही नववधुओ का उत्पीडन, स्त्रियो की त्रासद स्थितियॉ शास्त्रो मे की गयी महिलाओ के महिमा मण्डन की पोल खोलता है। पुत्री के पिता के रूप मे पुरूष यह त्रासदी सहकर भी इसे बनाये रखने मे अपना सक्रिय सहयोग देता रहा है।[4] हमे यह नहीं भूलना चाहिए कि इस समाज मे हमने शोषण तथा उत्पीडन की व्यवस्थाये गढी है।[5] हमारे परिवार क्रूरता और दासता के पुराने नियमो से जकडे हुए है।

सामती समाज की जकडन ने स्त्री–पुरूष सम्बन्धो को स्वतंत्र मानवीय सम्बन्धो के रूप मे न तो गढने की कोशिश की और न ही उन्हे सहज रूप से विकसित ही होने दिया। परिणाम स्वरूप नारी को उसकी मूलभूत नैसर्गिक आवश्यक्ताओ के लिए, जिससे वो सृष्टि के सृजन मे सहायक बन सके की कीमत दहेज के रूप मे देनी पडती है।

---

1 ऋग्वेद वेद

2 रामायण

3 पुलिस रिकार्ड से प्राप्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि, पिछले 5 वर्षों में दहेज हत्याओं में 8% की वृद्धि हुई है जिनमें अ[illegible] ग्रामीण [illegible]

4 निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी, सरोज स्मृति 'राग विराग' पृष्ठ 89 देखें निराला ने समस्त रूढ़िवादी नियमों को तोड़कर अकेले तर्क के बल पर समस्त कार्य करने का निश्चय लिया।

5 भसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? पृष्ठ –

हम अपनी परम्पराओ, मर्यादाओ, नारी की यौन शुचिता, आदर्शो का जो जाल बुनते रहे है दहेज उन सभी तथाकथित मानदण्डो की सामाजिक हैसियत का निर्धारक है। यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था का सबसे घृणित रूप है।

लडकी के जन्म से ही उसके चारो ओर आदर्शो का जाल बुन दिया जाता है, वह आदर्श – विवाह, सुखी दाम्पत्य और महान – वात्सल्य की दुनिया मे इस कदर खो जाती है कि उन्हे अपने अस्तित्व सामाजिक उत्तरदायित्वो तक का ज्ञान नही रहता। दहेज जो मूलरूप से पिता की सम्पत्ति में पुत्री का हिस्सा है, का विषय भी अजनबी लोगो के स्वाभिमान का प्रश्न बन जाता है। इस विषय पर कन्या की असहमति परिवार के लिए कलक साबित होती है।

वर्ष 1947 मे दहेज से सम्बन्धित नववधुओ के मृत्यु के आकडे स्पष्ट रूप से देखने को नही मिलते, किन्तु विभिन्न अन्य कारणो से महिलाओ की मृत्यु के आकडे आसानी से देखे जा सकते हैं इसमे आत्महत्या तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी आंकडे उपलब्ध है। दहेज चूकि आर्थिक सकट के रूप मे भारतीय समाज मे जाना जाने लगा इसलिए इसे पुत्री के जन्म से जोडकर देखा जाने लगा। इसने नारी के उत्पीडन मे एक नये अध्याय की शुरूआत की। यह उत्पीडन था बालिका शिशु की हत्या। यह कुरीति दहेज की देन थी और आज भी है। यह प्रथा कथित रूप से बगाल तथा राजपुताने मे प्रचलित थी किन्तु इसका शिकार लगभग सम्पूर्ण भारत था। सपीहन सिद्धान्त की परिकल्पना वाले इस देश मे जहॉ अण्ड, पिण्ड, ब्रहमाण्ड को एक रूप मे स्वीकार किया गया था वहॉ एक बालिका से उसके जीने के अधिकार भी छीन लिये जाते थे। यह प्रथा इतनी सहज और स्वाभाविक थी कि इसे एक धार्मिक अनुष्ठान के रूप मे सम्पन्न किया जाता था। आज भी यह प्रथा अपने बदले हुए स्वरूप मे भ्रूण हत्या के रूप मे विद्यमान है।

1947 से लेकर आज तक के मध्य बालिका जन्म को लेकर वैचारिक परिवर्तन सिर्फ इतना हुआ है कि तब बालिका शिशु हत्या मे मॉ का सहयोग न के बराबर था किन्तु आज के वैज्ञानिक युग मे यह भ्रूण हत्या माता पिता के सम्मिलित प्रयासो से की जाती है । साधारणतया हमारी महिलाये आर्थिक रूप से परतत्र है सामाजिक उत्पादन मे उनका सरोकार अधिकाश मामलो मे टूटा हुआ है। इसीलिए घरो के अन्दर गृहदासी का जीवन व्यतीत करना उनकी नियति बन गयी है। दहेज के नाम पर होने वाली मौते इसका उदाहरण है।

विधवाये –

भारतीय समाज मे विधवाओ की स्थिति भी समाज के पितृसत्तात्मक स्वरूप के ऐतिहासिक जटिल तथा असगत स्वरूप को प्रकट करती है। पति की मृत्यु के पश्चात स्त्री जीवन अनेक धार्मिक तथा सामाजिक प्रतिबन्धो के साथ नये सिरे से प्रारम्भ होता था। यह शिशु हत्या, बाल विवाह और दहेज के पश्चात स्त्री के जीवन कृम की विकास प्रक्रिया थी। भारतीय हिन्दू समाज विधवाओ को जीवन की आवश्यक शर्तो से भी वचित रखता था। विधवाओ की स्थिति के 1947 सम्बन्ध मे एक विधवा द्वारा लिखे लेख का अश

" आज की विधवा की क्या दशा है – जरा सोचिए । बारह चौदह वर्ष की सुकुमार अवस्था, जिसे ब्याह क्या वस्तु है – इसका भी पता नही जो खेल कूद मे रहने योग्य है। सास –ससुर से जहॉ प्यार मिलना चाहिए वहॉ वह दुत्कारी जाती हैं पिशाचनी है, आते ही हमारे बच्चे को खा गयी, रॉड कुभागिनी है। "[1]

---

1 कल्याण नारी अक, दु खमय विधवा जीवन ले. एक बहन पृष्ठ 216

" हिलना–मिलना, हॅसी – खुशी, त्यौहार– पर्व, विवाह–शादी सभी से बहिष्कार तथा बात – बात मे कडाई। किसी मगल कार्य मे परछाई भी न पडे। सामने दीख गयी तो ससुर – देवर ही नही पिता और भाई का भी शुभ यात्रा मुहुर्त बिगड गया। साधवा के सामने आ गयी तो मानो उसका सोहाग ही लूट रही है। "[1] " इस प्रकार स्नेह शून्य मानवता रहित दारूण दुर्व्यवहार के साथ ही नीच वृत्ति के दुराचारी पुरूषो की कामदृष्टि का शिकार भी उसको होना पडता है। [2]

हिन्दू विधवा के प्रतिबन्धों में –

श्रगार, धार्मिक कृत्य, सामान्य सामाजिक अवसरो पर उपस्थिति – आदि शामिल थे। वैधव्य को गॉधी जैसे विचारक ने भी " हिन्दू धर्म का आभूषण माना है। " गॉधी जैसे विचारक की वैधव्य के प्रति यह दृष्टि उनके उन रूढियादी विचारो तथा सस्कारो को प्रकट करती है जो भारतीय साहित्य तथा दर्शन मे भरे पडे है। जबकि वैधव्य की भयावहता यह थी कि बगाल से आयी विधवाओ से वृन्दावन के मदिर भरे पडे थे और आज भी है।

सफेद वस्त्र, सिर मुडाये, हाथ मे एक कटोरा लिए – अच्छे और सभ्रात घरो की स्त्रिया भी वृन्दावन के आश्रमो मे अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिए विवश थी। इनमें कुछ घरो से निकाली तथा अधिकाश वे थी जो समाज में तिरस्कृत होने के भय से स्वत इन आश्रमो को चुनती थी। इसमे सबसे अधिक शोचनीय दशा युवा विधवाओ की थी जो दोहरे सामाजिक मानदण्डो का शिकार होती थी ।

---

1 वही

2 वही

ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के प्रयासो से 1856 मे ही विधवा पुर्नविवाह कानून पास हो गया था किन्तु इसे सामाजिक मान्यता न के बराबर मिल थी। बगाल महाराष्ट् आदि जगहो पर विधवाओ की स्थिति बहुत ज्यादा खराब थी। एक तरफ जहॉ पुरूषो को कई विवाह करने की सामाजिक छूट थी वही स्त्री के लिए वैधव्य को स्वीकार करना उसकी नियति थी। सदियो से परिवार के नाम पर, सम्बन्धो की मधुरता के नाम पर, प्रेम व करूणा के नाम हमेशा महिलाओ से बलिदान मागा गया है और इस बहाने उसे दोयम दर्जे का नागरिक बनाकर पहलकदमी से वचित रखा गया। यह महिला की गुलाम स्थिति का सूचक है जो भारतीय समाज मे साहित्य तथा धार्मिक नियत्रण द्वारा विद्यमान था। विधवाओ के चरित्र को मानस मे बहुत अधिक महिमा मण्डित किया गया जिसने भारतीय समाज के सभी वर्गो पर अपना प्रभाव बनाया।

स्त्री की मानसिक, शारीरिक और आर्थिक सीमाये जो बचपन से निर्धारित थी, उसे तोड सकने की क्षमता स्त्री ने स्वतत्रता प्राप्ति तक हासिल नही की थी। ऐसा नही था कि इस परिस्थिति से लडने की क्षमता स्त्री के पास नही थी बल्कि पितृसत्तात्मक समाज ने उसके उपर परिस्थितियो का ऐसा बोझ डाल दिया था जिससे लड पाना केवल उनकी इच्छा पर निर्भर नही था। यह एक सामाजिक प्रश्न था जिससे सामूहिक प्रयासो से ही निपटा जा सकता था। वास्तव मे इतिहास के किसी विशेष समय मे विशेष भौतिक परिस्थिति उपस्थित हमारे आत्मगत प्रयास की सीमा निर्धारित करती हैं नारी के पैदा होते ही उसके पालन पोषण मे परिवार व समाज भेदभाव बरतने लगता है। उसके जीवन को पितृसत्तात्मक मूल्यो के अनुरूप गढने लगता है उसका विवाहित जीवन परिवार मे पितृसत्ता के विरूद्ध क्षण क्षण सघर्ष मे बदल जाता है।

स्त्री की सामाजिक भूमिका ओर उसकी एक स्त्री के रूप मे स्वाभाविक भूमिका जीवन पर्यन्त टकराती रहती है। इसलिए मार्क्स नारी मुक्ति को आर्थिक आजादी से जोडकर देखता है। मार्क्स की अवधारणा के अनुसार – औरत का सामाजिक व्यवहार, उसकी मानसिक अवस्थाये उसके सस्कार, जीवन का हर प्रत्यक्ष – अप्रत्यक्ष आयाम इस बात पर निर्भर करता है कि किसी विशेष अवधि मे उसके आर्थिक सम्बन्ध किस प्रकार के है। यही प्रमुख रूप से उस अवधि के राजनीतिक सामाजिक स्थितियो का निर्धारण करता है जो स्त्री के जीवन को प्रभावित करती हैं मानव विकास मे आर्थिक अवस्था एक आधारभूत तत्व है जो व्यक्ति के विकास को निर्धारित करता है किन्तु इसके साथ ही नैतिक सामाजिक सास्कृतिक व्यवस्थाओ मे भी परिवर्तन करने की जरूरत है।

रोजगार –

आज हम एक सक्राति काल से गुजर रहे है। जबकि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कई प्रकार के द्रुतगामी परिवर्तन हो रहे है। एक हमाने मे विशेषरूप से गावो मे भारतीय नारी के लिए कहा जाता था कि " समय उसका अपना है ओर इतिहास उसकी अपनी लय के अनुसार ही चलता है। बीसवी सदी की घडियो के साथ उसके समय और इतिहास का कोई मेल नही है।" यह बात पिछले कई सालो तक सही हो सकती थी लेकिन आज अधिकाश स्त्रियो के लिए यहा तक कि गावो की स्त्रियो के लिए भी लागू नही होती।

आधुनिक परिवार की अन्यान्यक्रिया के सही मूल्याकन मे एक और महत्वपूर्ण घटक घर के बाहर रोजगार मे लगा हुआ स्त्रियो का प्रतिशत है।1 औद्यौगिक व्यवस्था के विकसित होने के पहले स्त्रियॉ घर के भीतर की नौकरिया करती थी, जैसे – खाना बनाना, नौकरानी के रूप मे घर का अन्य कार्य, कृषि मजदूरी तथा अध्यापन कार्य। जब उन्होने आरम्भ मे उद्योग मे प्रवेश किया तो उनके कार्य घर मे सीखे हुए कामो से मिलते जुलते थे।

प्रथम विश्व युद्ध के समय थोडे समय के लिए, स्त्रियो के लिए रोजगारी के बहुत से क्षेत्र खुल गये ओर दूसरा विश्व युद्ध आने पर सभी स्तरो पर उनके लिए अभूतपूर्व अवसर थे। वे मोटर–कारे चलाने लगी तथा महत्वपूर्ण प्रशासनिक पदो पर पहुच गयी। जअ सैनिक कर्मचारी घर लौटे तो बहुत सी स्त्रियों ने नौकरी छोड दी फिर भी 1940 की तुलना मे सेवारत स्त्रियों की संख्या कही अधिक रही । इन परिस्थितियो से स्त्रियो की घर के अन्दर भूमिका मे अभूतपूर्व परिवर्तन हुए है। स्त्रियो की इस बदलती हुई पद स्थिति से पारस्परिक सम्बन्धो का पूरा प्रतिमान ही बदल गया ।

भारत के भीतर इन बदलती परिस्थितियो का प्रभाव बहुत जटिल ढग से हुआ। भारत मे विकास की कई सतहे थी विशेषकर हिन्दी क्षेत्रो मे उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो मे यह परिवर्तन बहुत धीमी गति से हुआ।

---

1 डा दास परिमल , 11 अगस्त मगलवार सन 1959 'भारत', पेज 8

2 ब्राउन शैक्षिक सामाजिक विज्ञान, पेज 254

अध्याय : 3

दूसरे विश्वयुद्ध मे विजय के बाद सयुक्त राष्ट्र सघ की स्थापना और उपनिवेशो की समाप्ति के पश्चात स्वतत्र राज्यो का उदय महिलाओ की सामाजिक आर्थिक एव राजनीतिक स्वतत्रता की यात्रा मे कुछ महत्वपूर्ण पडाव थे।[1] विकास मे महिलाओ की भूमिका का सीधा सम्बन्ध व्यापक सामाजिक आर्थिक विकास के लक्ष्य से है और यह सभी समाजो और राष्ट्रो के विकास के लिए अनिवार्य है।[2] 1947 मे जब देश स्वतत्र हुआ उस समय भारत की स्थिति एक नवस्वतत्र राष्ट्र की थी। जिसे अपने उपलब्ध ससाधनो के माध्यम से अपना समग्र विकास करना था। राष्ट् के समक्ष निर्माण की प्रक्रिया के प्रारम्भ की समस्या थी। इसलिए किसी एक बिन्दु पर ध्यान केन्द्रित कर उसे विकसित करने की असमर्थता से इन्कार नही किया जा सकता। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात देश की तत्कालीन परिस्थितिया बहुत विकट थी। राजनीतिक उहापोह और अस्थिरता के कारण देश का विभाजन विकास की गति को अवरूद्ध करने मे सहायक रहा। वर्षो देश के प्रमुख नेतागण सम्पत्ति तथा सीमा विवादो मे उलझे रहे।[3] इन विवादो के साथ जो सबसे प्रमुख समस्या उत्पन्न हुई वह जनता के आदान प्रदान की और साथ ही दगो की। इन दगो मे सबसे अधिक प्रभावित हुई स्त्रियॉ ।[4] आबादी के हस्तानान्तरण के समय उन्हे खोलकर बचाने, अपने घरो मे वापस पहुँचाने और समाज मे उन्हे पुनर्स्थापित करने की समस्या एक बहुत बडी समस्या थी।

महिला अधिकारो को पूर्ण तथा प्रभावशाली बढाना उसी सूरत मे मिल सकता है जब अन्तर्राष्ट्रीय शाति तथा सुरक्षा की बेहतर स्थितियॉ हो,`, जब राष्ट्रो के बीच सम्बन्ध सभी राष्ट्रो, चाहे वे छोटे हो या बडे के वैध अधिकारो के लिए सम्मान पर आधारित हो, और जनता को अपनी राष्ट्रीय सीमाओ के भीतर आत्मनिर्णय, स्वतत्रता, क्षेत्रीय अखण्डता तथा शान्ति के साथ रहने का अधिकार हो।[5]

---

1 नैरोबी अग्रगामी नीतिया, सन 2000 तक महिलाओं के विकास के लिए पृष्ठ – 7 सेन्टर फार वीमेन्स डेवलपमेट स्टडीज
2 वही
3 अप्पा दुराई एव एम एस राजन, इडियन फारेन पालिसी, पृष्ठ – 57
4 व्होरा आशारानी, महिलाए और स्वराज, पृष्ठ 464 सूचना एव प्रसारण मत्रालय
5 नैरोबी

किसी भी नवस्वतत्र राष्ट् के लिए जो उपनिवेशवाद के शिकजे का लम्बे समय तक शिकार रहा हो को इन स्थितियो को लाने मे समय लगता है। यह विडम्बना है कि बेहतर स्थितियो तक के अन्तराल मे सबसे कठिन समय समानता के स्तर पर महिलाओ का समाज मे सघर्ष होता है।[1] रूढिवादी दक्षिणपथी मानसिकता महिलाओ के विकास मे सबसे बडी बाधा है।

यह सही है कि राष्ट्रीय आन्दोलन मे महिलाओ की अभूतपूर्व साझेदारी रही है, किन्तु इस बात से इन्कार नही किया जा सकता कि यह साझेदारी पुरूषो के अभूतपूर्व सहयोग एव परिस्थितियो से उत्पन्न वैचारिक क्रान्ति का परिणाम थी। यह महिलाओ की समृद्ध सामाजिक स्थिति का सूचक नही था क्योकि देश की स्वतत्रता के पश्चात दगो की शिकार सबसे अधिक महिलाये हुई।[1] आधुनिक दार्शनिको के व्यक्ति प्रधान चितन ने मध्यकालीन समूह प्रधान चितन की नीव हिला दी। समूह के बन्धनो से मुक्ति ने जहाँ कई स्तरो पर हानि पहुँचाई वही व्यक्ति के घुटते चितन और प्रतिभा को अवसर दिये। इन अवसरो ने महिलाओ की स्थिति बेहतर बनाने मे अपनी प्रमुख भूमिका निभायी है।

1947 से 1957 तक के मघ्य भारत मे महिलाओ की सामाजिक स्थिति को बहुत अच्छा नही कहा जा सकता। 1948 मे प्रकाशित कल्याण का नारी अक महिलाओ के प्रति समाज मे पनप रही नयी विचार–धारा तथा सती–सावित्री की नारी भूमिका का मिला जुला उपदेश प्रस्तुत करता है एक लेख मे स्त्री को बाल, युवा और वृद्धावस्था मे जो स्वतत्र न रहने के लिए कहा गया है, वह इस दृष्टि से कि उसके शरीर का नैसर्गिक सघटन ही ऐसा है कि उसे सदा एक सजग पहरेदार की आवश्यक्ता है।[3]

---

1 ईरान अफगानिस्तान तथा फिलिस्तीन मे महिलाओं पर हो रहे अत्याचारो को इसी सदर्भ मे देखा जा सकता है।

2 सरदारनी जीवन कौर (जो सीमान्त गॉधी के सेक्रेटरी गणेशा सिह पख्तून) के सस्मरण से।

3 कल्याण नारी अक , ' भारतीय नारी का स्वरूप और दायित्व " पृष्ठ 72 गीता प्रेस 1948 ।

नारी के इस सरक्षरणात्मक विकास ने ही उसे समाज मे कमजोर, अबला और असहाय बना दिया है। इस विचारधारा की झलक हमे हिन्दी साहित्य मे भी स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है।[1] वस्तुत यह एक सक्रमण काल था। देश के राष्ट्रीय नेता देश के समग्र विकास के लिए ईमानदारी से विचार कर रहे थे। गॉधी ने स्त्री शिक्षा तथा समाज मे उसकी भागीदारी को सिद्ध कर दिया था। असहयोग, सविनय अवज्ञा तथा 1942 के महत्वपूर्ण आन्दोलनो के माध्यम से हमने पढी –लिखी विचारशील महिलाओ की एक पूरी पीढी तैयार कर ली थी। जिसने महिला प्रश्नो की सार्थकता को पूरे देश के समक्ष रखा। सरोजनी नायडू ने 1940 मे ही महिला छात्राओ को सम्बोधित करते हुए कहा – " नाजवान छात्रो के साथ मिलकर स्वतत्रता सग्राम की मुख्य धारा बनी।" [2]

सरोजनी नायडू ने अपने व्यापक मानवतावादी दृष्टिकोण और राजनीतिक आन्दोलन को व्यापक राष्ट्रीय आन्दोलन बनाये जाने के तरीके के अनुभव से जन्मे विवेक के साथ छात्रो को सम्बोधित किया " हमारा सामाजिक दृष्टिकोण ऐसा है जिससे हम अपनी बहनो को पवित्रता का मूर्तिमान रूप समझते है। पर जब किसी लडकी की पवित्रता पर धब्बा लगता है तो हमे कदापि यह नही लगता कि इन महिलाओ तथा हमारे घर की महिलाओ मे कोई अन्तर नही है। जब तक महिलाओ की पवित्रता पर धब्बा लगता रहेगा, जब तक पुरूष की कामुकता स्त्री को निगलती रहेगी, जब तक तीव्र कामुकता सैकडो निराश्रित महिलाओ को अपनी जकड मे रखने की ताकत रखेगी। तब तक किसी महिला का सम्मान सुरक्षित नही।[3] 1940 मे दिया गया सरोजनी नायडू का यह भाषण भारत मे भारत की महिलाओ के लिए आशा की किरण थी।

---

1 प्रसाद जय शकर, कामायनी, 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो'

2 भारतीय महिला आन्दोलन में कम्युनिस्टों की भूमिका पृष्ठ – 8 चक्रवर्ती रेणू पीपुल्य पब्लिशिग हाउस ।

3 चक्रवर्ती रेणु, भारतीय महिला आन्दोलन में कम्युनिस्टो की भूमिका।

महिलाये एव साम्प्रदायिक दगे (1947 – 1948) –

राष्ट्रीय और अन्र्तराष्ट्रीय शान्ति ही किसी भी राष्ट् के समग्र विकास के शर्त है। हथियार बन्द लडाईयो का सबसे अधिक नुकसान महिलाओ को भुगतना पडता है। स्वतत्रता प्राप्ति से ठीक पूर्व हुए विभाजन ने उपरोक्त दोनो ही स्थितियो का मिला जुला ओर धृणित रूप प्रस्तुत किया । शरणार्थी बनी जनता का सीमाओ के आर – पार आवागमन ओर प्रवास सत्ता हस्तातरण से पूर्व ही न केवल शुरू हो गया था, बहुत कुछ हो भी चुका था। कुछ भयकर लूटपाट, मार काट और कत्लेआम से लोगो का अपने घरो मे रहना सम्भव ही नही रह गया था।

मानव –मानव के बीच आपसी सवेदना ओर सद्भाव का गला घोटने वाली इस दुर्घटना ने सम्पूर्ण मानवता पर चोट की थी। परन्तु आधी मानवता स्त्री जाति पर यह चोट अधिक गहरी थी।[1] " जैसा कि हर युद्ध दगे, दुर्घटना के समय प्राय होता है , उस विभाजन के समय भी स्त्रियो की जान पर बन आयी। उन्होने अपने पति, पुत्र, प्रियजन, सम्बन्धी , सरक्षक ओर घर बार तो खोये ही, ओर भी बहुत कुछ खोया। " [2] इन महिलाओ की सहायता करने के लिए जो स्वतत्रता सग्राम सेनानी महिलाये आयी उनमे प्रमुख थी – अमुतस्लाम, डा0 सुशीला नेयर, खुर्शीद बेन, सुचेता कृपलानी, सहोदरा राय, इदिरा गॉधी आदि। [3] प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यो हुआ कि इन महिलाओ को पुरूष बर्बरता का शिकार होना पडा ? विभाजन की त्रासदी को पुरूषो ने भी सहा, किन्तु महिलाओ के लिए ऐसी स्थितिया अस्मिता, सरक्षण और

---

1 व्होरा आशारानी , महिलायें व स्वराज, सूचना प्रसारण मत्रालय पृष्ठ 464 ।
2 वही
3 वही

विवशता से क्यू जुड जाती है? विभाजन से सम्बन्धित साहित्यो को पढने के पश्चात यह आभास होता है कि दगो के ताडव मे मनुष्य (नर) की पाशविक प्रवृतियॉ अपने समस्त विकारो के साथ खुलकर अपना खेल खेलती है।[1] ऐसी स्थितियो मे महिलाओ के समक्ष अनादि काल से एक ही प्रश्न बना है अस्मिता का और सामान्यत स्त्रिया इसके साथ समझौता नही करना चाहती। आशा रानी ब्होरा अपनी पुस्तक महिलाए एव स्वराज' मे लिखती है, " अपने इस जीवन धन, लाज ओर अपनी अस्मिता को बचाने के लिए कई जगहो पर सैकडो स्त्रियो ने कुओ और नदियो मे छलागे लगाकर व्यक्तिगत और सामूहिक आत्महत्याये की। जहॉ ऐसा ही हो सका, समय पर खाने के लिए जहर भी नही मिल सका, वहॉ विवश हो उन्हे हमलावरो के आगे आत्मसमर्पण कर देना पडा। इस प्रकार हजारो युवतियॉ अपहृत करके ले जायी गयी।" ? [2] सरदारनी जीवन कौर के बयान अनुसार कुछ सीमा पार क्षेत्रो मे ले जाकर बेच दी गयी। कइयो ने मौका पाकर आत्महत्या कर ली। कुछ घरो मे बिठा दी गयी। शेष मे से जिन्हे बचाया नही जा सका, मी–मारी फिरी या कोठो पर बिठा दी गयी। [3] क्या इतिहास मे महिलाओ के साथ बर्बरता की यह पहली दुघर्टना थी। शायद नही।

ऐसी दुर्घटनाये महिलाओ को हर देश, हर काल, हर परिवेश मे युद्धो तथा सम्प्रदायिक सघर्षो के समय उठानी पडी है। तो क्या हम ये समझे की पुरूष की पाशविक प्रवृति का अन्त कभी नही। होता पहले बगाल मे दगो की आग भडकी थी। उसे बुझाने के लिए जब गॉधी जी ने नोआखाली यात्रा की तो उन्होने वहॉ दगो से उत्पन्न स्थिति मे महिलाओ को देखा तो राहत कार्य के लिए आहवान किया। गॉधी ने कहा " ऐसी स्थिति मे मुझे राजस्थान की राजपूत स्त्रियो का जौहर याद आता है।"

---

1 देखें : लेख 'बलात्कार : पीड़ा ही हार' अरविन्द जैन चौथी दुनिया 27 मार्च से 2 अप्रैल, 1988

2 ब्होरा आशारानी, महिलाए एव स्वराज, सूचना प्रसारण मत्रालय पृष्ठ 464

3 वही

4 विभाजन से सम्बन्धित साहित्य।

विभाजन का क्रोध जो दगो के रूप मे परिलक्षित हुआ उसका कारण स्त्रिया तो नही थी फिर इस त्रासदी की शिकार सबसे अधिक महिलाए ही क्यो हुई? यह ठीक है कि इन परिस्थितियो मे महिलाओ की सुरक्षा आवश्यक है और सुरक्षा के अभाव मे जौहर जैसा ही निर्णय लेना चाहिए किन्तु क्या हमे अपनी मानव सभ्यता का पुर्नमूल्याकन नही करना चाहिए? क्या हमने स्त्री की यौनिकता के साथ शर्मिन्दगी ओर बेइज्जती को बहुत बडा मायाजाल नही तैयार किया है?

अगर ऐसा न होता तो इन स्थितियो की शिकार महिलाओ की पुनर्स्थपना बहुत दुष्कर कार्य न होता। जो समाज महिलाओ के लिए ऐसी स्थितियो पैदा करता है, वही अपने रूढिवादी सकीर्ण दृष्टिकोण से अपने कृत्य के लिए उन्हे ही दोषी ठहरा,उनके लिए वापस घरो के दरवाजे बन्द कीने लगता है।[1] यह स्थिति उन बहुसख्यक महिलाओ की होती है (और हुई) जो धर्म, समाज और परिवार के बन्धनो मे अपने को गुथा रखती है, किन्तु ऐसी स्थिति मे इन महिलाओ को बचाने उन्हे साहस पूर्वक उचित स्थान पर पहॅुचाने और सुरक्षा देने का कार्य भी कुछ महिलाओ ने ही किया। ये वो महिलाये थी जिन्होने महिलाओ समेत सम्पूर्ण समाज को वास्तविक स्थितियो से परिचित कराया। समान मानवीय अधिकारो के लिए सविधान निर्माताओ को प्रेरित कर सहयोग दिया।

भारत का सविधान – 1947–50

कैविनेट –योजना के अनुसार नवम्बर 1946 मे एक सविधान सभा का गठन किया गया।[2]

---

1 व्होरा आशारानी, स्वराज और महिलायें, सूचना प्रसारण मत्रालय पृष्ठ 465

2 पाण्डेय जयनारायण, भारत का सविधान, सेन्ट्ल ला एजेन्सी पृष्ठ 37

कुल 296 सदस्यो मे से 211 सदस्य काग्रेस से चुने गये और 73 मुस्लिम लीग तथा शेष स्थान खाली रहे। सविधान बनाने के लिए जब पहली बैठक 9 दिसम्बर 1946 को हुई तो उसके सामने अनेक चुनौतियॉ थी। एक ओर मुस्लिम लीग का असहयोग तथा दूसरी ओर कैविनेट –मिशन की सीमाये। 3 जून 1947 को देश विभाजन का निर्णय हो गया। अगस्त 1947 मे स्वतत्रता अधिनियम पारित होने के साथ ही सभी परिसीमाये समाप्त हो गयी। इसके साथ ही सविधान – सभा एक सम्प्रभु निकाय बन गयी।[1]

अनेक चुनौतियो से विचलित हुए बिना सविधान निर्माता साहस के साथ कार्य करते रहे। 2 वर्ष 11 महीने के अथक प्रयास और निरन्तर परिश्रम के पश्चात 26 नवम्बर 1949 तक सविधान के निर्माण का कार्य पूरा कर लिया गया। सविधान के कुछ उपबन्ध तो उसी दिन अर्थात 26 नवम्बर 1949 को प्रवृत्त हो गये और शेष 26 जनवरी 195 को प्रवृत्त हुए। जिसे सविधान के प्रवर्तन की तारीख कहा जाता है।[2]

भारत का सविधान और महिलाये :–

भारतीय सविधान अपनी प्रस्तावना मे कहता है–

" हम भारत के लोग, भारत को सम्पूर्ण प्रभुसत्ता सम्पन्न समाजवादी पथ निरपेक्ष लोकतत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिको को – सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक, न्याय विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतत्रता प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए, तथा उन सबमे व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढाने के लिए दृढ सकल्प होकर अपनी इस सविधान सभा मे आज तारीख 26 नवम्बर 1949 को एतद्द्वारा इस सविधान को अगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते है।" [3]

---

1 वही पृष्ठ - 37

2 वही पृष्ठ - 37

3 पाण्डेय जयनारायण, भारत का सविधान, पृष्ठ 37, सेन्ट्ल ला ऐजेन्सी

इस प्रकार भारत के सविधान ने प्रत्येक स्त्री और पुरूष को अनुच्छेद – 14 के अन्तर्ग समानता का, अनुच्छेद – 15 , धर्म, मूलवश, जाति लिग, जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध करता है। [1] अनुच्छेद – 21 स्वतत्रता तथा सम्मान के साथ जीने का अवसर देता है। [2] भारतीय सविधान मे मिली समानता के बाद भी भारत मे महिलाओ की दशा अत्यत शोचनीय थी। भारतीय समाज मे व्याप्त महिलाओ से सम्बन्धित अनेक कुरीतियो को ध्यान मे रखते हुए अनुच्छेद 15(3) के अन्तर्गत स्त्रियो एव बच्चो के लिए विशेष उपबन्ध किये गये। [3] अनुच्छेद 15(3), 15 (1)

15(2) दिये गये सामान्य नियम का अपवाद है। [4] यह अनुच्छेद उपबन्धित करता है कि अनुच्छेद (15) की कोई बात राज्य की स्त्रियो और बालको के लिए कोई विशेष उपबन्ध करने से नही रोकेगी। स्त्रियो और बालको की स्वाभाविक प्रकृति ही ऐसी होती है जिसके कारण उन्हे विशेष सरक्षण की आवश्यकता होती है। [5]

भारत का सविधान कहता है कि " स्त्रियो और बालको की विशेष प्रकृति के कारण उसे सरक्षण की विशेष आवश्यकता होती है। इसी कारण उनके लिए राज्य को विशेष कानून बनाने का अधिकार प्रदान करना उचित है। किन्तु इस संवैधानिक सहानुभूति के पीछे छिपा दर्शन एक विचारणीय प्रश्न है।

स्त्रियो के प्रति इस वैधानिक सहानुभूति के आधार के विषय मे अमेरिकन न्यायालय ने मूलर बनाम आरेगन के मामले में कहा कि " अस्तित्व के सघर्ष मे स्त्रियो की शारीरिक बनावट तथा उसके स्त्रीजन्य कार्य उन्हे दुखद स्थिति मे कर देते है। अत उनकी शारीरिक कुशलता का सरक्षण जनहित का उद्देश्य हो जाता हे। जिससे जाति, शक्ति और निपुणता को सुरक्षित रखा जा सके।[6]

---

1 वही
2 वही
3 वही
4 वही
5 वही
6 मूलर बनाम आरेगन, 12 ला एड 55।

अमेरिकन न्यायालय का यह निर्णय स्त्रियो के प्रति सवैधानिक सहानुभूति की व्यवस्था तो गढता है किन्तु अपरोक्ष रूप से वह समस्त मध्यकालीन मानसिकता को पुष्ट और सुनिश्चित करता है। जनहित मे महिलाओ के सरक्षण का अर्थ है उसे अनेक सामाजिक प्रतिबन्धो से जकडना साथ ही उसके व्यक्तिगत विकास को बाधित करना।

वस्तुत समस्त समाजो का विकास इस बात का प्रमाण है कि परिवार के उपर के राजनीतिक सगठनो मे स्त्री को वचित रखा गया है। इसके पीछे छिपे दर्शन का मूल था उसकी स्त्रीजन्यता । इसीलिए महिलाओ से सम्बन्धित आज तक के न्यायालयो के निर्णय मूलत स्त्री सरक्षण का ही उपबन्ध करते है स्त्री विकास का नही।

अनुच्छेद 42 के अन्तर्गत स्त्रियो को विशेष प्रसूति प्रदान किया जा सकता है।[1] राज्य केवल स्त्रियो के लिए शिक्षण सस्थाओ की स्थापना कर सकता है तथा ऐसी सस्थाओ मे उनके लिए स्थान (सुरक्षित) आरक्षित कर सकता है।[2] अनुच्छेद 15 (3) स्त्रियो और बालको के कल्याण के लिए केवल विशेष प्रावधान बनाने की अनुमति देता है।[3] प्रत्येक बात मे पुरूषो के समान सुविधा देने का उपबन्ध नही करता। देखिये – सी वी मुथम्मा बनाम भारत सघ [4] के मामले मे न्यायालय का निर्णय। न्यायालय का निर्णय था कि यदि पेशे और परिस्थितियॉ समान हो तो व्यवहारत उनमे महिलाओ को कार्य करने से रोका जा सकता है।

---

1 पाण्डेय जयनाराण, भारत का सविधान, पृष्ठ – 38 सेन्ट्ल ला ऐजेन्सी।

2 वही पृष्ठ - 38

3 वही पृष्ठ - 38

4 एआई आर 1947 सु को 1868 । पिटिशनर को भारतीय विदेश सेवा ग्रेड –1 के पद पर इस आधार पर प्रोन्नति नही दी गयी थी क्यो कि वह एक विवाहित महिला थी। न्यायालय ने इसे असवैधानिक घोषित किया। विवाहित होने के कारण प्रोन्नति न देना अशोक कालीन कौटिल्य के अर्थशास्त्रा की महिलाओं के प्रति नीति की याद दिलाता है।

भारतीय सविधान ने निष्पक्षता के साथ किसी भी प्रकार के विभेद से अपने को बचाये रखा किन्तु आर्टिकल –26 के अनुसार धर्मगत कानूनो को मान्यता दे विरोधाभासो को जन्म दिया है।[1] अनुच्छेद 15, जहॉ धर्म, मूलवंश जाति, लिग, जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध करता है वही धर्मगत कानूनो ने उन सभी व्यवस्थाओ को यथावत बनाये रखा। विशेषकर महिलाओ के विषय मे। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात हमे समाज के जिस नये स्वरूप को गढना था उनको इन कानूनो के कारण गढना मुश्किल हो गया। मिताक्षरा [2] तथा दायभाग [3] पर आधारित हिन्दू विधि अपने मूल स्वरूप मे आज भी वही है जो स्वतत्राता प्राप्ति के पूर्व थी। यह सर्वविदित है कि समस्त धार्मिक,नृजातीय, सास्कृतिक और रूढिवादी लोग मूल रूप से लैगिक समानता के विरोधी होते है।[4] धर्मगत विधियॉ इन समस्त तत्वो को यथावत बनाये रखने मे अपना सक्रिय सहयोग देती है। हिन्दू विधि मे फिर भी 1955–56 के पश्चात सुधार के लिए प्रयास किया गया और चार प्रमुख कानूनो को ससद ने पास किया

1 हिन्दू विवाह अधिनियम 1955

2 हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956

3 हिन्दू दत्तक तथा भरण–पोषण अधिनियम, 1956

4 हिन्दू अवयस्कता तथा सरक्षता अधिनियम 1956

हिन्दू विधि में अुए इन प्रमुख परिवर्तनो ने हिन्दू महिला के अधिकारो को अपेक्षाकृत अधिक कर दिया। दूसरी ओर मुस्लिम विधि अपने मूल स्वरूप में ज्यो की त्यो बनी रही।

---

1 हिन्दू विधि

2 याज्ञवल्क स्मृति पर विजानेश्वर द्वारा लिखित भाष्य (11 वी शताब्दी) यह विषम परिस्थितियों मे लगभग सम्पूर्ण भारत मे मान्य हैं

3 जोमूतवाहन द्वारा लिखित विधि जो बगाल, उडीसा आदि क्षेत्रों में प्रचलित है। इसमें असम का भी कुछ भाग आता हैं

4 अग्निहोत्री इदू – चेजिग टर्मस आफॅ पॉलिटिकल डिसकोर्स वूमेन मूवमेंट इन इन्डिया, 1970 – 1990
इकोनामिक एड पॉलिटिकल वीकली जुलाई 22–1995 ।

मुस्लिम विधि वेत्ताओ का मानना है कि मुस्लिम विधि में महिलाओ को बहुत से हक हासिल है किन्तु मुस्लिम समाज मे महिलाओ की दयनीय दशा किसी से छिपी नही है। इन दोनो ही विधियो को सविधान के द्वारा मान्यता मिलने के कारण महिलाओ सम्बन्धी विषयो पर किसी प्रकार का कोई मूल परिवर्तन नही दिखता। जनता पर धर्म गुरूओ के शासन ने उसे जड बना दिया है। यह जडता धार्मिक प्रश्नो पर स्पष्ट रूप से देखने को मिलती है।

भारत मे महिलाओ को सम्पत्तिगत अधिकार –

हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 द्वारा नारियो को सम्पत्ति मे पूर्ण स्वामित्व प्रदान किया गया है।[1] इसके पूर्व स्त्री के पास दो प्रकार की सम्पत्ति हो सकती थी। स्त्रीधन 2 नारी सम्पदा।

1 स्त्रीधन वह सम्पत्ति थी जिसमे उसका पूर्ण स्वामित्व होता था तथा उसकी मृत्यु के पश्चात उसके दामादो को दाय मे प्राप्त होती थी। [2]

2 वह सम्पत्ति जिसमे उनका सीमित स्वामित्व होता था तथा जो उनकी मृत्यु के बाद उनके दामादो को दाय में प्राप्त नही होती थी। अपितु मृतक पुरूष स्वामी के दामादो को प्राप्त होती थी। [3]

---

1 धारा 14 के अन्तर्गत हिन्दू-विधि
2 हिन्दू पर्सनल ला, पृष्ठ 90
3 पृष्ठ 90 वही

इस प्रकार अधिनियम पारित किये जाने के पूर्व हिन्दू नारी के अधिकार बहुत सीमित थे। कोई पुरूष उत्तराधिकार से सम्पत्ति प्राप्त करके पूर्ण स्वामी होती था। जबकि स्त्रियाँ सीमित स्वामी हुआ करती थी। पूरे देश मे एकरूपता नही थी। हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम को कानून मे एकरूपता लाने तथा नारियो को पुरूषो के बराबर सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्रदान करने के उद्देश्य से पारित किया गया। इस सम्बन्ध मे अधिनियम की धारा – 14 विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यह धारा स्त्रीधन और नारी सम्पदा को समाप्त कर हिन्दू नारियो के कब्जे मे रहने वाली समस्त सम्पत्ति पर उनको स्वामित्व प्रदान करती है।

स्वतत्रता के पश्चात हिन्दू विधि द्वारा हिन्दू महिलाओ को भी पुरूषो के बराबर अधिकार देने का प्रयास किया गया किन्तु हमारी समाजिक व्यवस्था तथा विचारो ने इसे व्यवहार रूप मे स्वीकार नही किया। आज भी महिलाओ को अपने कानूनी अधिकारो का न तो ज्ञान है ओर न ही कोइ लाभ।

नारी सम्पदा पर पूर्ण स्वामित्व समाज के लिए एक विषम परिस्थिति है। पति के धन मे पत्नी का अधिकार भारतीय समाज को आज भी स्वीकार नही है। उसके द्वारा की गयी वसीयत विवाद का कारण हो सकती है देखिए कौटूर स्वामी बनाम वीरब्बा [1] के वाद को जिसमे उच्चतम न्यायालय ने इलाहाबाद,[2] पटना [3], मध्यप्रदेश[4] के उच्च न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध मत व्यक्त करते हुए कहा कि उत्तर भोगी अधिनियम पारित किये जाने के बाद भी नारी सम्पदा के अविधिमान्य अन्य सक्रमण को चुनौती देकर रद् करा सकते है।

---

1 एआईआर (1959) सु को 577

2 हनुमान प्रसाद बनाम मु चन्द्रावती, एआई आर 1952 इलाहाबाद 304

3 जूलल बनाम प्रदीप एआई आर 1958 पटना 115

4 धीरज कुँवर बनाम लक्ष्मण सिंह एआईआर 1957 म प्र 38

इस प्रकर उच्चतम न्यायालय के फैसले के बाद वैधानिक स्थिति यह है कि उत्तरभोगी अधिनियम पारित किये जाने के बाद भी नारी सम्पदा के अवैध अन्य सक्रमण को चुनौती देकर रद् करा सकते है।

विवाह .—

स्वतत्रता प्राप्ति के इस प्रथम दशक मे हिन्दू विधि मे व्यापक परिवर्तन किये गये इन परिवर्तनो मे प्रमुख था " हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955"। इस अधिनियम की प्रस्तावना मे यह स्पष्ट किया गया , कि इस अधिनियम को पूर्व प्रचलित विवाह विधि मे सधोधन करने एव उसे सहिता बद्ध करने के उद्देश्य से भारतीय ससद द्वारा पारित किया गया है। ससद कहती है (अ) यह अधिनियम हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 कहा जायेगा (ब) इसका विस्तार जम्मू कश्मीर राज्य को छोडकर पूरे भारत पर है। यह अधिनियम राज्य क्षेत्र के भीतर लागू होने के साथ राज्य क्षेत्रातीत प्रभाव रखता है।
इस अधिनियम मे महत्वपूर्ण सशोधन विवाह की आयु से सम्बन्धित है।

बाल विवाह अवरोध अधिनियम 1929 (1938 मे सशोधित) द्वारा बाल विवाह की कुप्रथा पर प्रतिबन्ध लगाने के उद्देश्य से वर के लिए विवाह की आय 18 वर्ष तथा वधू के लिए 15 वर्ष निर्धारित की गयी। अधिनियम द्वारा यह भी व्यवस्था की गयी कि " विवाह के समय वर ने 18 वर्ष और वधू ने 15 वर्ष की आयु पूरी कर ली हो।" इस शर्त का उल्लघन करने पर विवाह की वैधता पर कोई प्रभाव नही पडेगा अपितु यह एक अपराध है। [1] इन महत्वपूर्ण परिवर्तनो के साथ हिन्दू विवाह मे अनेक परिवर्तन किये गये किन्तु व्यवहारिक रूप मे सामान्यतया इस दशक में कोई परिवर्तन नही आया। समाज मे वैवाहिक स्थितियॉ यथावत बनी रही।

---

1 धारा 18 द्वारा इस अपराध के लिए 15 दिन के साधारण कारावास या एक हजार जुर्माना से दण्डित किया जा सकता है।

जहाँ तक बाल विवाह का प्रश्न है इस दशक मे नगरीय तथा ग्रामीण दोनो ही क्षेत्रो मे विवाह अधिकार बाल्यावस्था मे ही हुआ करते थे। इसको कानूनी नही तो सामाजिक मान्यता अवश्यक प्राप्त थी। इलाहाबाद के फूलपुर तहसील के आकडे बताते है कि 100 मे से 96 महिलाओ का विवाह 15 वर्ष से कम आयु मे हुआ ओर 100 मे से 70 पुरूषो का विवाह 18 वर्ष से कम आयु वर्ग मे हुआ। [1]

उ0प्र0 भारत मे सबसे अधिक आबादी वाला प्रदेश है साथ ही अपनी सास्कृतिक परम्पराओ से समृद्ध भी, इसलिए इस प्रदेश मे विकास के नाम पर किसी भी नीति को कार्यान्वित करना अपने आप में कठिन कार्य है। 1991 की जनगणना के आधार पर भारत मे 35 4 करोड पुरूष तथा 33 1 करोड महिलाये है। इन महिलाओ का सबसे बडा वर्ग गॉवो मे रहता है। और यह वर्ग असगठित क्षेत्र मे लगा है। इस क्षेत्र मे कुल कार्यशक्ति की 90 महिलाये है। जिसमे 80 कृषि कार्यो से जुडी हुई है। उत्पादन के क्षेत्र मे लगी इन महिलाओ को शिक्षित करना सबसे कठिन कार्य है आर्थिक रूप से पिछडे इस प्रदेश मे शिक्षा के महत्व को यहॉ की जनता ने समझा है किन्तु लैंगिक असमानता के सामाजिक स्वरूप की दुरूहता महिला शिक्षा के विकास मे सबसे बडी बाधा है महिलाओ के चतुर्दिक विकास के क्षेत्र मे कट्टरपथी विचार मध्ययुगीन रिति–रिवाजो और धार्मिक पथों ने इसे अपने स्वाभिमान का प्रश्न बना लिया। परिणाम स्वरूप प्राथमिक शिक्षा के पश्चात बालिकाओ की शिक्षा बाधित होती रही। उ0प्र0 के शहरी क्षेत्रो मुख्य रूप से लखनऊ, इलाहाबाद, बनारस, कानपुर, आगरा जैसे शहर शैक्षिक विकास की दृष्टि से समृद्ध रहे (तुलानात्मक रूप से) दूसरी उ0प्र0 के ग्रामीण क्षेत्र इस विकास प्रक्रिया मे आज भी पिछडे है। उ0प्र0 के ग्रामीण क्षेत्रो मे 100 छात्राओ मे से केवल एक छात्रा 12 वी कक्षा तक पहुँच पाती है।[2]

---

1 साक्षात्कारो पर आधारित आकडे।

2 जनगणना रिपोर्ट १९९१ से प्राप्त आंकडे।

इसलिए शहरी क्षेत्रो मे शिक्षा के विकास के साथ–साथ अन्य परिवर्तन भी स्पष्ट रूप से दिखते है जबकि ग्रामीण क्षेत्रो मे यह परिवर्तन बहुत धीमा है। जैसा कि स्पष्ट है इसका मूल कारण अशिक्षा है। यही कारण था कि स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात प्रदेश तथा भारत सरकार दोनो ने ही शिक्षा के विकास पर विशेष बल दिया और इसके लिए समितियो का गठन किया।

शिक्षा :–

शिक्षा महिलाओ के स्तर मे सुधार लाने और उन्हे पूर्ण प्रोत्साहन देने का आधार है।[1] यह वह मौलिक हथियार है जो समाज के पूर्ण सदस्य के रुप मे उनकी भूमिका को पूरा करने के लिए महिलाओ को दिया जाना चाहिए। भारत मे औपनिवेशीकरण के काल मे शिक्षा को पूरे तौर पर उपेक्षित रखा गया। इसलिए महिला शिक्षा के प्रोत्साहन और विकास की प्रक्रिया का चित्र आजादी के बाद स्पष्ट नही होता। इसलिए आजादी के पश्चात उ0 प्र0 मे महिला शिक्षा ही नही अपितु राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण रुप से शिक्षा के विकास पर बल देना अति आवश्यक था। शिक्षा प्रणाली मे लडकियो की अनुपस्थिति और उनके द्वारा पढाई छोडे जाने की उची दरे, एक समस्या थी। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों मे तो बालिकाओ की शिक्षा दरे अत्यन्त नीची थी। इसके कई सामाजिक और आर्थिक कारण थे। शहरी और ग्रामीण स्तर पर स्थितियॉ आजादी से लेकर आजतक अलग–अलग रही है। उ0 प्र0 की स्थितिया सम्पूर्ण राष्ट्रीय परिदृश्य का ही एक अग थी। आजादी के समय सम्पूर्ण भारत की 80 प्रतिशत आबादी जो ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्राो मे रहती थी निरक्षर थी। यह स्थिति भारत के लिए सबसे बडी चुनौती थी। इस चुनौती का सामना भारत के लगभग सभी क्षेत्रो मे करनी थी।

---

1. नैरोबी की अग्रगामी नीतियां, 2000 तक महिलायें, सेन्टर फॉर विमन डेवलपमेंट स्टडी, नयी दिल

1991 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण भारत मे आज भी 20 करोड से ज्यादा महिलाए पूर्णत निरक्षर है। 1991 की जनगणना के अनुसार पुरुषो की साक्षरता दर 64 13 प्रतिशत है और महिला साक्षरता 39 27 प्रतिशत है। महिलाओ की इस प्रतिशतता मे शहरी क्षेत्राो की महिलाओ मे यह दर 64 प्रतिशत और ग्रामीण क्षेत्रो मे यह दर 30 62 प्रतिशत है। उ0 प्र0 मे महिला साक्षरता सिर्फ 19 02 प्रतिशत है। 1991 की इस रिपोर्ट मे महिलाओ की साक्षरता दर 1946 की स्थितियो को और हमारे शिक्षा विकास कार्यक्रमो की स्थिति स्पष्ट कर देती है। आज भी उ0 प्र0, म0 प्र0, राजस्थान तथा बिहार मे भारत के आधे से अधिक निरक्षर रहते है जिनमे महिलाये सबसे अधिक है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रथम दशक मे राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा के विकास से सम्बन्धित प्रश्नो पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाने लगा। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने तो 1938 मे ही राष्ट्रीय योजना समिति का गठन किया था जिसके अध्यक्ष प0 जवाहर लाल नेहरु थे। इस समिति ने अपना कार्य सुचारु रुप से करना प्रारम्भ कर दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रथम चार वर्ष शिक्षा के विकास की दृष्टि से अत्यन्त प्रभावी रहे।[1]

प्रथम पचवर्षीय योजना वस्तुत शिक्षा के समस्त विकास के प्रश्न पर गम्भीरता से विचार कर रही थी इसलिए इसमे तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के विकास की भी योजनाओ को महत्व दिया गया।[2] साथ ही महिला शिक्षा को विशेष रुप से प्रभावी बनाने के लिए कार्य योजना तैयार की गयी।[3]

---

1 विश्वास ए एव अग्रवाल एस0 पी0 – डेवेलपमेट ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया – 1986 पृष्ठ – 692 – 693

2 Review of First Five year Plan Government of India Planing Commission, May 1957 P 250

3 वही

प्रथम पचवर्षीय योजना के तहत राज्य तथा केन्द्र सरकारो का वार्षिक खर्च जो 1950–51 मे 65 करोड रुपये था से बढकर 1955–56 मे 116 कराड रुपये हो गया। योजना के अन्तर्गत शिक्षा पर प्रतिवर्ष केन्द्र तथा राज्यो के खर्चे इस प्रकार बढ रहे थे –

	(रुपये करोड़ में)				
	1951–52	1952–53	1953–54	1954–55	1955–56
केन्द्र	2 4	3 0	3 2	9 9	13 6
राज्य	17 4	19 4	23 4	27 4	33 7

शिक्षा के विकास पर खर्च तथा क्रमश वृद्धि भविष्य मे देश के सर्वांगीण विकास का सूचक था। किन्तु यह बजट कालान्तर में तुलनीय दृष्टि से कम होता गया।

उ० प्र० मे विभिन्न परीक्षाओ में पास होने वाले विद्यार्थियों की संख्या

वर्ष	हाईस्कूल तथा समकक्ष परीक्षा मे उत्तीर्ण विद्यार्थियो की सख्या		स्नातक परीक्षाओ मे उत्तीर्ण विद्यार्थियो की सख्या	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
1946–47	19,366	2,010	4,183	481
1947–48	22,486	—	3,458	—

1 Education in India, (report) Ministory of Education Government of India 1947 - 48 Volume - I

2 स्त्री पुरुष दोनो ।

तकनीकी तथा व्यवसायिक शिक्षा को ध्यान मे रखकर प्रथम पचवर्षीय योजना मे प्रदेश के अन्दर महाविद्यालयो की स्थापना की गयी –

वर्ष	महाविद्यालय तकनीकी तथा व्यवसायिक शिक्षा
1951–52	20
1952–53	20
1954–55	37
1955–56	40

इन महाविद्यालयो मे छात्र–छात्राओ के बीच सख्या की दृष्टि से न केवल अतर है बल्कि यह अतर बहुत बडा है।

वर्ष	लड़के	लडकियॉ	कुल	खर्च
1951–52	16,819	1,219	18,038	55,56,831
1952–53	20,243	1,519	21,762	58,27,769
1954–55	21,417	1,214	22,631	53,04,515
1955–56	23,069	1,292	24,361	54,77,715

1 Education of India Ministry of Education, Government of India for the year 1951-52, 1952-53, 1955-56 Volume I Figures for 1954-55 not avilable

2 वही।

इन आकडो को देखने से स्पष्ट होता है कि लडकियो की सख्या मे वृद्धि न के बराबर है। 1952–53 मे जो सख्या 1,519 पहुँच गयी थी वह 1954–55 मे घटकर पुन 1,214 हो गयी। पुन इनकी सख्या मे वृद्धि हुई वर्ष 1955–56 मे किन्तु यह वृद्धि बालको की तुलना मे बहुत ही खराब रही किन्तु तकनीकी शिक्षा मे, स्वतत्रता के प्रथम दशक मे महिलाओ की भागीदारी महिला शिक्षा के विकास तथा समाज के विकास मे शुभ सकेत था।

वर्ष 1951–1956 के मध्य उत्तर प्रदेश मे मेडिकल कालेजो की सख्या –

वर्ष	सस्थाओ की सख्या	छात्रो की सख्या	छात्राओ की सख्या	कुल	कुल खर्च
1951–52	1	1,427	226	1,653	3,73,041
1952–53	1	1,686	232	1,918	6,57,528
1954–55	—	—	—	—	—
1955–56	12	3,25	329	3,581	11,66,921

प्रथम पचवर्षीय योजना शिक्षा के विकास की दृष्टि से सतोषजनक इसलिए कहा जा सकता है क्योकि इन वर्षों मे सरकार ने शिक्षा पर खर्च तथा शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रो के विस्तार पर ध्यान देते हुए उसे कार्यान्वित किया। प्रदेश मे एग्रीकल्चर, इजीनियरिंग, टीचर्स ट्रेनिग कालेजो के साथ अन्य शिक्षा पर ध्यान दिया गया। सरकार की ओर से प्रयास सराहनीय रहा किन्तु समाज के विभिन्न वर्गों की भागीदारी उत्साहजनक नही रही।

---

1 Education in India "Ministry of Education Government of India for year 1951-52, 1952-53 to 1955-56 Volume I figures for 1954-55 not avilable.

विशेषकर महिला शिक्षा के क्षेत्र मे हॉ इतना अवश्य था कि महिला साक्षरता तथा प्राइमरी शिक्षा मे विकास अवश्य दिखाई पडता है। जो आकडे हमे तकनीकी शिक्षा तथा अन्य शिक्षा मे महिलाओ से सबधित दिखते हैं वो बाद के वर्षों मे थोडे बहुत अन्तर के साथ यथावत बने रहे। स्त्री शिक्षा की गति धीमी होने का कारण समाज के आर्थिक क्रियाकलापो से उसके न जुडे होने के कारण था। परिवार के आर्थिक पक्ष की समस्त जिम्मेदारी नैतिक रुप से पुरुषो को वहन करनी चाहिए यह विचार धारा ने स्त्री को समाज के इस महत्वपूर्ण पक्ष से वचित रखा और यही कारण था कि स्त्रियो ने भी शिक्षा को हमेशा रोजगार से जोडकर देखा और शिक्षा के विकास के प्रति उनकी रुचि विशेष नही रही।

नियोजन —

भारत मे स्वतत्रता प्राप्ति तक रोजगार कृषि तथा कृषि सबन्धित कार्यों से जुडा था क्योकि भारत की कुल जनसख्या का 80 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रो मे निवास करता था। ग्रामीण क्षेत्र की अपनी परम्परागत समस्याए थी। जो सामन्तवाद की देन थी। भारत मे रोजगार की समस्या को जटिल आर्थिक प्रक्रिया तथा सयुक्त परिवार प्रथा के कारण गहराई से महसूस नही किया गया विशेषकर मध्यम वर्गीय समाज मे किन्तु राजगार निम्न वर्ग की आद्यतन समस्या रही। निम्न तथा मध्यम वर्ग का कृषि से सबन्धित रोजगार के कारण ऐसा जुडाव रहा है जो एक दूसरे के पूरक रहे हैं। इस असगठित क्षेत्र मे श्रम अधिक है जिसके कारण निर्वाह व्यवस्था बनी रहती है किन्तु श्रम की अधिकता कृषक वर्ग को जहॉ सीमित ससाधनों मे मजदूरी की समस्या देती है वहीं मजदूरी की कम लागत दोनो की स्थितियो जटिल एव उबाऊ बना देती है।

इसलिए उ0 प्र0 मे – जो कि एक कृषि प्रधान राज्य है – ण
कारण रोजगार की स्थितियाँ विकट है।

कृषि जैसे असगठित क्षेत्र मे कुल श्रम शक्ति का 80 प्रतिशत महिला है। सयुक्त परिवार व्यवस्था मे दिनचर्या तथा खाना पकाने और खिलाने से बचे समय का समस्त हिस्सा परिवार से सबधित रोजगार के उत्पादन मे ही महिलाओ द्वारा लगाया जाता है। दूसरी तरफ निम्न वर्गीय परिवारो मे महिलाए कृषि कार्यों के लिए न केवल सुलभ हो जाती है अपितु उन्हे कम दिहाडी भी दी जाती रही है। महिला श्रम का यह शोषण 1947 से लेकर आजतक यथावत बना हुआ है। महिलाओ के इस शोषण को पारिवारिक स्तर पर सहयोग का सूचक माना जाता है और सार्वजनिक तौर पर तकनीकी क्षमता मे अकुशल।[1] इन दोनो की स्थितियो मे परिणाम एक ही होता है। इसलिए महिलाओ के सबन्ध मे रोजगार की बात करना एक कठिन और दुरुह प्रश्न है। लगभग सभी देशो और समाजो मे महिलाये अपनी क्षमता से अधिक कार्य करती है।[2] जो कार्य आवश्यक तो है किन्तु अनुत्पादक उन सभी कार्यों से महिलाओ का गहरा सरोकार है।

उ0 प्र0 मे बदलती स्थितियों के कारण महिलाओ के रोजगार की स्थितियो मे उपरी तौर पर परिवर्तन स्वाभाविक था। यद्यपि कि शिक्षा के माध्यम से उपजे रोजगार तथा विषम सामाजिक स्थितियो के कारण महिलाओ के लिए निश्चित दिशा मे ही अवसर थे किन्तु इतना अवश्य था कि परम्परागत पारिवारिक बधनो से निकलकर स्त्रियाँ स्वास्थ्य, अध्यापन जैसे क्षेत्रो मे अपनी उपस्थिति दर्ज कराने लगी थी।

---

1 यू कवपगम, लेबर एण्ड जेंडर, पृष्ठ – 18
2 वही पृष्ठ - 18
3 वही पृष्ठ - 18

1955 तक 329 महिला डाक्टरो की सख्या, लगभग 13,14 छात्रो की सख्या एग्रीकल्वर कालेजो मे इस बात का स्पष्ट प्रमाण था कि शिक्षित वर्ग महिला शिक्षा और महिला रोजगार को प्रोत्साहन देने के प्रति रुचि दिखा रहा है। यद्यपि यह परिवर्तन नगरीय क्षेत्राो मे देखने को मिलता है किन्तु यह महत्वपूर्ण बदलाव का सूचक था। उ0 प्र0 मे शिक्षा एव रोजगार को देखते हुए शिक्षको के प्रशिक्षण कालेजो की स्थापना की गयी। शिक्षा के विकास ने महिलाओ के लिए सामाजिक स्तर पर रोजगार को प्रोत्साहन दिया। इसमे सबसे प्रमुख था शिक्षा से जुडा रोजगार। जैसे ट्रेनिग कालेजो मे प्रशिक्षित महिलाए महिला शिक्षा के विकास मे रोजगार परक भूमिका का निर्वाह करने के लिए प्रोत्साहित की गयी।

वर्ष	प्रशिक्षण विद्यालयों की सख्या	पुरुषो की सख्या	महिलाओ की संख्या
1947—48	11	728	212
1949—50	9	611	488

स्रोत — Education in India (report)

इस प्रकार सरकार ने लखनऊ, इलाहाबाद तथा आगरा मे कुल मिलाकर छ प्रशिक्षण विद्यालय खोले। जिनमे इलाहाबाद के तीन ट्रेनिग सेन्टर महिलाओ के लिए थे। इस प्रकार व्यावसायिक शिक्षा तथा शिक्षा के विकास ने भारत में स्त्री शिक्षा के साथ महिलारोजगार को भी प्रोत्साहित किया। रोजगार की इन स्थितियों ने महिलाओ की धीरे—धीरे आर्थिक उत्पादन की प्रक्रिया से जोडना प्रारम्भ किया।

1957 तक यानि स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रथम दशक मे महिलाओ के रोजगार को व्यापक सामाजिक स्वीकृति नही थी। ऐसा नही था कि महिलाए आवश्यकता पडने पर घर से बाहर रोजगार के लिए नही निकलती थी, किन्तु ऐसा पुरुष विहीन परिवार या निम्न वर्ग मे होता था। निम्न वर्ग की सामाजिक स्थितियो को मध्यम वर्ग ने कभी स्वीकृत नही किया।

बलात्कार :–

बलात्कार न तो स्त्री–पुरुष सबन्धो के तनाव का सूचक है और न ही स्त्री के समर्पण तथा सहयोग का। यह पुरुष पाशुविकता का उदाहरण है जो दुश्मनो, विरोधियो को अपमानित करने का माध्यम है। देह, स्त्री की उक मात्र पहचान के रुव मे उसका गुण भी है और गाली भी।[1] वस्तुत. नारी के प्रति हमारी धारणा दो मूलभूत तत्वो से बनी है भय और घृणा। घृणा युद्ध को जन्म देती है। युद्ध अनवरत काल से ही नारी अपमान को जन्म देते रहे है। इतिहास ऐसे उदाहरणो से भरा हुआ है। युद्ध आर्यों –अनार्यों के मध्य हो देवतओ और राक्षसो के मध्य हो या फिर दगो की त्रासदी हो, इन सभी परिस्थितियो मे महिलाओ के साथ बलात्कार की घटनाये सामान्य सी बात है। युद्धों के समय स्त्रियो को लूटना उन्हे दासी बनाने के साक्ष्यो से भारतीय ही नही विश्व इतिहास भरा पडा है। 1947 में देश के विभाजन से उत्पन्न स्थिति की सबसे अधिक शिकार महिलाए हुईं।उनके साथ जगह–जगह पर सगठित बलात्कार हुआ। सगठित बलात्कार की विशेष स्थिति है। इसका क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है। संगठित बलात्कार एक विशिष्ट सामाजिक परिघटना है सिर्फ इस अर्थ मे नही कि यह जन समुदाय के जन तात्रिक अभियानो को कुचलने का भयानक हथियार है।

1.- देखें जैन अरविन्द औरत होने की सजा के पृष्ठ 30 - 35 तक

इसकी भयानकता इस बात मे निहित है कि राजनीतिक दमन को प्रस्थान बिन्दु बनाकर पूरे सामाजिक सगठन की उस धुरी पर आघात करने लगता है जिसके निर्माण मे एतिहासिक विकास के क्रम मे कितने ही ऊचे पारिवारिक और सामुदायिक मूल्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इसके विरोध के लिए सम्पूर्ण सामाजिक अभियान की आवश्यकता है। इस अभियान मे हमे अपने मध्यकालीन सस्कारो से लडना होगा। जिसमे नारी की यौन शुचिता को अपनी सामाजिक हैसियत का निर्धारक मान लिया जाता है। "सच तो यह है कि हमारे सारे परम्परागत सोच मे नारी को दो हिस्सो मे बाट दिया गया। पहली करुणामयी शील की देबी तथा दूसरी काम कदरा, कुत्सित और अश्लील है। जब तक वह पुरुष की इच्छा और वासना के नियत्रण मे है, वह सौन्दर्य है, अगर उससे निरपेक्ष है नियन्त्रण से बाहर है तो दण्डनीय है। यही से स्त्री और उसकी यौन सुचिता के सामाजिक व्याख्या और स्थापित मापदण्ड अभिशप्त स्त्री को समाज से काटकर या तो असहाय बना देते है जिसका परिणाम अधिकाशत हत्या या आत्महत्या होता है या फिर वेश्यावृत्ति के दलदल मे ढकेल देते है। जहॉ वह अपने शरीर को माध्यम बना आर्थिक स्वतन्त्राता तो प्राप्त कर लेती है किन्तु सामाजिक सम्मान खो देती है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इस अपराध (बलात्कार) मे निरन्तर वृद्धि होती रही है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात जहॉ पारिवारिक जकडन से स्त्री को थोडी राहत मिली वही स्त्री के प्रति उपजी इस सामाजिक विसंगति ने उसके व्यक्तित्व के विकास को बाधित किया है। बलात्कार के पश्चात स्त्री भी स्वयं को समाज मे रहने के योग्य नही समझती। प्रसिद्ध नारीवादी सिमन कहती है "स्त्री न तो हारमोन से नियत्रित है न उसमे कोई रहस्यमय अत वृत्ति है, बल्कि यह तो उसका शरीर है जो दूसरो के माध्यम से प्रवर्तित हुआ है। अत स्त्री वही है जो वह बनायी गयी है।"[1]

---

[1] सिमोन - द सेकेन्ड के प्रभा खेतान द्वारा अनुदित पुस्तक से

नारी के अवस्था के विश्लेषण मे जाने के लिए इस उत्पीडन की अवस्था के लिए जिम्मेदार भौतिक आधार पर ध्यान केन्द्रित करना होगा। इसलिए आर्थिक रुप से स्त्री की परतत्रता के विषय नये समाज की सरचना तथा नैतिक मूल्यो के मूल बिन्दु होने चाहिए।

दहेज :—

महत्वपूर्ण हिन्दू कोड बिल,महिलाओ के अधिकार और उनकी सामाजिक स्थिति के विश्लेषण के पश्चात भी भारतीय समाज की महत्वपूर्ण कुप्रथा दहेज की तरफ किसी का ध्यान आकृष्ट नही हुआ। यही कारण था कि अनेक कानूनी परिवर्तनो, शिक्षा तथा सामाजिक विकास के बाद भी स्त्रियों की दशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन जो होना चाहिए था देखने को नही मिलता है। व्यावसायिक क्रान्ति के भारत आगमन, बदले हुए पूँजीवादी चितन और घटती हुई नैतिकता ने अपने पुत्रो को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना दिया और विवाह की नैसर्गिक आवश्यकता को आर्थिक उत्पादन की प्रक्रिया से जोड दिया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात सामतवाद के पतन ने यह सामती विकार साधारण जनता मे सम्प्रेषित हो गया फलस्वरुप निम्न वर्ग से उच्चवर्ग तक अपनी हैसियत के अनुसार पुत्रों की कीमत लगाने लगा। उ0 प्र0 के लगभग सभी क्षेत्र इस कुप्रथा का शिकार है। यहॉ लोकगीत अनेक अर्थों मे इसीलिए पुत्री के जन्म पर मातम सा सदेश देते हैं।[1] लोकगीतो मे व्याप्त व्यथा के मूल मे पुत्री का विवाह और विवाह में दिया जाने वाला धन ही मुख्य कारक है। पुत्री के जन्म पर मॉ की प्रताडना इस बात का प्रबल सकेत है। देखा जाय तो नारी के इर्द—गिर्द घूमने वाली समस्त आर्थिक प्रक्रिया उसके हाशिया कारण मे प्रमुख भूमिका निभाती है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के इस प्रथम दशक मे दहेज एक कुप्रथा अवश्य थी किन्तु आज के सामाजिक परिवेश की तरह कोढ नहीं।

---

1 जो मै जनतो धियो कोखि होईहैं पियती मरिचिया पिसाय, पूर्वी उ0 प्र0 का लोकगीत

उस समय के समाचार पत्रों के अध्ययन से यह पता चलता है कि उस समय स्त्रियो के सबन्ध मे दहेज जैसी कुप्रथा मृत्यु का कारक नही थी। 1952 मे एक घटना स्टोव से एक महिला के जलने की मिलती है जिसे हम स्पष्ट रुप से दहेज हत्या नही कह सकते।[1] कुल मिलाकर दहेज विवाह से जुडी एक प्रक्रिया अवश्य थी साथ ही महिलाओं के प्रति हिसा का कारण भी किन्तु यह महिलाओ के लिए इस दशक मे मृत्यु का कारण नही था।

---

1 आवर लीडर, 5 अगस्त 1592, इलाहाबाद।

अध्याय : 4

राष्ट्र निर्माण एक गतिशील प्रक्रिया है, जो राष्ट्र की विचार धारात्मक महत्वाकाक्षा को सामाजिक, सास्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक स्तर पर निश्चित स्वरुप प्रदान करती है।[1] किसी नवस्वतन्त्र राष्ट्र के निर्माण की यह प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है। नेहरु ने अपने शासन काल के इस दूसरे दशक मे इस प्रक्रिया को अपने तथा अपने सहयोगियो द्वारा बनाये रखा। पण्डित नेहरु के सहयोगियो में महलनोबिस, जिन्होने रुस के विकास को ध्यान मे रखकर, पचवर्षीय योजनाओ को तैयार कर देश के आर्थिक विकास को केन्द्र मे रखा। पण्डित नेहरु और उनके सहयोगी यह जानते थे कि किसी भी राष्ट्र के निर्माण की पहली शर्त है उसकी आर्थिक सुदृढता। इसलिए राष्ट्रनिर्माताओ ने इन पचवर्षीय योजनाओ मे भारत के आर्थिक विकास पर विशेष बल दिया। साथ ही राष्ट्र के विकास से सबधित लगभग सभी बिन्दुओ पर ध्यान रखा गया।

विकास के इन प्रारम्भिक चरणों मे आर्थिक विकास के समक्ष तत्कालीन राष्ट्रनिर्माताओ तथा चिन्तको को अन्य बिन्दु अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण नही लगते थे। यही कारण था कि पचवर्षीय योजनाए अपने प्रथम चरण मे जहॉ अत्यन्त सफल रही वही दूसरे चरण से ही वो असतुलित दिखने लगी। विकास के इस चरण मे जिन अन्य बिन्दुओ पर भी ध्यान देने की आवश्यकता थी वो सरकारी उपेक्षा का शिकार रही। सरकारी बजट का अधिकाश हिस्सा राष्ट्रीय सुरक्षा, कृषि , विज्ञान और तकनीकी जैसे क्षेत्रों तथा अन्य ऐसे क्षेत्रों पर खर्च होता था जो राष्ट्र की तत्कालीन आवश्यकता थी। इन राष्ट्रीय समस्याओ के व्यामोह मे महिला प्रश्नो पर विचार करना न तो आवश्यक समझा गया और न ही इसकी आवश्यकता ही समझी गयी। इन उपेक्षाओ के होते हुए भी महिलाओ से संबधित सामाजिक प्रश्न राजनीतिक रुप से नही तो सामाजिक रुप से ही गम्भीरता पूर्वक लोगो के समक्ष उभरने लगे।

---

1 प्रोफेसर, सिह एल आर – "Problem of natıon building in India" जी बी पत सस्थान में प्रस्तुत शोध पत्रा ।

राष्ट्रीय आन्दोलन के समय महिलाओ से सबधित जो विषय विचारणीय थे जिन पर राष्ट्रीय नेताओ ने अनेक विचार प्रस्तुत किये वो सभी विषय स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात उतने मुखर नही रह गये थे। फिर भी महत्वपूर्ण "हिन्दू कोड बिल" के पश्चात "दहेज निरोधक कानून" जैसी सवैधनिक प्रक्रिया इस बात का प्रबल सकेत थी कि भारतीय राष्ट्रीय सरकार महिला विषयक प्रश्नो पर निष्क्रिय नही है।

औपनिवेशिक काल मे नारी सम्बन्धी विषयो के प्रति विशेष चिता व्यक्त की गयी थी। बाल–विवाह, सती प्रथा, पर्दा, वैधव्य के प्रति विशेष चिता थी। राष्ट् के विकास प्रक्रिया मे यह चिता बाद के दशकों मे उतने सघन रूप से नही दिखायी देती। नारी सम्बन्धी प्रश्नो पर सरकारी तथा सामाजिक दोनो ही स्तरो पर अनुकूल वातावरण भी तैयार नही किया गया। स्वय महिलाये राष्ट्रीय आन्दोलन के पश्चात निष्क्रिय और निस्तेज होने लगी। राष्ट्रीय प्रश्नो के समक्ष उन्होने नवस्वतत्र राष्ट्र के नवनिर्माण प्रक्रिया के मूल बिन्दु को भुलाकर पुन अपने पुराने स्वरूप को ग्रहण करने लगी। यह एक प्रतिगामी कदम था जो आने वाले वर्षो मे महिलाओ के विकास के सम्बन्ध मे घातक सिद्ध हुआ। इन उपेक्षाओ के होते हुए भी स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात के इस दूसरे दशक मे भारतीय समाज मे परिवर्तन स्पष्टत दिखने लगा । नवीन वैचारिक धरातल पर विभिन्न कारणो से नारी शिक्षा की आवश्यक्ता का आभास लोगो को होने लगा। नारी शिक्षा के नये परिवेश मे नारी की परिवर्तित भूमिका से लगभग सम्पूर्ण भारत आकर्षित हुआ। यह आकर्षण विशेष रूप से युवा पुरूषो मे दिखने लगा। इसके अनेक कारण थे। यद्यपि इस दशक मे शिक्षा का आवश्यकता से बहुत कम विकास हुआ किन्तु पारिवारिक तथा सामाजिक रूप से समाज तथा नारी के विकास मे शिक्षा की आवश्यकताओं को गम्भीरता दी जाने लगी।

यही कारण था कि समाज मे नारी की स्थिति तथा नारी विकास से सम्बन्धित प्रश्न गम्भीर स्वरूप ग्रहण कर राष्ट्रीय प्रश्नो से जुड गये। ये प्रश्न शिक्षा के माध्यम से न केवल महिलाओ अपितु समाज तथा राष्ट् दोनो के ही समक्ष गम्भीर स्वरूप ग्रहण करने लगे। महिलाओ के उत्थान के सम्बन्ध मे धीरे–धीरे राष्ट्रीय सहमति बनने लगी फलस्वरूप सरकार ने महिलाओ के विकास के गम्भीर प्रयास प्रारम्भ कर दिये और कहा कि भारत मे महिलाओ के विकास के लिए अति आवश्यक है लिग निर्धारित कार्यो पर विचार करना तथा उसमे परिवर्तन लाना। फलस्चरूप एक समिति का गठन किया गया। जिसे Committee of status of womenc in India (1974) जाना गया।

उत्तर प्रदेश का सामाजिक एव सास्कृतिक वातावरण इसके सभी क्षेत्रो मे लगभग समान है। नगरीय एव ग्रामीण दोनो ही स्तरो पर बालिकाओ एव महिलाओ की उपेक्षा सामान्य जीवन शैली है। शिक्षा से लेकर सम्पतित्तगत अधिकारो तक उसे दूसरे दर्जे की नागरिकता प्राप्त है। वो तमाम घरेलू ससाधन जो व्यक्तित्व के विकास मे साहयक सिद्ध होते है– पर बालको एव पुरूषो का अघोोषित अधिकार है। जो यहॉ के समाज की परम्परागत सोच है। कन्या का जन्म दुख का कारण माना जाता है। उत्तर प्रदेश के सभी क्षेत्रो मे व्यवस्था के इस स्चरूप को सामाजिक समझदारी के साथ अपरोक्ष रूप से बडे पैमाने पर स्वीकार किया जाता है। यह स्वीकृति परम्परागत व्यवस्था का हिस्सा है जिसे हम पितृसत्ता के माध्यम से समझ सकते है। परिवार जो समाज की बुनियादी इकाई है सबसे अधिक पितृसस्थातम सस्था है।[1] पुरूष ही इस संस्था का मुखिया है। पुरूष हीन परिवार समाज की दया और दमन दोनो ही स्थितियो से गुजरते है। यहीं से लडके और लडकी के मध्य ऊॅच–नीच का भेदभाव प्रारम्भ होता है। परिवार का मुखिया परिवार मे रहने वाले सभी स्त्री–पुरूषो पर नियत्रण रखता है।

---

1 मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? पृष्ठ– 10 " औरतो का ट्रेनिग एवं कम्युनिकेशन सेंटर।

अनेक नियत्रण सिर्फ महिलाओ पर लागू होता है। पारिवारिक पदानुक्रम मे पुरूष सदैव ही ऊपर रहता है। गर्डालर्नर के अनुसार समाज मे व्यवस्था बनाए रखने और पदानुक्रम जारी रखने मे परिवार एक अहम भूमिका निभाता है। वे लिखती है। " परिवार अपने आइने मे न केवल सामाजिक व्यवस्था को प्रतिबिम्बित करता है ओर बच्चो को उसे मानने का पाठ पढाता है बल्कि परिवार लगातार उस व्यवस्था को गढता और मजबूत करता चलता है।" 1

उत्तर प्रदेश किसी भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था का सबसे उपयुक्त उदाहरण है। पारिवारिक हितो के लिए व्यक्तिगत हितो के त्याग की आवश्यक्ता होती है जो यहॉ के परिवारो की ऐतिहासिक विरासत है। 2 यहॉ की परम्परा मे आदर्श स्त्री को सीता के रूप मे देखा जाता है। यही कारण है कि यहॉ की स्त्रियॉ पशुओ के समान बेजुबान होती है। यहॉ का समाज इस पर गर्व करता है। 3 यहॉ के ग्रामीण क्षेत्रो मे आज भी बडे सयुक्त परिवारो की व्यवस्था कमोबेश जारी है। परिवारो का टूटना अच्छा नही माना जाता। दो तीन पीढियो तक साथ रहने की परम्परा आम बात है। धीरे-धीरे यह बात स्पष्ट होने लगती है कि यह सब किसी व्यक्ति विशेष का स्वभाव या प्रकृति नही। यह सब कुछ एक "व्यवस्था" के अन्तर्गत है। 4 इस सम्बन्ध मे 'सिल्विया वैवी' कहती हैं- " यह समाजिक ढाचो और रिवाजो की एक व्यवस्था है।" वह आगे कहती है- पितृसत्ता को एक व्यवस्था के रूप मे समझना जरूरी है क्योकि इस व्यवस्था से यह विचारधारा जुडी है कि पुरूष स्त्रियो से बेहतर होते है। महिलाओ को पुरूषो की सम्पत्ति की तरह नियत्रण मे रहना चाहिए। 5 यह परिवेश उत्तर प्रदेश के लगभग सभी परिक्षेत्र मे समान रूप से पाया जाता था तथा थोडे बहुत तथाकथित अन्तरो के साथ आज भी पाया जाता है।

---

1 गर्डा लर्नर, द क्रियेशन ऑफ पेट्रियार्की आक्सफोर्ड एण्ड न्यूयार्क ' आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस पृष्ठ – 217 ।

2 यह परम्परा सूर्यवशी राजाओं की कथाओं पर आधारित है विशेषकर 'राम' के सदर्भ में ।

3 यहॉ के लाकगीत।

4 मसीन कमला, पितृसत्ता क्या है? पृष्ठ 25 औरतों का ट्रेनिग एव कम्युनिकेशन सेंटर ।

5 सिल्विया वैल्बी।

स्वतत्र भारत मे परिवर्तन स्वाभाविक था और सविधान लागू होने तथा राष्ट्रीय परियोजनाओ के लागू होते ही यह परिवर्तन दिखायी देने लगा। इस परिवर्तन मे सबसे महत्वपूर्ण भूमिका शिक्षा की थी। यद्यपि की, भारत सरकार ने दशको से राष्ट्रीय शिक्षा पर अपने बजट खर्चे का मूल्याकन नही किया। यहॉ शिक्षा की आवश्यकताओ को महसूस तो किया गया किन्तु इस पर केन्द्र सरकार का बजट खर्चा मात्र 6 प्रतिशत रहा।[1] जिसे विभिन्न पार्टियॉ 6 प्रतिशत से 10 प्रतिशत करने की माग कर रही है। यह खर्च भारत जैसे बडे और आबादी वाले देश के लिए बहुत कम था। राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा की उपेक्षा का असर राज्य स्तर पर पडना स्वाभाविक था। चूँकि यह प्रदेश बडा होने के साथ–2 परम्पराओ का गढ है इसलिए यहॉ शिक्षा के विकास की आवश्यकता को महसूस किया जा रहा था।

एक देश जहॉ परम्पराये हजारो वर्ष पुरानी हो और जो मानव विकास से समाज के आचरण और व्यवहार को संचालित करती हो वहॉ आप अति आधुनिक सामाजिक राजनैतिक विचारो को आरोपित नही कर सकते। इसके लिए सघन प्रयास तथा समाज को मानसिक रूप से तैयार करने की आवश्यक्ता होती है।[2] यह सघन प्रयास शिक्षा के माध्यम से ही किया जा सकता है। जनसख्या के आकडे बताते है कि उत्तर प्रदेश साक्षरता के क्रम मे 14वे स्थान पर है। 16 बडे राज्यो मे 14वॉ स्थान यहॉ के सम्पूर्ण शिक्षा की असलियत को उजागर करता है।[3] 1992–93 के National family health survey के आकडे बताते है कि दो तिहाई से अधिक महिलाए तथा 6 साल उम्र के ऊपर के लगभग एक तिहाई पुरूष निरक्षर है।[4] NFHS की यह गणना जनगणना आकडो 74 7 प्रतिशत महिला तथा 44 3 प्रतिशत पुरूषो के आंकडे भी कम है। आजादी के 50 वर्षो के बाद हमारी शैक्षिक उपलब्धि न केवल निराशाजनक है अपितु चौकाने वाली है।

---

1 सी पी एम तथा अन्य पार्टियों के चुनाव घोषणा पत्र देखिये।

2 राव आर मिश्रा एस के Change of attitude as function of some personality factors & jornal of social phychology 1x101 63 pp 311-17

3 जनगणना रिपोर्ट 1991

4 National health survey 1992–93 Uttar Pradesh.

उत्तर प्रदेश को हम पांच प्राकृतिक भागो मे विभाजित किया गया है। — अध्ययन की सुविधा के अनुसार ये क्षेत्र है।

1. उत्तर प्रदेश के पहाडी प्रदेश।
2 पश्चिमी उत्तर प्रदेश।
3 मध्य उत्तर प्रदेश।
4 पूर्वी उत्तर प्रदेश।
5 बुन्देल खण्ड।

स्वतत्रता के पश्चात सम्मिलित रूप से इस क्षेत्र को उत्तर प्रदेश के रूप मे जाना जाता है किन्तु इन क्षेत्रो की अपनी भौगोलिक विभिन्नता है जो वहॉ के क्षेत्रगत विकास को प्रभावित करती है। यह क्षेत्रगत विभिन्नता हमे शैक्षिक सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक सभी क्षेत्रो मे देखने को मिलती है।

इन सभी क्षेत्रो मे शिक्षा के विकास की आवश्यकता को तो महसूस किया गया किन्तु नारी शिक्षा फिर भी उपेक्षा का शिकार रही। इस उपेक्षा का कारण स्पष्ट है। इस सदर्भ मे इतिहासकार मेरिडिथ वर्थविक कहती है।, ' जहॉ पुरूषो की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से नौकरी से जुडी है वही स्त्री शिक्षा की कोई आर्थिक भूमिका नही थी। स्त्री शिक्षा का उद्देश्य नारी का उन्नयन न होकर सिमटकर परिवार की उन्नति रह जाता है।'' सामाजिक स्तर पर परिवार बहुत से मानुषिक समर्पण मॉगता है विशेषकर स्त्रियो से । महिलाओ को परिवार पर आर्थिक एव भावात्मक रूप से निर्भर होना चाहिए। परिवार के बाहर सामाजिक जीवन में असफल होना चाहिए ओर पुरूष के बराबर काम और समाज मे सतोषजनक हिस्सेदारी निभाने में असमर्थ होना चाहिए।

उनको स्ववलम्बी नही होना चाहिए। अगर ऐसा होता है तो परिवार के निर्माण प्रक्रिया मे बाधा आती है।[1] परिवार मूल रूप से उन तत्वो का सगठन करते है जो नारी को प्रेम के ऐच्छिक साहचर्य मे छिपाकर रखते है। परिवार नारी को न्यूनतापूरक श्रमशील भी बना देता है यही कारण है कि वह श्रम बाजार की बहुत सस्ती श्रमशक्ति बन जाती है इन सभी परिस्थितियो का प्रत्यक्ष लाभ परिवार के पुरूषो को मिलता है। इस वजह से सामाजिक परिवर्तन की ओर उनकी विशेष रूचि नही होती है, आज की पारिवारिक सस्था एक लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया का प्रतिफल है। जिसमे आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियो ने विशेष भूमिका निभाई है। इन सभी परिस्थितियो ने मिलकर स्त्री शिक्षा को प्रभावित किया परिणाम स्वरूप नगरो मे जहॉ परिवार मे वैचारिक परिवर्तन नजर आ रहा था स्त्री शिक्षा तेजी से बढ रही थी किन्तु गॉवो मे स्थिति वही बनी हुई थी।[2] गॉव के स्तर पर राज्य सरकार की उदासीनता ने विकास प्रक्रिया मे गॉव एव शहर को स्पष्ट रूप से विभाजित कर दिया। नगरो ने जहॉ आधुनिकता को अपनाया वही ग्रामीण क्षेत्रो मे परम्परा अपनी जडे जमाये हुए थी। यही कारण था कि भारत का विकास हमें दो स्तरो पर नजर आता है। 1957 मे नगरो की स्थितियॉ सक्रमण काल से गुजर रही थी। अधिकांश परिवार अपनी रूढियो के मजबूत बन्धनो को तोडने के प्रयास मे जुटे थे और घर की बालिकाओं को शिक्षा प्राप्ति के लिए बाहर भेज रहे थे। वही दूसरी और गॉव अभी भी अपनी पीढियों के आदर्श को बनाये हुए थे। स्थिति के इस विरोधाभास से न केवल उत्तर प्रदेश अपितु सम्पूर्ण भारत गुजर रहा था।

1964–66 के Education and national development report मे कहा गया कि " for ful development of our human resources, the improvement of homes, and moulding the character of children during the most impressionable years of infancy the education of women is of even greater importence than that of men.[3]

---

1 अग्रवाल ममता पृष्ठ 11 एज्यूकेशन एण्ड माडर्नाइजेशन ।
2 वही -
3 अग्रवाल ममता एजूकेशन एण्ड मार्डनाइजेशन पृष्ठ – 30

कमीशन ने कहा कि हम शिक्षा के माध्यम से बहुत बडा परिवर्तन ला सकते है, हिसा के बिना। शिक्षा एक ऐसा हथियार है जो समाज मे मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के तहत विकास करता है।[1]

जहॉ महिलाये सम्पूर्ण मानव समाज की आधी दुनिया है वही किसी भी राज्य के लिए इस आबादी के आधुनिकीकरण मे बहुत सी कठिनाइयॉ है। यह आधी आबादी ही गहरे स्तर पर परम्पराओ का पोषण और सचालन करती है यह अशिक्षा और धर्म के बन्धनो के कारण है। मानव इतिहास मे धर्म जहॉ आस्था और विश्वास से जुडी एक सफल प्रक्रिया रही वही वर्गीय जातीय और महिला शोषण जारी रखने के लिए शोषको को पूर्ण दार्शनिक एव वैधानिक साथ ही नैतिक अधिकार प्रदान किये।[2] भारत जैसे गरीब देश के सामती समाज मे धर्म के विस्तार के लिए सबसे अधिक उपजाऊ जमीन महिलाओ मे मिलती है क्योकि महिलाओ को इस तरह की मानसिक व शारीरिक गुलामी मे रखा गया जहॉ उनका कोई स्वतत्र अस्तित्व नही रहता। दक्षिण एशिया के देशो मे इसकी मौजूदगी और ताकत बहुत ज्यादा है। उदाहरण के रूप मे एक लोकतात्रिक देश होते हुए भी भारत मे विवाह, तलाक और उत्तराधिकार के मामलो मे किसी व्यक्ति की पहचान उसके धर्म पर निर्भर करती है।[3] धर्म के प्रति समाज की आस्था नारी शिक्षा को बाधित करने मे लम्बे काल तक सहायक रही। यह स्थिति शहरो मे इस दशक में टूटती हुई दिखती है। महिलाओ के वर्गीय विकास की स्थिति एक पिरामिड के सदृश नजर आती है जहॉ महिलाओ की अधिसख्क आबादी निरक्षर तथा विभिन्न तरह के शोषणो का शिकार है वही जिन परिवारो मे शैक्षिक विकास हुआ वहॉ स्थितियॉ बेहतर है दूसरी तरफ छोटी जाति की महिलाए एवं मुस्लिम महिलाओ मे विकास प्रक्रिया न के बराबर हैं

---

1 एजूकेशनल एण्ड नेशनल डेवलपमेट रिर्पोट सन 1964–66

2 स्वामीनाथन श्रीलता, महिला व धर्म, इतिहास बोध नारी अक।

3 गुन्नार मिरडिल, एशियन ड्रामा।
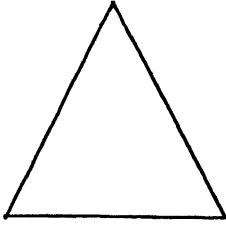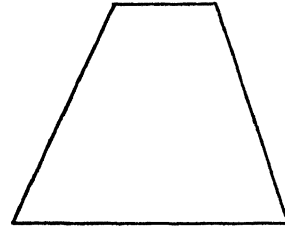
नगरीय क्षेत्र

उपरोक्त पिरामिड इस तथ्य को इगित करते है कि उत्तर प्रदेश की अधिकाश महिला आबादी निरक्षर है। ग्रामीण स्तर पर यह निरक्षरता बहुत अधिक है जबकि शहरी क्षेत्रो मे यह प्रतिशत घटता नजर आता है। अनुसूचित जाति तथा ग्रामीण महिलाये मूलत न केवल अशिक्षित है बल्कि निरक्षर भी। दूसरी तरफ शहरी क्षेत्रो मे पिरामिड का शीर्ष महिलाओ मे शिक्षा के विकास को इंगित करता है इसके कारण शहरी क्षेत्रो मे निरक्षर महिलाओ मे शिक्षा के निकास की प्रतिध्वनि मिलती है। 55 वर्ष की 300 महिलाओं का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि उच्च हिन्दू महिलाओ मे साक्षरता का प्रतिशत अन्य की तुलना मे अधिक है। 100 हरिजन महिलाओ तथा 100 मुस्लिम महिलओ मे यह प्रतिशत चिन्ताजनक है।

महिलाये	साक्षर	निरक्षर	शिक्षित	कुल
उच्च हिन्दू	30	50	20	100
अनु जाति व अन्य	10	87	3	100
मुस्लिम	20	72	8	100

नगरीय क्षेत्र मे 55 वर्ष तथा उससे ज्यादा उम्र की महिलाओ का अध्ययन।

महिलायें	साक्षर	निरक्षर	शिक्षित	कुल
उच्च हिन्दू	10	85	5	100
अनु0 जाति व अन्य	3	96	1	100
मुस्लिम	5	92	3	100

ग्रामीण क्षेत्र में 55 वर्ष तथा उससे अधिक उम्र की महिलाओ का अध्ययन

यह अध्ययन इस को स्पष्ट करता है कि महिलाओ मे 1957—67 के मध्य शिक्षा का विकास तो हो रहा था किन्तु इसकी गति बहुत धीमी थी। ग्रामीण तथा नगरीय महिलाओ मे यह अन्तर बहुत बडा शून्य उत्पन्न करता है। महिला शिक्षा मे कमी का बहुत बडा कारक परम्परा के साथ गरीबी भी है। परम्परा जहॉ महिलाओ को घर मे रहने की सलाह देता है वही गरीबी उस विचार को मजबूरी के कारण पुष्ट करती है। सन 1950 मे एम.एस ए राव ने शिक्षा द्वारा समाज परिवर्तन विषय पर मालाबार मे अध्ययन किया था। उनका दृष्टिकोण ऐतिहासिक था। उन्होने मानवीय कार्यो को 6 भागों मे विभाजित किया और पाया कि ये सभी गतिविधियॉ समाज की सस्कृति तथा नियमो को इगित करती है। सर्वेक्षण तथा प्रश्नावली पर आधारित आकडे गहरी छानबीन के पश्चात डा0 राव ने पाया कि मालाबारी जीवन के सूक्ष्मतम बिन्दुओ तक ब्रिटिश सस्कृति का गहरा प्रभाव है। इस विदेशी सस्कृति के सम्पर्क में वहॉ के परम्परागत मूल्यो के स्थान पर नये मूल्यो का सृजन किया है और समस्त समाज की विचारधारा तथा व्यवहारिक जीवन मे बदलाव आ रहा है। जो स्पष्ट रूप से दिखता तो नही है किन्तु समाज संक्रमण के काल से गुजर रहा है।

1 राव एम एस ए सोशल चेन्ज इन मालाबार पापुलर बुक, बाम्बे 1957 ।

कुछ इसी तरह का कार्य डैनियल लर्नर ने मध्य पूर्व मे किया कि आधुनिकता व्यवहारिक व्यवस्था है और यह गतिशील है। सक्रमण काल शिक्षा तथा अन्य सस्कृतियो के सम्पर्क से ही आता है। 1 आधुनिकता विचारो मे स्वतत्रता और सूक्ष्म दृष्टि देती है जो नयी व्यवस्था को रचने मे सहायक होता है।

इस तरह के तमाम अध्ययन शिक्षा आधुनिकता तथा विकास के संदर्भ मे किये गये किन्तु इससे महिलाओ को जोडकर उनके सामाजिक स्तर पर अध्ययन लगभग न के बराबर हुए है। जो थोडे बहुत अध्ययन हुए है उनमे चन्द्र कला हाटे मोहिनी सेठ तथा भारत सरकार की रिपोर्ट विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

चन्द्रकला हाटे ने अपने अध्ययन का विषय स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात महिलाओ के सामाजिक स्तर मे परिवर्तन रखा। इस अध्ययन मे महाराष्ट्र की महिलाओ के साथ कार्य किया जिसमे उन्होने नारी जीवन के लगभग सभी पहलुओ का अध्ययन कर विश्लेषण किया और पाया कि तस्वीर बहुत साफ नही है। उन्होने पाया कि सैद्धान्तिक बराबरी को हम व्यवहारिक रूप नही दे पाये है। विशेषकर मध्यम वर्ग तथा निम्न मध्यमवर्गीय धरातल पर। थोडे बहुत अर्थो मे उनका जीवन स्तर सुधरा अवश्य है किन्तु पूरी तरह नही।

इस विषय पर दूसरा महत्वपूर्ण अध्ययन Report of the committee on the status of women in India भारत सरकार का है। कमेटी ने भारतीय महिलाओ का सामाजिक स्तर जानने का प्रयास किया।

---

1 Lerner Dainict, the passing of traditional society ' modetning the middle east

उसमे परिवार, विवाह, दहेज, विधवा, तलाक तथा साथ में स्त्री शिक्षा। दूसरी कमेटी ने यह भी जानने का प्रयास किया कि राजनीति मे महिलाओ की भूमिका क्या है, किन जगहो पर वस स्वतत्र निर्णय लेती है तथा रोजगार सम्बन्धी विषय मे महिलाओ की स्थिति क्या है? अपने अध्ययन के दौरान कमेटी ने पाया कि आजादी के पश्चात देश की जनता ने काफी हद तक अपने समाज मे परिवर्तन को स्वीकारा है। कमेटी ने यह पाया कि महिलाओ से सम्बन्धित लगभग सभी प्रश्नो पर शहरो के लोग ग्रामीण क्षेत्रो से आगे इसका एक मात्र कारण शिक्षा है।

57–67 के मध्य उत्तर प्रदेश मे नारी शिक्षा का विकास :–

महिला शिक्षा की दृष्टि से उत्तर प्रदेश मे यह दशक सतोषजनक कहा जा सकता है। यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रो मे हम इसे सन्तोषजनक नही कह सकते क्योकि वहॉ अतिरिक्त आर्थिक आय के साधन के अभाव मे सम्पूर्ण शिक्षा ही बाधक रही है। ऐसी स्थिति मे ग्रामीण क्षेत्रो मे बालिका शिक्षा की अपेक्षा करना ही गलत है। जहॉ तक पूर्वी उत्तर प्रदेश का प्रश्न है यहॉ बालिका शिक्षा अन्य क्षेत्रो की तुलना मे सर्वदा उपेक्षित रही है स्वतत्रता प्राप्ति के दूसरे दशक तक सम्पूर्ण पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलो मे कोई भी महिला डिग्री कालेज नही था। सिर्फ बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय तथा गोरखपुर विश्वविद्याालय इसका अपवाद था। इस दशक के प्रथम चरण मे जहॉ महिलाये पर्दे मे रहती थी अपितु वो पुरूषवादी विचारधारा को ही अपना स्त्राी धर्म मानते हुए पढने मे अपनी रूचि नही दिखाती थी। नार्दन इण्डिया पत्रिका के एक लेख में सुचेता कृपलानी लिखती है " क्या कारण था कि स्वतत्रता आन्दोलन मे ब्रिटिशों के विरूद्ध अपने भाइयो तथा पुरूष सहयोगियो के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर भारतीय महिलाए लडी जबकि उनमे 90 प्रतिशत निरक्षर महिलाये थी। '1

---

1 नार्दन इण्डिया पत्रिका , जून 17 1961, इलाहाबाद उ0 प्र0।

शायद हमने अपनी नीतियो मे कही चूक की है। हमने महिलाओ के इस उत्साह और समर्थन को कोई नवीन वैचारिक दिशा नही प्रदान की है। इसके मेल मे हमारी महिला शिक्षा नीति ही रही है। और यही कारण है कि सामाजिक परम्परा गरीबी, तथा दोषपूर्ण शिक्षा नीति के कारण बालिकाओ का प्रतिशत स्कूलो और कालेजो मे नही बढ रहा है।[1] इन स्थितियो को देखते हुए National Council of Womens Education तथा राज्य सचिवालय ने मिलकर महिला शिक्षा को बढावा देने के लिए 10 करोड रूपये आवटित किये जिससे सरकार की यह नीति सुचारू रूप से चले। इसी कार्यक्रम के लिए 'स्त्री शिक्षा राष्ट्रीय परिषद' ने बालिकाओ की शिक्षा के व्यापक प्रचार व प्रसार के लिए नियोजन आयोग से अधिक धन राशि की माग की गयी।

इन सरकारी योजना के कार्यान्वयन का प्रतिफल बाद के वर्षो मे स्पष्ट रूप से दृष्टगत होता है। 1965 में उत्तर प्रदेश सरकार ने शिक्षा आयोग को एक ज्ञापन दिया जिसमे कहा गया कि प्रदेश सरकार शिक्षा के विकास मे पर्याप्त रूप से सक्षम नही है। राज्य अपनी आय का लगभग 20 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च करता है परन्तु यह पर्याप्त नही है। जहॉ तक महिलाओ की शिक्षा का प्रश्न है उत्तर प्रदेश मे धीरे–2 स्कूलो कालेजो मे इनकी सख्या बढ रही है। निम्न आकडे दर्शाते है कि क्रमश महिलाओ की सख्या मे आनुपातिक वृद्धि हुई है।

---

1 वही अक्टूबर 12 1961 , इलाहाबाद उ0 प्र0

उ० प्र० के विभिन्न विश्व विद्यालयो तथा महाविद्यालयो मे छात्रा छात्राओ की सख्या –

वर्ष	छात्र	छात्राए	योग
1961–62	1,10,389	5,986	1,16375
1962–63	1,13,516	7,151	1,20,667
1963–64	1,05,643	26,514	1,32,157
1964–65	1,12,205	28,672	1,40,377
1965–66	1,19,578	30,112	1,49,690
1966–67	1,24,702	32,384	1,57,086

उपरोक्त आकडे इस बात के स्पष्ट प्रमाण है सामान्य शिक्षा मे छात्राओ की सख्या बढी है किन्तु यह छात्रो से अपेक्षाकृत बहुत कम रही है। 1961 से लेकर 1967 तक की स्थितियॉ इस विकास को इगित करती है कि महिला शिक्षा मे सरकार की योजनाए नगरीय क्षेत्रो मे अधिकाशत सफल रही है। यह सफलता ग्रामीण क्षेत्रो मे लगभग न के बराबर रही है 1961 मे जब विश्वविद्यालयो मे 1,10,389 छात्र थे तो छात्राए मात्र 5,986 थी। यह अन्तर इस बात का प्रमाण है कि परिवार के अतिरिक्त आर्थिक ससाधन के द्वारा ही स्त्री शिक्षा सभव थी दूसरी तरफ बालको की शिक्षा को सामान्य आर्थिक श्रेणी के परिवारो ने आवश्यक समझा। इसके पीछे हमारी परम्परागत विचारधारा कार्य कर रही थी कि स्त्री शिक्षा आवश्यक नही है। 1966–67 तक सरकार अपने स्त्री शिक्षा भी उतनी ही आवश्यक है जितनी पुरुष शिक्षा परिणाम स्वरुप यह संख्या 32,384 के रुप मे दृष्टिगत होती है।

---

1 Education in India (Report) for the years 1961-62, 1962-63, 1963-64, 1964-65, 1965-66, 1966-67 - Vol -I Ministary of Education and Social welfare, Government of India.

1957–67 के मध्य सामाजिक समस्याये तथा महिला सम्बन्धी कानून अधिकाश देशो मे कानूनी व्यवस्था तथा बुर्जुआ दोनो है। भारत का सविधान इससे अछूता नही है। 1956 मे हिन्दू विधि में हुए परिवर्तन के पश्चात विशेषज्ञो द्वारा यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि कानून निर्माण तथा उसके व्यवहारिक पक्ष मे अत्यन्त असमानता है। ससद और सरकार अपने द्वारा बनाये गये कानूनो के व्यवहारिक पक्ष से अत्यन्त असन्तुष्ट रही किन्तु अन्य सामाजिक कुप्रथाओ के निषेध के लिए उपयुक्त कानूनो की निरतर आवश्यकता होने लगी। यही कारण था 6 अगस्त 1959 को लोक सभा ने दहेज निषेध विधेयक को एक प्रवर समिति के सुपुर्द कर दिया। समिति से यह आशा की गयी कि वह सदन के आगामी अधिवेशन मे अपनी रिर्पोट सदन मे पेश कर दे।

1947 से 1967 तक के समाचार पत्र दहेज की समस्या की दृष्टि से ही नही अपितु नारी सम्बन्धी प्रश्नो की दृष्टि से अत्यत विचारणीय है। इन 20 वर्षो के समाचार पत्रो के अध्ययन से यह बात स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि समाचारो मे स्त्री विषयक समाचार जिसे अपराध की श्रेणी मे रखा जा सकता है, मे 1952 के पश्चात धीरे दहेज हत्या के रूप मे दृष्टिगत होता हैं जहॉ पहले स्त्री के अपहरण उसको बहलाने फुसलाने तथा भगाने के समाचार स्त्री से जुडे थे वही अब स्त्रियों के जलकर मरने के समाचार प्रमुखता ग्रहण करने लगे। 1952 के 9 अगस्त के लीडर समाचार पत्रा मे एक स्त्री के जलकर मर जाने की एक बहुत छोटी खबर छपती है। 1952 तक दहेज हत्याये चूँकि विचारणीय प्रश्न नही था इसलिए इसे न तो समाचार पत्र मे प्रमुखता मिली और न ही समाज मे किन्तु इस तरह की घटनाओ मे उत्तरोत्तर वृद्धि हुई जिसके कारण ससद ने 1 जुलाई 1961 मे दहेज प्रतिषेध अधिनियम बनाया और दहेज लेने और देने दोनो को अपराध घोषित कर दिया।

इस कानून के अनुसार – दहेज लेने या देने वालो के लिए कडी सजा का प्रावधान किया। अधिनियम के अनुसार
दहेज लेने या देने पर–

5 वर्ष तक का कारावास
15,000 रूपये जुर्माना।
या
दहेज की राशि यदि 15000 रूपये से ज्यादा हो तो उस राशि के बराबर जुर्माना।
साथ ही दहेज मागने की सजा 6 माह का कारावास और जुर्माना है

समाचार पत्रों के अध्ययन पर आधारित इस अधिनियम मे भी अन्य अधिनियमो की तरह अनेक प्रावधान है। इन प्रावधानो को व्यवहारिक स्वरूप प्रदान करना अत्यत कठिन है। उदाहरण के लिए इस अधिनियम मे दहेज मागने की सजा 6 माह का कारावास है। कानून चूकि साक्ष्य मागता तो यह सिद्ध करना कि अमुक व्यक्ति दहेज माग रहा था अत्यत कठिन है इसलिए यह प्रक्रिया समाज तथा उसकी आपसी समझ पर निर्भर है इसलिए कानून वहा बिल्कुल असहाय प्रतीत होता हैं स्वतत्रता के तीसरे दशक मे प्रस्तुत होने वाला स्त्री विषयक यह कानून सबसे महत्वपूर्ण था किन्तु आज 31 वर्ष पश्चात भी यह मात्र कागजी दस्तावेज है और कुछ नही। दूसरी तरफ इस कानून के बनने के पश्चात दहेज तथा दहेज से सम्बन्धित अन्य अपराधो मे आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि होने लगी। समाचार पत्र के अध्ययनो से जो बातें स्पष्ट होती है वह समाज में दहेज की प्रथा तथा उसके गणित रूप को स्पष्टत प्रकट करती है।

समाचार पत्रो मे दहेज से सम्बन्धित महिला मृत्यु के सदिग्ध प्रकरण –

समाचार पत्र	वर्ष 1957–59	1959–61	1961–63	1963–65	1965–67
नार्दन इण्डिया पत्रिका	20	23	29	40	61
लीडर	27	20	31	39	59
भारत	47	49	40	45	70

इन आकडो से यह स्पष्ट है कि महिलाओ से सम्बन्धित कुप्रथाओ मे एक नवीन कुप्रथा बहुत सहज और प्रभावी तरीके से समाज मे अपना स्थान बनाने लगी और इस कुप्रथा को अपराध घोषित किये जाने के पश्चात भी अघोषित रूप से स्वीकार किया गया। तत्कालीन वयोवृद्ध कांग्रेसी नेता एम ए अणे ने कहा कि " दहेज की प्रथा हमारे देश मे हाल ही मे प्रारम्भ हुई है जबकि भौतिक वाद को प्रधानता प्राप्त हुई है"। 9 अगस्त 1959, रविवार को भारत समाचार पत्र मे अपने सम्पादकीय में लिखा कि, " वैसे तो समाज मे दहेज प्रथा की कडी निंदा और आलोचना की जाती है और उसे समाज का एक बडा कलंक माना जाता है फिर भी यह दुख की बात है कि इस प्रथा का उन्मूलन नही हो पा रहा है। इसके अभिषाप से बहुत लोग कष्ट उठाते है और उत्पीडित होते है।"

समाचार पत्रो के अध्ययन के आधार पर –

दहेज तथा दहेज हत्याओ ने दहेज की विभीषिका को अत्यन्त विकराल बना दिया है। दहेज चूकि समाजिक सदर्भो से जुडी घिनौनी आर्थिक प्रक्रिया है इसलिए इसका समाजगत विश्लेषण अतिआवश्यक है। अग्रेजो द्वारा सृजित नयी आर्थिक प्रणाली मे मध्यमवर्ग के उदय ने जनसख्या के एक बहुत बडे हिस्से को क्रय शक्ति मे क्रमश वृद्धि की जो सामान्यतया उच्च जाति के सम्मान प्राप्त किन्तु अभावग्रस्त लोग थे।

नवीन आर्थिक प्रक्रिया तथा बढी हुई क्रयशक्ति का उन्होने सामन्ती प्रक्रिया के तहत सचालन कर प्रतिष्ठा अर्जित करने का प्रयास किया और इसके लिए इस मध्यम वर्ग मे अपनी सक्षिप्त पूँजी को मिथ्या अडम्बर के इस प्रयोजन पर खर्च करना आरम्भ किया। समाज का स्वरूप अब और अधिक जटिल हो गया क्योकि एक तरफ दहेज कन्या विवाह मे बाधक था वही दूसरी तरफ बाल विवाह जैसी प्रथा समानान्तर रूप से चल रही थी। ऐसा नही था कि बाल विवाह करने वाले समाज दहेज से प्रभावित नही हुए। उन क्षेत्रो तथा समाजों मे जहॉ बाल विवाह होते थे मे भी दहेज ने अपनी जगह बनायी और गौने [1] के समय दहेज की रकम मागी जाने लगी । मागी गयी यह राशि सम्मान और गौरव के साथ वर पक्ष को सुविधाजनक रूप से दी जाने लगी। फलस्वरूप यह कुप्रथा आश्चर्यजनक रूप से विकराल होती गयी।

वो समाज जहॉ जीवनयापन श्रम पर आधारित है वहॉ आज भी दहेज सम्बन्धी अपराध नगण्य है। यह एक बहुत विशाल वर्ग है जहा कि समस्याये अलग है और उनका अपराध अलग है इसलिए निचले तबको मे साधारण रूप से विवाह एक आवश्यक नैसर्गिक और सृष्टिगत आवश्यक्ता के रूप में किया जाता है।

---

1 विवाह के कुछ वर्षो पश्चात जब कन्या बडी होकर पहली बार ससुराल जाती है।

उत्तर प्रदेश मे दहेज अनेक बार जातिगत श्रेष्ठता का भी प्रदर्शन करता है। यह सामाजिक रूप से स्वीकार्य सत्य था कि कुछ सम्पन्न जातियॉ जैसे– क्षत्रियो, वैश्य, ब्राह्मण अपनी कन्या के विवाह मे अत्यधिक दहेज देते है। ऐसा नही था कि समाज मे दहेज को मान्यता नही थी[1]। पूर्वी उत्तर प्रदेश, कुमायूँ आदि के लोकगीतो मे पुत्री के सुखी जीवन की कामना के साथ उसे पर्याप्त दहेज देने के लिए भी आग्रह किया गया है। लोकगीतो की गहरी छानबीन से यह पता चलता है कि धन की कमी के कारण हमेशा ही सुयोग्य तथा सुन्दर कन्या को उसके योग्य वर नही मिलता है जिस पर उसका पिता उसे सात्वना देता है कि पुत्री जिस तरह के वरो का तुम वर्णन कर रही हो उनका मूल्य बहुत अधिक है और वो मेरी सामर्थ्य के बाहर है इसलिए तुम मेरे द्वारा चुने गये व्यक्ति से विवाह करो।[2]

पूर्वी उत्तर प्रदेश के आजमगढ जिले के छह ग्रामो के अध्ययन से यह पता चलता है कि स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात के 20 वर्षो मे पूँजीवादी सस्कृति का प्रसार धीरे–2 किन्तु हो रहा था फलस्वरूप कन्या का विवाह दहेज के कारण समस्या बनता जा रहा था। पूर्व मे जहॉ पहले सिर्फ आयोजन पर होने वाले खर्च से किसानों को कर्ज लेना पडता था वही अब विवाह के लिए निर्लज्जता पूर्वक खुलकर मॉगी गयी राशि या वस्तु विशेष समस्या का कारण थी। गॉवो के अधिकाश लोगो ने (जो 55 से 60 वर्ष के उम्र के थे) यह स्वीकार किया कि उसके घरो मे कन्या के विवाह के समय गहने तथा खेत गिरवी रखना सामान्य प्रथा थी। जिसे सब सामान्यत समझते थे किन्तु अब ये चीजे गिरवी रखकर काम नही चलता बल्कि इसे बेचना पडता है यही कारण था कि सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश में कन्यायें जन्म के उपरान्त उपेक्षा का शिकार रही है।

---

1 जैसा कि श्री एम ए अणे कहते है कि इसका प्रचलन अभी हुआ है

2 पूर्वी उत्तर प्रदेश का लोगीत।

आकडे बताते है कि जन्म के पश्चात लडकी की मृत्युदर लडकों की तुलना में अधिक है।

तालिका – 1

सम्पूर्ण मृत्यु दर NFHS (1991–92)

उम्र	लड़का	लडकी	कुल
0–4	28 5	34 9	31 6
05–14	2 6	2 3	2 5
15–49	3 8	4 1	3 9
50–00	36 8	32 3	34 8
डकर	11 7	12 1	11 9

तालिका – 2

सम्पूर्ण मृत्यु दर SRS (1991)

उम्र	लडका	लडकी	कुल
0–4	33 2	38 4	35.6
5–14	2 2	2 6	2 4
15–49	3.8	3 8	3 8
50	32 9	28 8	30.9
CDR	11 1	11 6	11 3

---

1 नेशनल फेमिली हेल्थ सर्वे 1992–93 उत्तर प्रदेश (NFHS)

2 रजिस्ट्रेशन सिस्टम डाटा 1992–93 भारत सरकार (SRD)

तालिका एक नेशलन फेमिली हेल्थ सर्वे 1992–93 उत्तर प्रदेश का है तथा तालिका दो रजिस्ट्रेशन सिस्टम डाटा, भारत सरकार का है दोनो इस बात का साक्ष्य प्रस्तुत करते है कि लडकियो की मृत्युदर 0–4 की अवस्था मे लडको की तुलना मे कही अधिक है। यह आकडे 1992–93 के है जब बालशिशु हत्या जैसे अनेक कुप्रथाओ के लिए कडे कानून बनाये गये है तथा इनको कडाई से लागू करने के प्रावधान है

महिलाओ के प्रति पारिवारिक हिंसा –

यदि किसी महिला का पति या पति के रिश्तेदार उसके साथ क्रूर व्यवहार करे तो उन्हे 3 वर्ष की जेल तथा जुर्माना देना होगा।[1] (भारतीय दण्ड सहिता धारा 498 क) क्रूर व्यवहार की परिभाषा मे अन्य तरह के उपबन्धो को जोडकर स्त्री के लिए जहा सुरक्षा की दीवार बनाने की कोशिश की जाती है वही क्रूरता के नये स्वरूप सामने आने लगते हैं।

महिलाओ के प्रति हिसात्मक व्यवहार हमारी अलिखित सामाजिक सहिता है। इसका कार्य व्यापार हमारी आपसी समझ का नमूना है। स्वतत्रता प्राप्ति के इस दूसरे दशक मे महिलाओ के प्रति न केवल हिसा मे विस्तार हुआ है अपितु हमारे हिसात्मक बिन्दुओ मे भी विस्तार हुआ है। हिसा के नये क्षेत्र खुले है। यह अनायास नही है कि इस दशक मे स्टोव से खाना बनाने वाली वधुओ के जलने के जो मामले समाचार पत्रो के माध्यम प्रकाश मे आये उनमें अधिकाशत दहेज से जुडी नियोजित हत्याये थी। इन हत्याओ पर पर्दा डालना हमारे सामाजिक समझौते का सुन्दर उदाहरण है।

दूसरी तरफ हम दहेज हत्या की आलोचना भी करते है। " वधु हत्या जिसे हम दहेज हत्या भी कहते है, के मामलो मे यह जब पुर्नविवाह करके पुन दहेज प्राप्त करने के उद्‌देश्य से हत्या की जाती है या जब प्रेमान्ध होकर दूसरी तीसरी स्त्री से विवाह किया जाता है।" ऐसे मामलो मे मौत की सजा सबसे उपयुक्त सजा हो सकती है।[2] सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो ने यह स्वीकार किया कि हाल के वर्षो मे हमारे देश मे वधु –हत्या की घटनायें खतरनाक रूप से बढ रही है। जब कभी इस प्रकार के कायरतापूर्ण अपराधो का पता लगे और मुल्जिम पर अपराध साबित हो तो अदालत को ऐसे अपराधियो के साथ कठोरता से पेश आना चाहिए।[3]

इस तरह की स्वीकृति इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात महिलाओ के प्रति पारिवारिक हिसा मे आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई है।

तलाक .–

हिन्दू विवाह एक सस्कार था अतः प्राचीन विधि मे विवाह– विच्छेद की व्यवस्था नही थी । विवाह–विच्छेद के सम्बन्ध मे पहली बार हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 की धारा 13 द्वारा व्यवस्था की गयी।[1] विवाह विच्छेद की आज्ञप्ति के परिणाम स्वरूप पति पत्नी वैवाहिक सम्बन्ध समाप्त हो जाता है। कानून द्वारा मिले इन नये अधिकारो ने मनुष्य के सम्पूर्ण चितन को एक नयी दृष्टि प्रदान की। सामाजिक दृष्टि से टूटते संयुक्त परिवारो , नये बनते छोटे परिवारो में मानवीय संबन्धो को नये धरातल पर ला दिया। शिक्षा के प्रसार, महिलाओ द्वारा वैतनिक श्रम के प्रति आकर्षण तथा नवीन पूजीवादी व्यवस्था ने व्यक्तिगत स्वतत्रता को अत्यधिक महत्व दिया।

---

1 हिन्दू विधि पृष्ठ 45 ।

परिणाम स्वरूप विवाह –विच्छेद की प्रवृत्ति का विकास हुआ। दूसरी तरफ योग्य वर से अपनी कन्या के विवाह की आकाक्षा ने दहेज जैसी कुप्रथा को अघोषित रूप से बढावा दिया। 1 इस कारण दहेज सम्बन्धी मुकदमो की न्यायालयो मे बढोत्तरी स्वाभाविक था जिसका परिणाम अन्तत विवाह–विच्छेद जैसे प्रक्रिया ही थी। इस प्रष्ठभूमि मे स्वतत्रता प्राप्ति के इस दूसरे दशक मे उ0 प्र0 मे ही नही सम्पूर्ण भारत मे तलाक लेने के मामलो में वृद्धि हुई है।

आधुनिक विचारधारा तथा जीवन पद्यति से परिवारो मे तनाव बढा फलस्वरूप पति पत्नी के रिश्तो मे टकराहट आयी। पहले जहॉ इस तरह की टकराहट पर बडे बुर्जुगो के दबाव आपसी समझौते तथा विवशता वश सम्बन्ध निर्वाह किये जाते थे वही अब मामला न्यायालय तक पहुँच जाता है। अपने प्रारम्भिक चरण मे विवाह विच्छेद के आधार सीमित तथा कठोर थे । विवाह विधि (सशोधन) अधिनियिम 1976 द्वारा विवाह विच्छेद के अधिकारो को विस्तृत करते हुए नरम बना दिया गया। 2 अपने प्रारम्भिक चरण मे ही यह कानून व्यवहार मे आने लगा और समाज मे इसका उपयोग करना प्रारम्भ कर दिया। जबकि मूल अधिनियम के प्रमुख उपबन्ध आज भी अमल मे नही है। भारतीय न्यायालयो मे लम्बित मुकदमो मे तलाक से सम्बन्धित मुकदमो की सख्या सबसे अधिक है। तलाक कानूनो ने जहॉ परिवारो के टूटने के दृश्य प्रस्तुत किये है वही महिलाओं की स्थिति को बेहद जटिल बना दिया है। कारण यह है कि अधिकांश पारिवारिक मामलों मे जहॉ तलाक तक स्थिति पहुँच जाती है महिलाओ को दोषी माना जाता है । जबकि तनाव के क्षण मे नवविवाहित महिलाओ को अधिकाशत पारिवारिक क्रूरता का सामना करना पडता है ।

---

1 औरत होने की सजा, जैन अरविन्द पृष्ठ 128 ।

2 हिन्दू विधि पृष्ठ 46 ।

यह क्रूरता ही अन्तत विवाह विच्छेद का कारण बनती है जिसमे महिलाओ की मानसिक, आर्थिक, सामाजिक तीनो ही स्थितियॉ स्वतत्रता (व्यक्तिक) मिलने के बाद भी विषम बनी रहती है।

चुनाव और महिलाएं –

भारत के सविधान निर्माताओ ने मानवीय अधिकारो और बिना किसी भेदभाव के सभी के लिए समान नागरिक अधिकारो की गारन्टी दी। वस्तुत स्वतत्रता के बाद भारतीय महिलाओ को विदेशी महिलाओ की तरह समान अधिकारो के लिए अलग से लडाई नही लडनी पडी उन्हे बराबरी के वैधानिक अधिकार भारतीय गणराज्य की घोषणा के साथ ही प्राप्त हो गये किन्तु उन अधिकारो को व्यवहारिक रूप देना बहुत आसान काम नही है। गणतन्त्र बनने के बाद 1952 के चुनावो मे महिलाओ की उम्मीदवारो के रूप मे भागीदारी बहुत ही निराशाजनक थी । इसका कारण हमारी सास्कृतिक परम्परा थी। यह एक सच्चाई है कि राजनैतिक परिदृश्य में महिलाओ का आना हमारी स्थापित सास्कृतिक मूल्यो के लिए खतरा पैदा कर सकते है। महिलाओ को 30 प्रतिशत आरक्षण के सवाल पर वर्तमान काग्रेसी सासद अणित जोगी कहते है," मेरी आंशका तो यह है कि इसके चलते भारतीय समाज की सबसे मजबूत कडी–परिवार विखण्डित होगा घरेलू महिला या मॉ ऐसी धुरी होती है जिसके इर्द गिर्द सम्पूर्ण परिवार चलता रहता है और ये महिलाये सरकारी कार्यालयो मे या सार्वजनिक सस्थानो के पीछे भागने लगी तो परिवार की अवहेलना होगी।"

सदियो से पितृसत्तामक समाज की इस सोच ने महिला को परिवार की स्वामिनी होने के भ्रम मे उलझाये रखा। उसका यह भ्रम ऐसा नही कि टूटा न हो, समय समय पर यह मुखरित भी हुआ किन्तु वह समाज के विकास की प्रक्रिया मे अपना सहयोग नही दे सकी। यही कारण है कि भारत मे महिलाओ की राजनीति मे भूमिका न के बराबर है। जबकि राष्ट्रीय आन्दोलन मे महिलाओ की भूमिका नये भारत के निर्माण मे आशाजनक सकेत थी। सविधान निर्माण मे महिलाओ का सक्रिय योगदान इस आशा की पुष्टि करता था। राजनीति मे महिलाओ की भागीदारी आशा के अनुरूप न होते हुए भी उत्साहजनक थी। राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया मे बराबरी के स्तर पर उनकी भागीदारी स्वतत्र भारत मे महिलाओ की नयी स्थितियो का परिचायक था।

महिलाओ का राजनीतिक तथा प्रशासनिक स्तर.—

प्राचीन काल से आज तक सामाजिक — राजनैतिक सस्थाओ मे व्यापक गुणात्मक परिवर्तन हुए है। राजशाही सामती चेतना पर जनचेतना प्रभावी होती गयी। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत के सविधान द्वारा प्रदत्त समानता ने महिलाओ को स्वतत्र निर्णय की क्षमता प्रदान की। उ0 प्र0 मे सरोजनी नायडू ने (1947 मे) प्रथम महिला राज्यपाल का दायित्व सभाला। महिलाओं ने समाज मे अपनी भागीदारी प्रदर्शित की तथा सामाजिक परिवर्तन मे सहयोग किया। उदाहरण के लिए शराब बंदी के लिए उ0 प्र0 के विभिन्न क्षेत्रो में आन्दोलन हुए । जो महिलाओ द्वारा ही किए गये। महिलाओ की सक्रिय राजनीति मे भागीदारी बहुत कुछ चुनाव घोषणा पत्रो तथा जनचेतना पर निर्भर करती है।

स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात उत्तर प्रदेश के सामाजिक राजनैतिक जीवन मे परिवर्तन स्पष्ट दिखायी देता है किन्तु वह परिवर्तन सक्रिय राजनीति मे आम भारतीय महिला को आने की छूट नही देता परिणाम स्वरूप राजनीति मे महिलाओ की भागीदारी उत्तर प्रदेश की जनसख्या को तथा विधानसभा मे सीटो को देखते हुए निराशा जनक है।

वर्ष	महिलाओ की सख्या
1952	13
1957	29
1962	21
1967	08

उत्तर प्रदेश विधान सभा मे महिलाये

उपरोक्त आकडे संतोषजनक न होते हुए भी महिला भागीदारी की आशा बनाये रखने मे सहायक अवश्य है दूसरी ओर यह इस बात का भी प्रमाण है कि स्वतत्रता आन्दोलन तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सक्रिय महिला भागीदारी के होते हुए भी महिलाओ को राष्ट्र निर्माण के योग्य नही समझा गया। साथ ही राजनीति मे पुरूष आधिक्य या पुरूष वर्चस्व ने उन्हे यह भागीदारी दी ही नही। इस सक्रिय भागीदारी, जिससे महिलाओ को वचित रखा गया के अभाव मे प्रदेश का विकास असतुलित होता गया। और यह असतुलन पारिवारिक स्तर पर भी परम्परागत रूप से प्रभावी रहा।

समाज के स्वरूप के निर्माण मे तथा उसके निरन्तर गतिशील रहने की प्रक्रिया मे स्त्री पुरूष दोनो का समान योगदान होना चाहिए।

उ0प्र0 के राजनैतिक परिदृश्य मे यह योगदान अधिकाशत नही रहा। इसके स्पष्ट कारण है। उत्तर प्रदेश की राजनीति मे जाति तथा धर्म ने प्राय प्रमुख भूमिका निभायी है। उन समाजो मे जहॉ गरीबी, बेराजगारी, बीमारी, भूख, वैज्ञानिक समझ का अभाव है, यानि जो समाज पिछडे है, वहॉ अधिक असूरक्षा व अनिश्चितता है। ऐसे मे धर्म समाज को एक नागपाश के रुप मे जकडे रहता है। यह स्थिति सचेतन रुप से ही समाज के प्रभावशली हिस्से द्वारा अन्य लोगो पर आधिपत्य के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। ऐसे मे धर्म एक शोषण की प्रक्रिया बन गयी है और इस प्रक्रिया का सबसे बडा शिकार महिलाए हुई।

उत्तर प्रदेश का समाज एक ऐसा समाज है जहॉ हर किस्म के भेद भाव रहे हैं – जहॉ प्रभावशाली और कमजोर वर्ग रहा है। सवर्ण, दलित व पिछडे है, यहॉ उत्पादन के तरीके विकसित नही रहे परिणामत समाज मे सभी के लिए सामान साधनो का अभाव रहा। इसी कारण इस पूरे क्षेत्र में धार्मिक नियंत्रण भारत के हर अधिकार से वचित है – राजनीति से, उत्पादन के साधनो से, फसल के बटवारे तथा उसके कानूनी अधिकार से। घर से बाहर तक उसे बोलने का हक नही है। औरत को धर्म में निहित शोषण से मुक्त करने के मामले मे औरत की आर्थिक आजादी प्रमुख कदम है। इन धार्मिक, सामाजिक विशेषकर जातिगत प्रतिबन्धो ने उत्तर प्रदेश मे महिलाओ की शिक्षा, रोजगार, राजनीति तथा स्वतत्र निर्णय की क्षमता सबको प्रभावित किया।

उच्चस्तरीय राजनीति मे यह दशक उत्तर प्रदेश तथा भारत दोनो ही स्तरो पर महिलाओ के सदर्भ मे आशापूर्ण रहा किन्तु सामान्य स्तर पर हम इसे सतोषजनक नही कह सकते। क्योकि परम्पराओ के इस गढ को भेदने महिलाओ को अभी कम से कम दो दशक लगेगे। यद्यपि सुचेता कृपलानी इस दशक मे मुख्यमत्री रही किन्तु इसे हम महिला उपलब्धि से जोडकर नही देख सकते है।

रोजगार

उत्तर प्रदेश मे महिला राजगार की स्थितियो को समझने के लिए यहाँ के समाज के मनोविज्ञान, सामाजिक परिस्थिति, परम्परा तथा नारी की भूमिका को समझना होगा। भाषा जो समाज की विचारधारा को सम्प्रेषित करने का सबसे महत्वपूर्ण अवयव है— द्वारा महिलाए कभी वह स्थान नही प्राप्त कर सकी जो पुरुषो को है। इसका प्रमुख कारण है कि महिलाए परिवार के आर्थिक कार्य व्यापार मे अपने श्रम के माध्यम से जुडी तो रहती है किन्तु उसका सचालन नही करती। इसलिए महिलाओ को रोजगार का विषय और उस पर बहस अत्यत जटिल बिन्दु हैं।[1] प्रत्येक देश और समाज मे महिलाए पुरुषो की तुलना में कठिन श्रम और दोहरे दायित्व का निर्वहन करती है। अधिकाश जगहो पर वह कृषि कार्यो से जुडी हुई है किन्तु उन्हे उत्पादन के बिन्दुओ से जोडकर नही देखा जाता। यही कारण है कि उन्हें ससाधनो के सचालन और नियत्रण की छूट नही है।

"भारत मे लगभग सभी महिलाए कार्य करती हैं, जिनमे सबसे अधिक महत्वपूर्ण है कृषि क्षेत्र से जुडी श्रमिक महिलाए।

---

1 कलपगम यू– लेबर एण्ड जेन्डर, पृष्ठ – 18

बालविवाह की प्रथा के कारण ये महिलाये मुख्य रुप से पत्नियॉ होती है जो परिवार या परिवार के आर्थिक ससाधन मे वृद्धि के लिए कार्य करती है। जो महिलाए खेतो मे कार्य नही करती है वो कृषि से जुड कार्य घरो मे करती है।"[2] परिवार के हित से जुडे श्रम के पश्चात भी महिलाओ बच्चो को उपभोक्ता की श्रेणी मे रखा जाता है न कि उत्पादन के रुप मे। परिवार के लिए किए गए असाध्य श्रम के बाद भी महिलाओ के प्रति इस उपेक्षापूर्ण दृष्टि का कारण महिलाओ का परिवार के प्रति पूर्ण समर्पण है। महिलाओ द्वारा पत्नी के रुप मे किया गया उसका कार्य उसकी परम्परागत भूमिका का अग माना जाता है।

उत्तर प्रदेश चूकि कृषि प्रधान देश है तथा परम्परा और सस्कृति का गढ है। इसलिए यहॉ कृषि प्रधान समाज की सभी विशेषताएं है। महिलाए कृषीय समाज की रीढ है किन्तु उन्हे सम्मान प्राप्त नहीं है क्योंकि यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था की मूल विचार धारा है।[3] पुरुष घर के भीतर महिला द्वारा की जानेवाली मेहनत तथा घर के बाहर कमाई जाने वाली मजदूरी दोनो पर नियत्रण सखते हैं। महिलाओ को ज्यादातर ऊॅची नौकरियो से दूर रखा जाता है। इसलिए उन्हें ऐसे धन्धे अपनाने पडते हैं जिनमे पारिश्रमिक कम मिलता है। काम का यह ढंग महिला को लाभ का बताया जाता है किन्तु यह सबसे अधिक शोषण करने वाला ढग है। महिला के मेहनत और शोषण पर पुरुषो का नियत्रण उन्हे भौतिक फायदा पहुंचाता है।[4]

---

1 1981 की जनगणना रिपोर्ट

2 वैल्वी सिल्विया, थियोराइजिंग पेट्रीयार्की, आक्सफर्ड बेसिल ब्लैकवेल 1990

3 मसीन कला, पितृसत्ता क्या है पृष्ठ – 6

1991 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश मे बेरोजगारी का प्रतिशत सबसे अधिक है। जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या का 32 27 प्रतिशत ही रोजगार युक्त है साथ ही इसमे लिग अनुपात मे भारी अन्तर है।[1] इसके अनुसार 50 15 प्रतिशत पुरुष तथा 14 72 प्रतिशत महिलाए कार्यरत है।[2] इन रोजगार युक्त महिलाओ मे बहुत बडा प्रतिशत शहरी महिलाओं का है, इसका सीधा सबन्ध शिक्षा का विकास है। ग्रामीण महिलाओ मे शिक्षा की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का सबसे विकसित क्षेत्र उत्तराचल है जहॉ महिलाओ की साक्षरता का प्रतिशत सबसे अधिक है किन्तु वहॉ महिलाओं की स्थिति सबसे चिन्ताजनक है।

उत्तर प्रदेश के पर्वतीय क्षेत्र जिसमें मुख्यत 8 जिले आते है अपनी भौगोलिक और प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण अन्य क्षेत्रो से भिन्न है। इन पहाडी क्षेत्रो मे घर, खेत, व जगल का समस्त कार्य महिलाओ द्वारा ही सम्पादित होता है। ये कार्य महिलाये हर अवस्था मे करती है। गर्भावस्था तथा प्रसव के दिनो मे भी। घर तथा बाहर दोनो ही जगहो पर कार्य की सक्रियता पहाडी महिलाओ को किसी प्रकार की व्यक्तिक स्वतत्रता नही प्रदान करती अपितु यह कार्याधिक्य पुरूष प्रधान समाज की विशेष शैली का प्रतिफल है। समस्त समाजो मे स्त्री पुरूष दोनो कार्य करते है किन्तु यह आवश्यक नही कि यह कार्य समान परिस्थितियो मे समान माग पर स्त्री पुरूष दोनो द्वारा समान रूप से सम्पादित हो।[3] 3 सामान्यत घरेलू वर्ग के कार्य की दो धारायें है। पहला पारिवारिक उद्योग दूसरा व्यक्तिगत उद्योग। पहले वर्ग मे परिवार की महिलायें यदि रोजगार युक्त नही है तो वह परिवार के लिए बिना पारिश्रमिक के कार्य करती है(जिनमे पत्नियॉ और पुत्रियॉ समाहित है)[4] यह उन विचारो का समर्थन करता है जिसमे सभी व्यक्तियो के लिए कार्य की चिता व्यक्त करते हुए काम की बात कही जाती है।

---

1 1991 की जनगणना रिपोर्ट

2 वही

3 कलपगम यू, लेबर एण्ड जेन्डर, पृष्ठ – ५

4 वही पृष्ठ – 17

असगठित क्षेत्र का कार्य इसी श्रेणी का कार्य है। अधिकाशत उत्तर प्रदेश मे महिलाये इसी तरह के कार्य व्यापार से जुडी है।

पहाडी क्षेत्रो मे महिलाये पहाडी अर्थव्यवस्था की रीढ है। कुमार्यू मे कार्यरत गैर–सरकारी सगठनो का मानना है कि ये महिलाये दिन के 24 घटे मे से 14 से 22 घटे कार्यरत रहती है। पहाडी क्षेत्रो का यह श्रम उत्तर प्रदेश के लगभग सभी भागो मे थोडे बहुत अन्तर के साथ समान रूप से लागू होता है।

1957–67 के दशक मे भी महिलाओ का बहुत बडा प्रतिशत असगठित क्षेत्र के रोजगार से जुडा हुआ था। इसकी विशेषता यह है कि इसमे रोजगार तो है किन्तु पारिश्रमिक नही इसलिए इसे महिला रोजगार से जोडकर नही देखा जा सकता। फिर भी बडी सख्या मे निचले तबके की महिलाये कृषि क्षेत्र के रोजगार से जुडी थी जो मौसगी रोजगार होता है जहॉ तक वैतनिक रोजगार का प्रश्न है वह शिक्षा के विकास से जुडी प्रक्रिया है। 1957–67 के मध्य व्यापक स्तर पर होने वाले शिक्षा के विकास ने महिला रोजगार को प्रोत्साहित किया। दूसरी तरफ शैक्षिक विकास ने ही पर्दा प्रथा की परम्परा को तोडकर महिलाओ को बाहर आने के लिए प्रेरित तथा उत्साहित किया। धीरे–2 पारिवारिक आदर्शो मे महत्वपूर्ण परिवर्तन आने लगे। 50 के दशक के आदर्श परिवार अल्पसख्यक हो गये। सयुक्त परिवार टूटने लगे बडी सख्या में महिलाओं ने वैतनिक श्रम प्रारम्भ कर दिये। स्वास्थ्य सेवाये शिक्षा आदि क्षेत्र महिलाओ के लिए विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र बने। जहॉ शिक्षिकाओ की सख्या मे वृद्धि हुई वही नर्सिग मे स्त्रियो ने धीरे–2 अपना एकाधिकार बनाया। फिर भी पुरातन मान्यताओ के साथ निरंतर संघर्ष इस दशक की स्त्रियो के लिए सामान्य बात थी।

रोजगार की महत्वाकाक्षाये उसके पारिवारिक जीवन के लिए कलह बनती जा रही थी। इस दशक मे स्वेच्छा से नौकरी करने का चुनाव सिर्फ डाक्टर लडकियॉ ही कर सकती थी क्योकि यह मूल रूप से रोजगार परक शिक्षा है। अन्यथा नर्सिग तथा शैक्षिक कार्यो से वही स्त्रियॉ विशेष रूप से जुडी जिन्हे आर्थिक तगी तथा आवश्यकता ने विवश किया। सामान्यत इस दशक मे भी महिलाओ के सामान्य गृहणी की भूमिका को ही निभाया ओर निभाना पसन्द किया।

उ0प्र0 के मेडिकल कालेजो मे छात्र–छात्राओ की संख्या – 1967

वर्ष	संस्थाओं की सख्या	छात्रो की सख्या	छात्राओं की संख्या	योग	खर्च
1956–57	15	3484	371	3855	16,02,512
1957–58	15	3,575	381	3956	18,15,816
1958–59	15	3418	405	3823	27,51,040
1959–60	15	3112	429	3541	24,20,112
1960–61	15	3,263	429	3,729	25,25,385

इन आकडो से स्पष्ट है कि स्वास्थ्य क्षेत्र मे महिलाएं कम होते हुए भी आ रही है।

अध्याय : 5

पिछले तीन दशको या उससे कुछ अधिक समय से महिला सम्बन्धी प्रश्न विश्व–स्तर पर विचारणीय बन चुके है। 1970 के दशक के आरम्भिक वर्षो मे महिलाओ के प्रति होने वाले भेद–भाव को मिटाने तथा समाज मे उनकी समानभागीदारी सुनिश्चित करने के प्रयासो मे सक्रियता आयी है। इन प्रयासो को इस चेतना से भी प्रेरणा मिली कि राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सास्कृतिक, कानूनी, शैक्षिक और धार्मिक दशाओ से महिलाओ की पुनरूत्थापक और उत्पादक भूमिका का घनिष्ठ सम्बन्ध है जो महिलाओ के उत्थान मे बाधक है। 1 पिछले कुछ समय से अधिसख्य महिलाये विशेषकर मध्यम वर्ग तथा कामगार वर्ग की ग्रामीण एव शहरी महिलाए पुरूष दमन और दबाव के विषय मे अपनी समझ बेहतर करने के लिए छोटे–बडे समूहो, औपचारिक, अनौपचारिक बैठको, अध्ययन शिविरो और कार्यशलाओ से जुडी रही है। तब से महिलाओ मे यह समझ आयी है कि हमारी बहुत सी परम्परागत मान्यताओ को चुनौती मिल रही है।''2 स्वतत्रता प्राप्ति का यह तीसरा दशक इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है।

महिलाओ की स्थिति मे परिवर्तन एक बहुत बडी व्यवस्था का परिवर्तन है जो एक सतत विकास प्रक्रिया है। यह सही है कि पिछले दो दशको या इससे कुछ अधिक समय से विश्व स्तर पर स्थापित हो रही लिग चेतना ने सम्पूर्ण विश्व मे महिलाओ के प्रति समानता के व्यवहार के सूत्र को समझने का प्रयास किया है। फिर भी विश्व स्तर से प्रक्षेपित यह विचारधारा विभिन्न देशो के धरातल तक पहुँचने के अभियान मे आज भी सफल नही हो पा रही। विशेषकर भारत मे।

---

1 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉ, पैरा 1

2 भसीन कमला, पितृसत्ता क्या है, पृष्ठ 2

दक्षिण एशिया मे महिलाओ के साथ होने वाले भेदभाव तथा दुर्व्यवहार अन्तर्राष्ट्रीय चिता का विषय है। महिलाओ के आर्थिक शोषण, हीनता और उत्पीडन को तीव्र बनाने वाले कारक सदियो पुरानी उन असमानताओ , अन्यायो और शोषण की दशाओ से उत्पन्न होते है जो परिवार समुदाय, राष्ट्र, उपक्षेत्र, क्षेत्र ओर अन्तर्राष्ट्रीय स्तरो पर पायी जाती है। इसके पींछे कई जटिल कारण है। यद्यपि पितृसत्तात्मक समाज मे पुरूष सभी महत्वपूर्ण सस्थाओ पर प्रभावी रहते है परन्तु इसका यह अर्थ नही कि पितृसत्ता के अन्तर्गत महिलाओ के पास कोई अधिकार प्रभाव या ससाधन नही होते। 1 वास्तव मे कोई भी व्यवस्था बिना कुछ दमित लोगो की सहभागिता के नही चल सकती। इसलिए थोडे बहुत ससाधन, अधिकार के मिलने के साथ महिलाओ के समर्पण का स्वभाव इस व्यवस्था को सदियो से चलाने मे सहायक रही है। इस लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परम्परागत विचारो को बदलने तथा उससे उपजे दुष्परिणामो को बडे पैमाने पर सामने लाने के प्रयास किये जा रहे है।

"1972 मे संयुक्त राष्ट्र महासभा ने अपने प्रस्ताव 3010 (27) मे 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया और कहा कि पुरूषो और महिलाओं के बीच समानता को बढावा देने, विकास के सभी प्रयासो मे महिलाओ की पूरी भागीदारी सुनिश्चित करने ओर विश्व शाति को मजबूत बनाने मे स्त्रियो की भागीदारी को बढाने के लिए तेज प्रयास किये जायेगे। " 2 महासभा ने अपने प्रस्ताव 3520 (30) में उस विश्व कार्यवाई योजना को स्वीकार किया जो 1975 मे मैक्सिको सिटी मे आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष ने विश्व सम्मलेन ने वर्ष के उद्देश्यो को लागू करने के लिए पारित किये थे। 3 उसी प्रस्ताव में महासभा ने 1976—1985 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक (समानता, विकास और शाति) घोषित किया।

---

1 वही पृष्ठ 16

2 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉ पैरा 2

3 अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के विश्व सम्मेलन की रिपोर्ट, मैक्सिको सिटी 19 जून — 2 जुलाई 1975 (सयुक्त राष्ट्र प्रकाशन, सेल्स न0 ई 76 चार 1) अध्ययन — 1 सेक्शन — ए

महासभा ने अपने प्रस्ताव 33/185 मे संयुक्त राष्ट्र महिला दशक समानता, विकास ओर शान्ति सम्बन्धी विश्व सम्मेलन के लिए रोजगार स्वास्थ्य और शिक्षा का उपविषय निश्चित किया। यह उपविषय निश्चित ही महिलाओ की समस्त समस्या के मूल मे है। इस सन्दर्भ मे नैरोबी अग्रगामी नीतियो का दस्तावेज अपनी प्रस्तावना मे कहता है " आज के बदलते हुए अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ के कारण और मुक्त बाजार शक्तियो पर आधारित प्रगति के दृष्टिकोण के कारण असमानताओ और गरीबी मे और वृद्धि होती जायेगी। . मानवीय और सामाजिक विकास मे होने वाले पूँजी निवेश मे कमी आती जाएगी। इसलिए महिलाओ एव बच्चो के विकास के लिए सावधानी से पूँजीनिवेश किया जाय और परम्परागत रूप से उनको जिन अधिकारो से वचित रखा गया है उन्हे वापस दिलाने की सम्भावनाए बढाई जाए। "

महिला विकास से सम्बन्धित लगभग सभी प्रस्तावो मे इस तरह के विचार पढने को सरलतापूर्वक मिल जाते है किन्तु इन विचारो को अमल मे लाने के लगभग सभी प्रयास विफल रहे है। फिर भी दशकों से हो रहे प्रयास मे भारत के अन्दर आशिक सफलता तथा धीमी किन्तु विकास प्रक्रिया को अनदेखी नही की जा सकती। 1967–77 तक का समय महिला प्रश्नों के संदर्भ मे कई दृष्टियो से उल्लेखनीय रहा है। शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, जनचेतना, सामाजिक परिवर्तन विशेष रूप से मुखरित महिला आन्दोलनो की दृष्टि से सक्रमण काल रहा है। नारी आन्दोलनो ने तथा देश की राजनीतिक स्थितियो ने महिला अधिकारो तथा उनकी समाज के प्रति महत्वपूर्ण भागीदारी को समझाने के सकारात्मक प्रयास किये। जिसने भारत में महिलाओ की परम्परागत भूमिका तथा उनके शोषण पर समाज को सोचने के लिए विवश कर दिया।

शिक्षा —

आधुनिकीकरण की प्रक्रिया ने जहॉ एक ओर पूँजीवादी उपभोक्तावादी प्रवृत्तियो को बढावा दिया है वही शिक्षा के विकास पर भी बल दिया है। समाजशास्त्रियो का मानना है कि एशिया के परम्परागत विकासशील देशो मे शिक्षा के प्रसार का एक मूल कारण पश्चिमी विदेशी सस्कृति से आपसी सम्प्रेषण भी है। इस सम्प्रेषण की पहली आवश्यकता महिला शिक्षा है। महिलाओ की शिक्षा उसके सामाजिक स्तर से स्पष्ट तथा गहरे रूप से जुडी हुई है। 1 आधुनिकीकरण एक धीमी किन्तु गतिशील प्रक्रिया है जो परिवर्तन को जन्म देने मे सहायक है– यह परिवर्तन आर्थिक, राजनीतिक, तकनीति, समाजिक तथा सास्कृतिक क्षेत्रा मे मुख्य रूप से परिलक्षित होता है। यह परिवर्तन किसी समाज मे अनायास नही होता । उपरोक्त क्षेत्रो में परिवर्तन तथा विकास समस्त समाज के क्रियाकलापो को प्रभावित करता है जो मनुष्य के सोचने समझने की क्षमता को प्रभावित करते है। साथ ही मस्तिष्क परिवर्तन के बिन्दुओ की तलाश करने लगता है जो नये सामाजिक क्रिया कलापो तथा सम्बन्धो का विकास करती है।।'' 2

इसमे कोई सन्देह नही कि शिक्षा युवाओ के मानसिक परिवर्तन का सबसे उचित हथियार है। अधिकांश लोगो का विश्वास है कि शिक्षा समाज के परिवर्तन का सशक्त साधन हैं। इसलिए शिक्षा महिलाओ के स्तर मे सुधार लाने और उन्हे पूर्ण प्रोत्साहन देने का आधार है। 3 स्वतत्रता प्राप्ति से पूर्व भारत मे परम्परागत रूप से लडकियों को शिक्षा के रूप मे आदर्श मातृत्व तथा सुन्दर गृह निर्माण की शिक्षा दी जाती थी। 4

---

1 अग्रवाल ममता, एजूकेशन एण्ड मार्टनाईजेशन, पृष्ठ 11

2 जार्ज एम एस 'एजूकेशन एण्ड मार्टनाईजेशन' इन ऐसे ऑन मार्डनाईजेशन ऑफ अन्डर डेवेलप्ड सोसाइटी, ट01°2 मव६ ए के देसाई ठाकरे एण्ड कम्पनी बाम्बे, 1971 पृष्ठ 228

3 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉ पैरा – 163

4 सिह भीष्म नारायण एजूकेशन एम्पावरमेंट फॉर वूमेन, ए ऐसे इन पॉलिटिक्स इण्डिया, दिसम्बर 1997

साथ ही धार्मिक शिक्षा का विकास किया जाता था किन्तु स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात मुखरित विचार धाराओ से महिला शिक्षा को बहुत तेज गति से बढावा भले ही न मिला हो किन्तु वैचारिक परिवर्तन अवश्य हुए है। इस वैचारिक परिवर्तन ने महिलाओ को अपने अधिकारो के प्रति सचेत किया है। जिसके परिणाम स्वरूप केन्द्र तथा राज्य सरकाने ने भी महिलाओ के विकास सम्बन्धी कानूनो का निर्माण तथा प्रतिपादन किया। 1967–77 के मध्य महिला शिक्षा के विकास को हम उ0प्र0 के विभिन्न क्षेत्रो मे देख सकते है। जहॉ तक महिलाओ की प्राथमिक शिक्षा का प्रश्न है इसमे आश्चर्यजनक रूप से पिछले तीन दशको मे वृद्धि हुई है। यद्यपि प्राथमिक शिक्षा का स्तर इन तीन दशको मे विद्यालयो मे छात्र–छात्राओ की सख्या बढने से घटा है। जिन स्थानो पर प्राथमिक पाठशालाये उपलब्ध है वहॉ माता–पिता अपनी पुत्रियो को विद्यालय भेजने से नही हिचकते। इसके कई कारण है–

1. सबसे प्रथम कारण तो यह है कि जिस उम्र मे प्राथमिक शिक्षा दी जाती है उसमे कन्या की उम्र बहुत कम होती है इसलिए वह गृहकार्यो के लिए अक्षम होती है
2. दूसरे माता–पिता के विचारो मे यह परिवर्तन अवश्य आया है कि कन्या को पत्रा लिखने सम्बन्धी ज्ञान अवश्य होना चाहिए।
3. उन्हे रामायण–महाभारत तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थो के स्त्री विषयक नियम का ज्ञान हो जाय जिससे वो परम्परागत भारतीय व्यवस्था के सचालन मे सहायक हो सके।

ये कारण मूलरूप से ग्रामीण क्षेत्रो से सम्बन्धित है। नगरीय क्षेत्रो मे शिक्षा के प्रसार के इन कारणो के साथ माता–पिता के विचारो मे लडकियो के भविष्य को लेकर नये दृष्टिकोण का विकास हुआ है। माता–पिता के बीच यह विचार नये आर्थिक सम्बन्धो तथा शिक्षा के साथ उनके जुडाव के कारण हुआ है।

30–35 वर्ष तक की महिलाओ से लिए साक्षात्कार से यह बात उभरकर आती

है कि यह 70 के दशक के क्रान्तिकारी वैचारिक परिवर्तन का परिणाम था। जिन महिलाओ ने इस दशक के पूर्व सिर्फ प्राथमिक शिक्षा ग्रहण की थी उन्होने अपनी कन्याओ को उच्च शिक्षा के महत्व को समझाकर उन्हे न केवल उच्च शिक्षा दिलायी अपितु प्रेरित भी किया। यह स्थिति 1970 के दशक मे शिक्षा से सम्बन्धित मुख्य उपलब्धि है। यह एक सामाजिक स्थिति है जिसके आकडे 1971 की जनगणना रिपोर्ट तथा अन्य माध्यमो से उपलब्ध करने का प्रयास किया गया। 1960 मे हुए यूनेस्को के कन्वेशन को ध्यान मे रखकर महिलाओ मे इस दशक में रोजगार युक्त शिक्षा के विकास की प्रवृत्तियो को बढावा देने का प्रयास किया गया। परिणामस्वरूप महिलाओ के लिए भी शिक्षा के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रो मे प्रवेश की सुविधा दी गयी।

शैक्षिक स्तर	स्टेटस	उम्र	पुरूष		महिलाएं	
			1971	1981	1971	1981
साक्षर गैर शैक्षिक स्तर	सम्पूर्ण	सभी उम्र के	29 45	31 68	36 22	37 60
प्राइमरी	सम्पूर्ण	,,	35 51	27.65	40 70	32 86
मिडिल	सम्पूर्ण	,,	17 67	17 29	12.14	12 70
हाई स्कूल	सम्पूर्ण	,,	13 99	18.17	08 81	12 38
गैर तकनीकी डिप्लोमा	सम्पूर्ण	,,	00 88	00 05	00 23	00 01
टेक्निकल डिप्लोमा	सम्पूर्ण	,,	00 11	00 12	00.02	00 03
स्नातक	सम्पूर्ण	,,	02.39	05 04	01.88	04.41

शैक्षिक स्तर तथा साक्षरता के आधार पर प्रतिशत निर्धारण (1971–81)

यदि हम साक्षरता व शिक्षा के आधार पर 1971 से 1981 के जनगणना दशक आधार दी गयी तालिका का अध्ययन करे तो कुछ रोचक तथ्य उभरकर सामने आते है तालिका मे स्त्री तथा पुरूष दोनो की वितरण प्रणाली को 1971 से 1981 के आधार पर दिया गया है। बिना औपचारिक शिक्षा प्राप्त किये ही बडी सख्या मे लडकियॉ साक्षर है। (37 60प्रतिशत) इनका प्रतिशत औपचारिक प्राइमरी शिक्षा ग्रहण कर रही बालिकाओ (32 36 प्रतिशत) से बहुत अधिक है। यह प्रतिशत बालको से भी अधिक है (27 65 प्रतिशत) कक्षा 5 के पश्चात मिडिल स्तर तक आते–2 बालिकाओ का यह प्रतिशत आश्चर्य जनक रूप से कम हो जाता है।

1971 से 1981 के मध्य जहॉ तक प्राथमिक शिक्षा का प्रश्न है बालिकाओ का प्रतिशत निश्चत ही 40 7 प्रतिशत तथा 32 86 प्रतिशत के रूप में अपने बालक सहपाठियो से 35 51 तथा 27 65 प्रतिशत अधिक है। सरकारी तथा गैर सरकारी सगठनो के प्रयास के प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे जो उपलब्धि हमे दिखती है उसे उससे ऊॅचे स्तर पर बनाये रखने तथा उतने संसाधन जुटाने मे केन्द्र तथा राज्य दोनो ही सरकारें असफल रही।

1971 मे केवल 12.14 प्रतिशत लडकियॉ मिडिल की परीक्षा पास कर सकी जबकि छात्रो का प्रतिशत 17.67 था। 1981 में इसमे बहुत थोडा अन्तर आया 12 70 प्रतिशत का जबकि छात्र 17 29 प्रतिशत रहे। गैरतकनीकी डिप्लोमा कोर्स मे लडकियॉ मात्र 0 23 प्रतिशत जबकि 1981 मे यह 0.01 रहा। टेक्निकल डिप्लोमा मे यह प्रतिशत मात्र 0 02 (1971) तथा 0 01 (1981) मे रहा।

1971 से 1981 के मध्य सिर्फ 1 38 प्रतिशत बालिकाओ ने ही स्नातक स्तर की परीक्षा दी यह बहुत ही निराशाजनक स्थिति है जो 1981 मे सिर्फ 4 41 प्रतिशत तक बढी जबकि बालको का प्रतिशत 2 39 तथा 5 04 रहा जो निश्चय ही बालिकाओ के प्रतिशत से अच्छा है। किन्तु फिर भी सम्पूर्ण शिक्षा के विकास की दृष्टि से निराशाजनक है। 1971–81 के मध्य उ0 प्र0 मे शिक्षा की यह स्थिति निश्चय ही सतोषजनक नही है किन्तु बालिकाओ की प्राथमिक शिक्षा की दृष्टि से उतसहवर्धक अवश्य है। यह स्थिति 1947 की स्थितिओ की तुलना मे निराशाजनक नही कही जा सकती है। इसलिए इसे राष्ट्र तथा प्रदेश की उपलब्धियो के स्तर पर देखा जाना चाहिए। जिसने महिलाओ के विकास के मार्ग को वैचारिक स्तर पर उद्वेलित किया जो आज बहुत मुखरित रुप मे हमारे समक्ष उपस्थित है। नैरोबी की अग्रगामी नीतियॉ अपने प्रस्तावो मे कहती है

शिक्षा महिलाओ के स्तर मे सुधार लाने तथा उन्हे पूर्ण प्रोत्साहन देने का आधार हैं। यह वह मौलिक आधार है जो समाज के पूर्ण सदस्यों के रुप मे उनकी भूमिका को पूरा करने के लिए महिलाओ को दिया जाना चाहिए। सरकारो को राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सभी स्तरो पर और योजनाओ , कार्यक्रमो तथा परियोजनाओ को सूत्र करने मे महिलाओ की भागीदारी को मजबूत करना चाहिए। विकासशील विश्व की वास्तविकताओं के अनुसार महिलाओ के शिक्षा नीति को विकसित करने के उपाय किये जाने चाहिए।1

यद्यपि यह लक्ष्य "2000 तक" महिलाओ के विकास के लिए रखा गया है और इसकी आवश्यकता महसूस की गयी। किन्तु इस रिपोर्ट में जिन बिन्दुओ पर विचार किया गया वह महिला शिक्षा के प्रति विकासशील देशो की सरकार के उदासीन दृष्टि के कारण ही।

प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धियॉ समाज मे शिक्षा के प्रति जागृत रुचि को इन्गित करती है किन्तु मिडिल तथा उच्च स्तरीय शिक्षा मे महिलाओ की कम उपस्थिति तथा समाज मे उच्चमहिला शिक्षा के प्रति नकारातमक दृष्टिकोण हमारी सरकार तथा जनसचार माध्यमो दोनो की असफलता का पर्याय है।

लडकियो का वैज्ञानिक तकनीकी तथा प्रबन्धकीय विषयो की पढाई मे कम उपस्थिति का होना इस क्षेत्र मे सरकारी प्रोत्साहन की कमी को दर्शाता है।

1947 मे स्वतत्रता के पश्चात महलनोबिस ने जिन पचवर्षीय योजनाओ द्वारा देश के समग्र ढाचागत विकास की कल्पना की थी उसमे शिक्षा के विकास पर विशेष बल दिया गया। साथ ही कहा गया कि हम शिक्षा के विकास के द्वारा ही अपने सम्पूर्ण लक्ष्यो के नजदीक पहुँच सकते हैं। किन्तु विकास के अन्य कार्यक्रमो तथा अन्य आवश्यकताओ के समक्ष हमारी शिक्षा की योजनाए प्राथमिक श्रेणी से द्वितीय एव तृतीय श्रेणी क्रम मे जा पहुँची और विकास जैसी बाते अपनी स्वाभाविक प्रक्रिया के हवाले कर दी गयी।

भारत में महिला आन्दोलनों की सक्रियता :-

1970 के दशक मे राष्ट्रीय स्तर पर जो महिला आन्दोलन खडे हुए वह सरकार के लिए समस्या बनने लगे क्योकि सरकारी विचारधारा तथा महिलाओ के परिवर्तित चरित्रा के बीच एक विरोधाभास उत्पन्न हो गया था।[2] महिलाओ ने उन सभी बिन्दुओ पर प्रश्न खडा किया जिनमे उन्हें अन्याय का सामना करना पडा, जो सैद्धान्तिक रुप से तर्कसगत नही थे।[3]

---

1 अग्रगामी नीतिया नैरोबी पैरा – 163

2 मजुमदार बीना, – चेंजिंग टर्म्स ऑफ पॉलीटिकल डिसकोर्स, २२ जुलाई, १९९५ E.P.W

3 1980 का राजीव – लोगोंवाद समझौता जिसमे चदर प्रथा पर महिला आन्दालनकारियों तथा कटटरपथियों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ था।

सभी सरकारो के सामने यह प्रश्न खडा था कि महिला आन्दोलनो द्वारा उठाये गये प्रश्नो का उत्तर क्या हो और कैसे उन्हे राजनीतिक मुद्दा बनाया जाय। क्योकि नारी आन्दोलनो द्वारा उठाये गये बौद्धिक प्रश्नो का विरोध उन धार्मिक संगठनो द्वारा होता था जिनका समाज की बहुसख्यक जनता पर प्रभाव होता था तथा जो पितृसत्तात्मक विचारध ारा द्वारा पोषित थे।1 फिर भी यह अनवरत वैचारिक सघर्ष था जिसे आगे चलकर महिला आन्दोलन के स्वरुप को गढना था।

आगे चलकर यह नारी आन्दोलनो का भी विचारधारा के स्तर पर अनेक विभाजन हुआ मार्क्सवादी, समाजवादी, नारीवादी, अतिनारीवादी आदि। इन महिला सगठनो मे आपस मे गहरे वैचारिक मतभेद हैं किन्तु यह प्रश्न सबके लिए सार्थक था कि नारी की समाज मे भूमिका क्या और कैसी होनी चाहिए। इस सदर्भ मे लगभग सभी महिला आन्दोलनकारियो ने पुरुष तथा उसकी सत्ता स्त्री तथा उसकी भूमिका पर गहराई से विचार किया निष्कर्षतः उन्होने सभी समस्याओ के मूल में पितृसत्तात्मक तत्र को दोषी ठहराया। कमला भसीन कहती हैं –"कुछ लोग जरुर यह मानते हैं कि पुरुषो का जन्म ही राज करने के लिए हुआ है।2 सभी परम्परावादी जैवकीय रुप से पितृसत्ता को निर्धारित मानते है। गर्डा लर्नर कहती हैं – "परम्परावादी चाहे धार्मिक या वैज्ञानिक ढाचे मे काम करते हो वे महिलाओं के निचले दर्जे को सदा हर जगह प्रचलित, ईश्वर प्रदत्त व प्राकृतिक बात मानते हैं।3 यह विचारधारा सिर्फ धार्मिक पृष्ठभूमि के लोगो तक ही सीमित नहीं है। अरस्तू ने भी इसी तरह के विचार रखे। अरस्तू के अनुसार मादा वास्तव मे 'विकलांग नर है', एक ऐसी प्राणी जिसकी आत्मा नहीं है।

---

1 दिवराला में सती हुई रुपकवर का विभिन्न धार्मिक सगठनों अनेक विरोधों के बाद भी समर्थन किया। रुपकवर को धार्मिक रीति रिवाजों के नाम पर उसके पति की लाश को हजारों लोगों की भीड के समय जिदा जला दिया गया था।

2 मुस्लिम धार्मिक ग्रन्थ कुरान कहता है हमने पुरुषों को स्त्रियों पर हाकिम बनाकर भेजा है।

3 भसीन कमला, पितृसत्ता क्या है, सिद्धम [illegible] इंडिया, नयी दिल्ली।

उसने कहा चूकि स्त्री शारीरिक रुप से निम्न है इसलिए उसकी योग्यता तर्कशक्ति तथा निर्णय लेने की समझ सभी कुछ घटिया है। सिगमड फ्रायड ने महिलाओ विषय मे टिप्पणी है कि "नारी की शरीर रचना ही भाग्य है।" फ्रायड की दृष्टि मे समान्य मनुष्य पुरुष था। जबकि स्त्री विकृत मनुष्य।

महिला आन्दोलन कारियो ने अपने सैद्धान्तिक विचारधाराओ के अनुरुप सभी धार्मिक तथा परम्परावादी विचारधाराओ के विरुद्ध अपने विरोध प्रदर्शित किये तथा गहरे अध्ययन यापन के माध्यम से समानता सबन्धी तर्क प्रस्तुत किये। विभिन्न धार्मिक ग्रन्थो को पढने के उपरान्त अपने तर्कपूर्ण विचार प्रस्तुत किये। कई लोगो ने पुरुष के प्रभुत्व को चुनौती दी। उन्होने सिद्ध कर दिया कि विभिन्न परम्परावादी विचारों के पीछे कोई ऐतिहासिक या वैज्ञानिक सबूत नही हैं। सन् 1884 मे एन्गल्स ने अपनी पुस्तक "ओरिजिन ऑफ द फैमिली, प्राइवेट प्रापर्टी एण्ड द स्टेट" मे पितृसत्ता के प्रारम्भ के विषय मे महत्वपूर्ण मत पेश किया। एगल्स का विश्वास था कि स्त्रियों की अधीनता की शुरुआत व्यक्तिगत सम्पत्ति की शुरुआत के साथ हुई। इस पुस्तक ने महिला आन्दोलन की दिशा में अत्यन्त महत्पूर्ण भूमिका निभाई। मार्क्सवादी नारीवादियो ने एगल्स के विचार को और विकसित किया।

दूसरी तरफ नारीवादियों का मानना है कि महिलाओ की अधीनता के लिए सिर्फ आर्थिक कारणे पर केद्रित होना काफी नहीं है। फिर भी गर्डा लर्नर कहती है – इतिहास और समाज मे महिलाओ की स्थिति को समझने मे एंगल्स ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। सिमन जैसी नारीवादी कहती है– "स्त्री न अपने हार्मोन से नियंत्रित है न उसमे कोई रहस्यमय अतःवृत्ति है, बल्कि यह तो उसका शरीर है जो जगत से सम्बधित दूसरो के माध्यम से प्रवर्तित हुआ हैं।

अत औरत वैसी ही है जैसी वह बनायी गयी है। वो आगे कहती है "हमे ऐसा भी नही समझ लेना चाहिए कि केवल आर्थिक स्थिति बदलते ही स्त्री मे पूर्ण परिवर्तन हो जायेगा। यद्यपि मानव विकास क्रम मे आर्थिक अवस्था एक आधारभूत तत्व है, जो व्यक्ति का नियता है किन्तु इसके बावजूद नैतिक, सामाजिक सास्कृतिक आदि व्यवस्थाओ मे भी परिवर्तन करने की पूरी जरुरत है जिसके बिना नयी स्त्री का आर्विभाव सम्भ्व नही होगा।" इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि नारी को पैदा होते ही, यहॉ तक आज के सन्दर्भो मे जन्म लेने से पहले ही जब बच्चा गर्भ में भ्रूण अवस्था मे रहता है उपेक्षित कर दिया जाता है। उसके पालन पोषण मे परिवार व समाज भेदभाव बरतते है और उसके जीवन को पितृसत्तात्मक मूल्यों के सदृश गढने लगते हैं। यह स्थिति नारी के अभिशप्त जीवन की कहानी है।

मार्क्सवादी महिला आन्दोलन कहता है "उत्पीडितो और उत्पीडको के बीच, शोषित और शोषको के बीच न कभी समानता हो सकती है न हुई है। जब तक महिलाओ के लिए वो सारी सुविधाये उपलब्ध नही कराता जो कि कानून पुरुषो को उपलब्ध कराता है।" जान ग्रास कहती है . "यदि हम एक महिला के रुप मे जीवन के हर क्षेत्र मे परिवर्तन चाहते है तो हमे यह स्वीकार करना होगाकि पूँजीवादी टुकडे – टुकडे परिवर्तन को समाहित करने की क्षमता रखता है।

महिलाओं की

उदाहरण के लिए कई विवाहित महिलाओ को तलाक लेना पडा। सुरक्षा की तैयारी के बिना श्रम बाजार में फेक दिया जाता है।1 1970 के दशक में भारत मे महिला आन्दालनो के लिए स्थितिया बहुत अनुकूल थी।

बाल–विवाह, दहेज, तलाक,दहेज हत्या, पारिवारिक हिसा, बलात्कार, अपहरण, आदि ने सक्रिय योगदान दिया। सर्व प्रथम महिलाओ ने अपने विरुद्ध हो रही हिसा को अपने आन्दोलन का विषय बनाया। भारतीय समाज मे महिलाओ के प्रतिहिसात्मक व्यवहार हमारी परमपरा है। भारतीय इतिहास तथा साहित्य ऐसे उदाहरणो से भरा पडा है। यह हिसा प्राय परिवार, समाज, जाति समूह तथा राज्य की देन होती है। 1983 मे भारत सरकार तथा अकाली दल के बीच जो समझौता होना था उसमे सिक्खे के लिए 'पर्सतल ला' को स्वीकार किया गया था। जिसमे उन्होने सिक्ख महिलाओ के उत्तराधिकार सम्बन्धी नियम (जो हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956) को मानने से इन्कार कर दिया था। तलाक के अधिकार को हिन्दू विवाह अधिनियम 1955 को अमान्य किया साथ ही बहु–विवाह प्रथा को स्वीकार करते हुए उसे चादर अन्दाजी के रुप में सिक्ख परम्परा का प्रतीक माना। इस समझौते के प्रावधानो पर राष्ट्रीय महिला सगठनो तथा 5 ग्रामीण महिला मण्डलो तथा कुछ सिक्ख महिलाओ द्वारा इसका मुखर विरोध हुआ। दक्षिणपथी राजनीति का यह कट्टरपथी स्वरुप महिला आन्दोलनो के अभाव मे सरकार पर दबाव बनाने मे सक्षम होते हैं। रुढीवादी परम्परावादी राजनीतिज्ञ महिलाओ की स्वतत्रता को अपनी जाति, समूह तथा सस्कृति के विकास मे बाधक समझते हैं।

भारत मे सही दिशा मे एक समग्र महिला आन्दोलन की आवश्यकता लम्बे काल से रही है। यह सही है कि भारत मे महिला आन्दोलनों की पृष्ठभूमि बहुत पुरानी है किन्तु आज भी विभिन्न छोटी–छोटी धाराओ मे बटा आन्दोलन अपना सामुच्च्य नहीं प्रस्तुत करता है।

मार्क्सवादी जहाँ महिलाओ के आर्थिक शोषण तथा उत्पादन के साधनो से उसके सम्बन्ध को जोड़ अपनी व्याख्या प्रस्तुत करते है तथा वर्ग चेतना और आन्दोलन की बात करते हैं वही दूसरे नारीवादी आन्दोलन महिला उत्पीडन को समय तथा काल के आर्थिक सामाजिक व्यवस्था के भीतर ही हल करने के प्रयास को महत्व देती हैं। इस टकराहट ने महिलाओ के बीच आन्दोलन के उद्देश्यो को लेकर भ्रम पैदा किया है।

भारत मे महिलाओ की मुक्ति का सपना अपने पिता – पति की सकारात्मक भूमिका पर आधारित है। मार्क्सवाद कहता है कि जो उसे बुर्जुआ समाज पाखण्ड पर टिकाये रखना चाहता है। इन विरोधभासो के बीच भारत मे नारी आन्दोलन अपने – अपने लक्ष्य की तरफ बढ रहे हैं।

1970 के दशक मे प्राथमिक शिक्षा की उपलब्धियो ने जहाँ प्रदेश मे महिला शिक्षा के विकास मे सुदृढ कदम रखे वही शिक्षित तथा साक्षर महिलाओ का अपनी परम्परा नथा भूमिका का पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया यह महिलाओ के जीवन मे एक नया मोड था। उन्हे अब न तो पुस्तको को पढने पर प्रतिबन्ध था और न ही असमर्थता थी। यही कारण था कि उन्होने स्वयं ही महिलाओ से सम्बन्धित सामाजिक वुराइयो का समझा तथा उनसे निपटने के स्वप्रयास प्रारम्भ किये। फलस्वरुप इस दशक मे महिला आन्दालनो ने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाने की दिशा में कार्य किया। मधु किश्वर, वन्दना शिवा, पद्मा सेठ, वीना मजुमदार, इंदू अग्निहोत्री, माहिनी गिरी, जयन्ती पटनायक जैसे नाम इन महिला आन्दोलनों से उभरकर आये। जिन्होने बहुत ही लगन तथा मेहनत से महिलाओं के अत्थान के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया।

इसमे मधु किश्वर ने आगे चलकर मानुषी मगल' सगठन के माध्यम से महिलाओ मे चेतना के विकास के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया। सामान्य महिला पत्रिकाओ से अलग हटकर उन्होने 'मानुषी' नामक पत्रिका निकाली जो महिलाओ मे एक नयी समझ पैदा करने मे बहुत कुछ सक्षम रही।

यह वही समय था जब प्रदेश के उत्तराचल मे पर्यावरणवादी नेता सुन्दर लाल बहुगुणा से चिपको आन्दोलन (1974) की शुरुआत कर पहाडी महिलाओ को उनके अस्तित्व का ज्ञान करया था। उस आन्दोलन के पश्चात पहाड की महिलाओ मे समाज मे अपनी भूमिका को लेकर नवीन चेतना पैदा हुई। फलस्वरुप उत्तराखण्ड के विभिन्न जिलो मे महिला मगल दल जैसे अनेक स्वय सेवी संगठनो तथा गैर सरकारी संगठनो ने कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। दूसरी तरफ पश्चिमी तथा मध्य उत्तर प्रदेश की महिलाओ ने 'दहेज तथा बलात्कार 1 को लेकर आन्दोलन प्रारम्भ कर दिये। मथुरा बलात्कार काण्ड जो बाद मे बलात्कार से जुडे कानूनो के कारण विचारणीय मुद्दा बन गया।[1] इस घटना ने प्रदेश की समस्त महिलाओ को वैचारिक स्तर पर झकझोर दिया। यही कारण था कि महिला आन्दोलनो को पश्चिमी उत्तर–प्रदेश में व्यापक जन समर्थन मिला और महिलाओ ने अपने अधिकारों के लिए आन्दोलन प्रारम्भ किये। किन्तु उत्तर–प्रदेश मे महिलाओ द्वारा सचालित यह सभी आन्दोलन सीमित रहे। सदियो से महिला मजदूरो के साथ किये जा रहे भेदभाव को इन महिला संगठनो ने कभी आन्दोलन का मुद्दा नहीं बनाया जबकि यह अघोषित सत्य है कि मजदूरी के समान श्रम तथा घंटो के बाद भी महिला श्रम पुरुष श्रम से सस्ता है। और यह सस्ता श्रम आसानी से उपलब्ध भी है।

---

1. मथुरा केस, सुमन बलात्कार केस, १९८१ (1) स्केल, १११ और परड़िया बलात्कार केस हिन्दुस्तान टाइम्स, 13 मार्च 1988

रोजगार और महिलाएं :–

महिलाओ के विकास के लक्ष्य समानता, विकास और शाति के उद्देश्यो को पूरा करने मे राष्ट्रीय स्तर पर अनेक बाधाओ का सामना करना पडा। अनुभव के विभिन्न स्तन सामने आये। यह बाधाए वास्तव मे राजनीतिक तथा आर्थिक एक जुटताओ तथा सामाजिक तथा सांस्कृतिक एकजुटताओ के कारण आयी। इस सदर्भ मे राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक स्थितियो के बिगडने मे तत्कालीन अर्थव्यवस्था के तत्वो ने भी भूमिका अदा की है। दूसरी तरफ महिलाओ की उत्पादक तथा पुनरुत्पादक भूमिकाओ मे भी गिरावट आयी है जिसका परिणाम यह हुआ कि महिलाओ की स्थिति पुरुषो की तुलना मे दूसरी श्रेणी की बनी रही। ये ऐसे ऐतिहासिक कारक हैं जो रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य क्षेत्रगत साधनो तक महिलाओ की पहुॅच को सीमित करते है और निर्णय लेने की प्रक्रिया मे महिलाओ के प्रभावी ढग से शामिल होने को सीमित करते हैं। घरेलू कामो और श्रम शक्ति मे भागीदारी का 'दोहरा बोझ' महिलाओ की मुख्य जिम्मेदारी बना हुआ है।

मुख्य महिला श्रमिकों का प्राथमिक, द्वितीयक तथा तृतीयक श्रेणी के कार्यों का विभाजन

वर्ष	कुल मुख्य श्रमिक	प्राथमिक निकाय	द्वितीयक निकाय	तृतीयक निकाय
19810	T100.00	83 42	7 64	8.94
	R100 00	90 78	5 41	3 81
	U100 00	14 94	28 32	56 74
1991	T100 00	84 57	6 31	9 12
	R100 00	91 88	4 23	3 89
	U100 00	17 69	25 35	56 96

स्रोत – जनगणना रिपोर्ट भारत सरकार, उत्तर प्रदेश 1981–1991

इस तालिका से हमे ज्ञात होता है कि कुल महिला श्रम का 84 57 प्रतिशत प्राथमिक गतिविधियो मे लगा है। जो 91.88 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रो मे तथा 17 69 प्रतिशत नगरीय क्षेत्रो मे है। 1981 से 1991 के मध्य कुल कार्य शक्ति मे थोडा बढोत्तरी हुई 83 42 प्रतिशत से मात्र 84.57 प्रतिशत के रुप मे। दूसरी तरफ द्वितीयक श्रेणी के कार्यों मे (जन सख्या रिपोर्ट Va, Vb तथा Vi श्रेणी) मे केवल6 31 प्रतिशत 1991 मे जो 1981 के 7 64 से थोडा कम है। द्वितीय श्रेणी के प्रतिशत का मुख्य हिस्सा नगरीय क्षेत्राो का है। इन विश्लेषणो से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि सम्पूर्ण कार्यशक्ति का अधिकाश अभी भी ग्रामीण इलाको के असंगठित क्षेत्रों मे लगा है। जो घरेलू उत्पादन की मुख्य उत्पादक शक्ति होते हुए भी उपेक्षित तथा तिरस्कृत रहता है। प्राथमिक क्षेत्र मे महिलाओ की अधिसंख्या इस तथ्य का प्रमाण है सस्ते श्रम के साथ दोहरी भूमिकाओं का बोझ वहन कर रही है।

नियोजन —

पिछले दशक मे पारिवारिक आदर्शों मे महत्वमूर्ण परिवर्तन आये है। 50 के दशक का आदर्श परिवार अल्पसख्यक हो गया है। महिलाओ ने बडी सख्या मे वैतनिक श्रम शुरु कर दिये हैं। 1991 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश मे बेरोजगारी की समस्या बहुत बढी है।1 आकडे दर्शाते हैं कि उत्तर प्रदेश की कुल जनसख्या क्षेत्रो मे अल्प राजगार तथा नगरीय क्षेत्रो के शिक्षित वर्गों मे बेरोजगारी की समस्या शोचनीय है। योजना आयोग ने राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के 43वे रौंद के आधार पर 1987—88 के लिए बेरोजगारी के अनुमात लगाए हैं। बेरोजगारी की दर शहरी क्षेत्रो के लिए यह मात्र 3 07 प्रतिशत है। आठवी योजना के दौरान शहरी और ग्रामीण क्षेत्रो मे खुली बेरोजगारी मे वृद्धि हुई है।

शिक्षितो मे रोजगार की वार्षिक वृद्धि दर

लिंग / निवास	1977—78 से 1983	1983 से 1987—88	1977—78 से 1987—88
(1)	(2)	(3)	(4)
ग्रामीण	7 8	8 5	8 1
शहरी	6 8	7 4	7.1
पुरूष	7.2	7 5	7 3
स्त्रियॉ	8 1	11.7	9 7
कुल	7.2	7 8	7 5

नोट सामान्य मुख्य स्थिति (आयु वर्ग 15 +)

स्रोत · राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण 32वॉ, 38वॉ और 43वॉ रौंद

उर्पयुक्त आकडे यह दर्शाते है कि ग्रामीण क्षेत्रो मे खुली बेरोजगारी स्त्रियो के सदर्भ मे 1983 मे 1 41 प्रतिशत थी जो 1987 – 88 मे बढकर 3 52 प्रतिशत हो गयी और शहरी क्षेत्रो मे यह बढकर 6 90 प्रतिशत से 8 77 प्रतिशत हो गया है। इसका अर्थ है स्त्रियो मे अल्प बेरोजगारी प्रतिशत पुरुषो की तुलना मे अधिक है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रो के असगठित क्षेत्र मे महिलाये सबसे अधिक कार्यरत है। ग्रामीण तथा नगरीय दोनो ही स्थानो पर महिलाओ की तुलना मे पुरुष रोजगार अधिक है। पुरुषो मे यह प्रतिशत जहॉ 49 31 है वह महिलाओ मे यह मात्र 7 45 प्रतिशत है। गावो मे यह विषमता नगरीय क्षेत्रो की तुलना मे अधिक है। रोजगार युक्त पुरुष नगरो मे 46 19 प्रतिशत है तथा गॉवो मे 50 10 प्रतिशत है। वही महिलाओ का प्रतिशत बहुत अधिक निराशाजनक है। इन आकडो से स्पष्ट है कि परिवार औरत को न्यूनता पूरक श्रम शक्ति बना देता है। तब वह श्रम बाजार की सरती श्रम शक्ति बन जाती है। यह सब कुछ हमे कृषि क्षेत्रों तथा उद्योगो के क्षेत्र मे स्पष्ट रुप से देखने को मिलता है। इस सम्बन्ध मे मुख्य आकडे जनगणना रिपोर्ट तथा रीना मिश्रा के अप्रकाशित शोध – ग्रन्थ " status of working women in U.P." महिलाओ की रोजगारपरक स्थितियो को दर्शाते है।

साम्प्रदायिकता तथा महिलाएं :–

किसी भी देश में जातीय आत्म–सम्मान के साथ रुढिवादिता की लहर चलती है तो वहॉ सबसे पहला खतरा व्यक्ति की स्वतंत्रता को होता है और यह स्थिति महिला विकास मे बाधक होती है। क्योकि समस्त धार्मिक, नृजातीय, सास्कृतिक और रुढिवादी लोग मूल रुप से लैंगिक समानता के विरोधी होते हैं।1 जैसा कि हिटलर का सिद्धात था –"महिलाये बच्चे पैदा करने, रसोई और चर्च मे प्रार्थना करने के लिए ही पैदा हुई है।2 रगभेद तथा अन्य नस्लवादी अल्पमत व्यवस्थाओं के तहत महिलाये तथा बच्चे कत्लेआम जैसे प्रत्यक्ष अमानवीय व्यवहार के शिकार होते हैं।

---

1 मजुमदार बीना एव इदू अग्निहोत्री, चेंजिंग टर्म्स ऑफ पॉलीटिकल डिसकोर्स, 22 जुलाई 1995 E.P.W

2 चक्रवर्ती रणु – भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं का योगदान पृष्ठ – 8

" तीन दशक से ज्यादा समय से फिलिस्तीनी महिलाये घर मे और बाहर कठिन जीवन स्थितियो का सामना कर रही हैं। वो अपने परिवारो की जिदगी तथा फिलिस्तीनी जनता की जिदगी के लिए सघर्ष कर रही हैं।"1 " दक्षिणी लेबनान तथा जौला पहाडियो मे हिसा तथा अस्थिरता ने इम्राइली कब्जे में रहने वाली अरब महिलाये भी भेदभाव तथा हिरासत जैसी कार्य वाहियों से पीडित हैं।"2 भारत से लेकर फिलिस्तीन तक के स्वतत्राता सघर्ष का यदि विशद विवेचन किया जाय तो परिणाम के रुप मे – स्थितियो के सामान्य होते ही महिलाओ के सक्रिय और साहसी सहयोग को रद्दी की टोकरी के डाल दिया जाता है और पुन. हम राष्ट्रीय सम्मान, जातीय गौरव तथा राष्ट्रीय सस्कृति के व्यामोह मे उलझ जाते हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर शाति ही किसी भी राष्ट्र के समग्र विकास की पहली शर्त है। हथियारबन्द लडाइयो का सबसे अधिक नुकसान महिलाओं को भुगतना पड़ता है।3 ईरान मे राजा शाह पहलवी के शासन काल मे जो परिवर्तन दिखायी पड रहे थे उसने ईरानी महिलाओं मे शिक्षा का भरपूर प्रसार किया। इससे वहॉ की स्थितियो मे बदलाव स्वाभाविक था। आयातुल्लाा खामोशी के आगमन के साथ रात मे आये धार्मिक शासन ने वहॉ के समाज को पुनः रुढिवादी जकडन मे जकड दिया इसका सबसे अधिक बुरा प्रभाव वहॉ की महिलाओं पर पडा। लगभग समान स्थिति अफगानिस्तान मे नजीबुल्लाह के अपदस्थ होने तथा तालिबानो के आगमन के पश्चात हुई। अफगानिस्तान में भी इस्लाम की स्थापना तथा सत्ता के संघर्ष से महिलाओ ने अपने जीने के मूलभूत अधिकारो को भी खो दिया है। वहॉ सबसे कडा प्रतिबन्ध महिलाओं के घरो से बाहर निकलने पर लगाया गया है। इस प्रतिबन्ध के कारण वहॉ 16वीं सदी की पर्दा प्रथा की पुर्नस्थापना हुई है। दूसरी तरफ इन कट्टरपंथी ताकतो ने महिला शिक्षा को प्रतिबन्धित कर दिया है। कश्मीर की आतकवाद भी स्थितियॉ लगभग ऐसी ही हैं।

---

1 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉ

2. वही

3 अफगानिस्तान तथा कश्मीरी आतकवाद इसका उदाहरण है।

इन स्थितियो से निपटने के लिए प्रयास अर्न्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे है। नैराबी 2000 तक की अग्रगामी नीतियो में इन स्थितियो की गम्भीनता पर विचार करते हुए कहा गया – "हथियार बन्द स्थितियो तथा आपात स्थितियो के काण महिलाओ उव बच्चो के जीवन के लिए गम्भीर खतरा पैदा हुआ है। इसके कारण लगातार विस्थापन, विध्वस, तबाही शारीरिक पीडा, सामाजिक पीडा,सामाजिक और पारिवारिक विघटन और असहायता के भय और खतरे पैदा हुए हैं। कभी–कभी इसके कारण स्वास्थ्य और शैक्षिक सेवाओ की पर्याप्त सुलभता का पूरा – पूरा खात्मा होता है, राजगार के अवयर जाते रहते है और कुल मिलाकर भौतिक दशाओ मे बदतरी आती है।1

पैरा – 261

"हथियार बन्द टकरावो को सीमित करने के उद्देश्य से प्रेरित 1949 की चौथी जनेवा कन्वेशन और 1949 की चौथी जेनेवा कन्वेशन के का प्रथम अतिक्ति प्रोटोकाल 1977 मे स्वीकार किया गया जैसे अन्तर्राष्ट्रीय समझौते, जारी वार्ताये और अन्तर्राष्ट्रीय वहस मुबाहिसे जो शत्रुता कं चक्त नागरिकों को सरक्षण देने का आम ढॉचा प्रदान करते है और महिलाओ तथा बच्चों को मानवीय मदद तथा सरक्षण प्रदान करने के प्रावधानो के आधार प्रदान करते हैं। आपात काल तथा हथियार बन्द झगडो के दौरान महिलाओ तथा बच्चो को सुरक्षा प्रदान करने सम्बन्धित 1974 घोषणा (महासभा प्रस्ताव 3318 (XXX)) मे जो उपाय सुझाये गये हैं, सरकारो को उन्हे ध्यान में रखना चाहिए।2

पैरा – 262

ऐसा नही है कि इन हथियार बन्द टकराहटों का प्रभाव पारिवारिक स्तर पर नही करना पडता। ऐसी स्थितियॉ अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, उपक्षेत्रीय तथा पारिवारिक स्तर पर भी देखने को मिलती है। क्योंकि रुढिवादिता तथा साम्प्रदायिकता एक दूसरे के सहयोगी हैं और हथियार उसका आधार है।3

---

1 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉ पैरा – 261

2 वही पैरा – 262

3 आतकवादी गतिविधियॉ (विशषरुप से कश्मीर, पजाब) जो धर्म को अपना साधन बनाती हैं।

कट्टरपथ धर्म के ओट मे समाज के विकास को बाधित करता है और साथ ही दूसरी विचारधारा तथा सस्कृति से टकराहट को जन्म देता है। इस द्वन्द मे पुरुष मानसिकता अपने सम्पूर्ण पाशुविक स्वरुप मे दृष्टिगोचर होती है।1 ऐसी मानसिक स्थितियॉ ही शान्ति काल मे स्त्री के स्वतत्र विकास को रोकती हैं। दगा हो, डकैती हो, युद्ध हो सबकी परिणति के रुप मे महिलाओ को विषम, दयनीय और दूरगामी परिणाम अनायास भोगने के लिए विवश होना पडता है।

साम्प्रदायिक और आतकवादी वातावरण की सबसे वडी विशेषता यह है कि इस पुरुष सत्तात्मक समाज मे स्वय पुरुषो द्वारा स्त्रियो के लिए बनाये नियम धूल चाटते है और सम्पूर्ण वातावरण पाशविक हो जाता है। ऐसी स्थिति मे महिलाओ को दोहरे भय और बन्धनो मे बाधा जाता है।2 सुरक्षा के नाम पर सामाजिक नियम कानूनो की एक श्रृखला सी बनती जाती है जिसमें महिलाओ के बांघने के कडे प्रयास किये जाते हैं।
भारतीय परिस्थितियो में जहॉ की राजनीतिक परिस्थितियॉ ही सम्प्रदायिकता तथा भेदभाव से निर्धारित होती है। जहॉ एक बहुत बडा अल्पसख्यक वर्ग (जो अपने आप मे बहुसख्यक है) हो जो समाज सरकार तथा उसकी नीतियो को निर्धारित करता है। जो महिलाओ के विकास की अवधारणा को अपनी अस्मिता के लिए खतरा मानता हो। उस देश मे महिला तब तक साम्प्रादायिक त्रासदी से गुजरती रहेगी जब तक वह स्वय अपने अस्तिव के प्रति जागृति नही होती। हर अल्प सख्यक कहा जाने वाला वर्ग अपनी अपनी अस्मिता की लडाई मे महिला की अस्मिता की समझ खो बैठता है। 3 पंजाब के आतकवाद का गुमनाम पहलू – यौन आतकवाद – रहा है। 4 बन्दूक की नोक पर मजीत कौर का अपहरण करने वाले आतंकवादियो ने लगातार एक साल तक उसका यौन शोषण किया । 5 चौबीस वर्षीय भूपिंदर कौर को तो बालात विवाह की यातना दो बार झेलनी पडी मृत आतकवादी पतियो से उसके तीन बच्चे है। 6 पांच वर्षो तक भारी आघात झेल चुकी भूपिदर का कहना है " सिर्फ बच्चो के लिए जिंदा हूँ" 7

---

1 पजाबी आतकवाद की शिकार सबसे अधिक महिलाए हुई क्योंकि आतकवादियों ने निर्दोष कुँआरी लडकियों को अपनी हबस का शिकार बनाया साथ ही उन्हें प्रताड़ित भी किया (इडिया टुडे 31 सिम्बर 1992 – पृष्ठ – 73 देखें)।

2 मुस्लिम विदेशी आक्रमणों के पश्चात भारतीय महिलाओं के जीवन में " पर्दा" की सस्कृति तथा अन्य सामाजिक गतिविधियों में उसकी कम होती सहभागिता तथा बाल विवाह इसकी पुष्टि करते है।

3 सत हरचद सिह लोगोवाल द्वारा अपनी मृत्यु से पूर्व भारत सरकार से होने वाले समझौते के प्रावधान में "पजाबी सस्कृति " के नाम पर महिलाओ के अनेक अधिकारों को छीन लिया गया था तथा विवादित 'चादर अन्दाजी' की प्रथा का समर्थन किया गया था।

4 विनायक रमेश – इडिया टुडे – पृष्ठ 72 दिसम्बर 31 1992

5 वही

6 वही

7 वही

ऐसी ही परिस्थितियॉ दंगो के समय हिसा मे महिलाओ को उठानी पडती है विशेषकर कमजोर और गरीब तबके की महिलाओ को 6 दिसम्बर 1992 को बाबरी मस्जिद को ढहा देना देश के बहुसख्यक हिन्दुओ के लिए राष्ट्रीय अस्मिता से जुडा था किन्तु प्रतिफल के रूप मे लगभग सभी वर्ग की स्त्रियो को इसके दुष्प्रभावो को झेलना पडा। उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो मे भयकर हिसा हुई। कम से कम 200 के लगभग लोगो की मृत्यु हुई। 7 ऐसी स्थिति मे दोनो ही वर्गो द्वारा क्रोध का शिकार सुरक्ष के घेरे से बाहर की महिलाए रही। ऐसी ही स्थितियॉ 1984 मे इदिरा गॉधी की मृत्यु के पश्चात हुए दगो मे सिक्ख महिलाओ को देखनी पडी। 8

1967–77 के मध्य राजनीति तथा महिलाए :–

यह दशक शीर्ष महिला राजनीति का था । 24 जनवरी 1996 को भारत की प्रथम प्रधान मत्री के रूप मे भारतीय राजनीति के शीर्ष पर एक महिला राजनीतिज्ञ इदिरा गॉधी का आगमन हुआ । इसलिए यह सम्पूर्ण दशक भारत मे राजनीति विशेष रूप से महिलाओ के सद र्भ मे उल्लेखनीय है । 1956 मे अखिल भारतीय चुवा कांग्रेस तथा 1959 राष्ट्रीय काग्रेस की अध्यक्ष रही इदिरा गाधी ने निश्चय ही भारतीय राजनीति की पुरूष प्रधानता को चुनौती दी । किन्तु यह उपलब्धि समग्र रूप से महिलाओ की उपलब्धि नही थी । इतना अवश्य था कि भारतीय महिलाओ को एक मजबूत मानसिक आधार अवश्य मिला । महिलाओ ने भारतीय राजनीति मे सक्रियता दिखानी प्रारम्भ की विभिन्न राष्ट्रीय दलो मे महिलाओ की प्राथमिक सदस्यता बढी किन्तु यह स्थिति देश की संसद तथा विधान सभाओ मे देखने को नही मिलती ।

---

1 वही

2 वही पृष्ठ 44

एक सिक्ख महिला के अदालत में दिये गये बयान के कारण कई राजनेता कानून के घेरे में है।

ससद ने महिलाओ की उपस्थिति

चुनाव वर्ष	कुल सीट	निर्धारित महिला सासद	प्रतिशत
1951	499	22	4 4
1957	500	27	5 4
1962	503	34	6 7
1967	523	31	5.9
1971	521	22	4 2
1977	544	19	—

उत्तर प्रदेश विधान सभा में महिलाओ की उपस्थिति

चुनाव वर्ष	निर्धारित महिला विधायक	प्रतिशत
1967	08	.
1969	18	...
1974	21	.. .
1977	13	...

ससद तथा विधान सभी के ये आकडे दर्शाते हैं कि 1977 तक भारत मे महिलओ की राजनीति सकियता 1942 से लगातार एक सीधी रेखा मे औपचारिक रूप से सिर्फ पूर्ण होती रही है । इसमें किसी तरह के विकास के लक्षण स्पष्ट स्वरूप नही दिखता जिसे रेखाकित किया जा सके ।

दक्षिण एशिया की शीर्ष सत्ता तथा परम्परा में हमेशा महिलाओं के सदर्भ में विरोधा भास रहा है । फिलिपींस ,भारत, पाकिस्तान, लका, वर्मा , बग्लादेश, इसका उदाहरण है। फिलींपीस में कोराजान इक्वानों कों उनके मृत्यु के पश्चात राष्ट्रपति बनाया गया वो भी अपार जनसमर्थन के साथ । बग्लादेश में खलिदा जिया तथा शेख हसीना वाजिद का जनसमर्थन के आधर पर क्रमश प्रधानमत्री बनाया गया । पाकिस्तान में बेनजीर भुट्टो को पिता की मृत्यु के पश्चात मिली राज सत्ता । श्रीलका में श्री मौओं भण्डारनायके का राष्ट्रपति बनना । बर्मा मे उदारवादी नेता आग–साग–सू की को पिता के मृत्यु के पश्चात मिला जन समर्थन दक्षिण एशिया की राजनीति में महिलाओं की स्थिति का एक अन्य स्वरूप रूप है जो सामान्य रूप से सुखद प्रतीत होता है किन्तु शीर्ष पर महिलओं को बैठाकर उन्हें कमजोर समझते सचालित करने की मानंसिकता से ग्रस्त है ।

राजनीति में महिलाओ का पर्दापण तथा बहुसख्या उनकी स्थिति को सुदृढ़ करने मे सहायक होगी किन्तु संसद तथा विधान सभाओ मे महिला उपस्थिति के आकडे अत्यन्त निराशाजनक है साथ ही जो प्रतिनिधित्व ऐसी जगहो पर दृष्टिगत होता है वह समाज के उच्चवर्ग तथा पुरूष राजनीतिज्ञो द्वारा पोषित महिलाओ का है जो प्रकारान्जर से पुरूष चिचारो की समर्थक तथा उनके द्वारा संचालित रही है ।

स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात जिस प्रदेश में प्रथम गर्वनर महिला रही उस प्रदेश मे सुचेता कृपलानी के पश्चात कोई भी मुखर महिला नेतृव्त नही के बराबर रहा। 1967–77 के मध्य प्रदेश की राजनीति मे महिला राजनीतिज्ञो की प्रमुखता या भागीदारी आशिक ही रही। 1967 मे हुए चुनावो मे 400 से अधिक सीटो पर हुए चुनावो मे मात्र 08 महिलाओ का विधान सभा मे जीतना इस बात का प्रमाण है। लगभग सभी राजनीतिक पार्टियो के पास अपना घोषणा पत्रा होता है जिसके आधार पर वो जनता के सामने चुनावो मे उतरते हैं 1977 तक काग्रेस सहित किसी भी पार्टी ने अपने चुनाव घोषणा पत्र मे महिला प्रश्नो को वारीयता नही दी। जबकि स्वतंत्रता आन्दोलन मे इतनी अधिक संख्या मे महिलाओं ने देश की अगुवाई की उन्हे हाशिये पर नही रखा जा सकता। फिर भी पण्डित जवाहर लाल तथा गोविन्द बल्लभ पत (उ0 प्र0) से लेकर इदिरागाधी तक के मत्रिमंडल मे महिला मत्रियों की सख्या नगण्य थी।

उत्तर प्रदेश में महिलाओ का राजनीति मे न आने का कारण सामाजिक तथा आर्थिक भी है। इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था में नारी की सामाजिक सक्रियता को अच्छी निगाह से नही देखा जाता। यह इसलिए कि स्त्रियों की राजनीतिक सक्रियता जहॉ पुरूषो के वर्चस्व के लिए खतरा उत्पन्न करती है वही महिलाओ के शोषण का भी मार्ग प्रशस्त करती है राजनीति मे सक्रिय सामान्य महिलाओ के चरित्र का हनन उनकी सक्रियता मे बाधक पहुचाता है।

---

1 देखे 1977 तक के सभी पार्टियों के चुनाव घोषणा पत्र।

" सरकारो तथा राजनीतिक पार्टियो जिनको राष्ट्रीय तथा स्थानीय विधायिकाओ मे महिलाओ की भागीदारी को सुनिश्चित करना चाहिए , महिला नियुक्तियो तथा पदोन्नतियो मे सघन प्रयास करने चाहिए" 1 इन तीस वर्षो मे भारत सरकार ने ऐसे प्रयासो मे कोई सक्रियता नही दिखाई। फलस्वरूप महिलाओ की राजनीतिक भागीदारी को किसी स्तर पर बढावा नही दिया जा सका। इस दशक मे राष्ट्रीय राजनीति मे महिला नेतृत्व के बाद भी कोई ठोस परिणाम उभरकर सामने नही आये।

---

1 नैरोबी अग्रगामी नीतियॉं पैरा – 86

अध्याय : 6

स्वतत्रता के समय की स्थिति की तुलना मे, इस दशक मे महिलाओ ने शिक्षा, रोजगार और सामाजिक राजनीतिक हस्तक्षेप आदि के मामले मे वास्तव मे प्रगति की है किन्तु साथ ही साथ उसके ऊपर अत्याचार भी बढ गये है। ऊँची दहेज राशि, ससुराल वालो द्वारा बहुओ को जला डालना आदि मे अत्याधिक वृद्धि हुई है– विशेषकर शहरी पढे–लिखे मध्यमवर्गीय परिवारो मे यह घटनाये प्रतिदिन के जीवन से जुड गयी है। सामूहिक बलात्कार, बाल वेश्यावृत्ति आदि घटनाये महिलाओ के प्रति समाज के नैतिक चरित्र के पतन तथा प्रवृत्ति को दर्शाती है।

ग्रामीण जीवन मे भी बदलाव के लक्षण स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते है। उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रो मे महिलाओ की शिक्षा के प्रति जागरूकता को तथा उसके स्पष्ट परिणाम को इस दशक मे देखा जा सकता है किन्तु इस दशक की सबसे बडी विडम्बना है प्रगतिवाद तथा कट्टरपथ का टकराव। शहरीकरण पिछले कुछ "दशको की प्रमुख सामाजिक–आर्थिक प्रवृत्तियो मे एक रहा है और अनुमानत सन 2000 तक विश्व की महिलाओ की आधी सख्या शहरी क्षेत्रो मे रह रही होगी। इसलिए सम्भवत· यदि ध्यान नही दिया गया तो आने वाले वर्षो मे इसका असर महिलाओ के स्वास्थ्य, शिक्षा तथा रोजगार पर इसका व्यापक प्रभाव पडेगा क्योंकि भारत मे महिलाओ के स्वास्थ्य, शिक्षा तथाा रोजगार तीनो ही की समस्या यहॉ के सम्पूर्ण जीवन दर्शन से जुडी है। गर्भ धारण व प्रजनन स्वास्थ्य से जुडी विशिष्ट अवस्थाये है।

हाल के अध्ययन यह दिखाते है कि ऐसे परिवारो की संख्या बढ रही है जिनमे कोई एक महिला ही एक मात्र कमाने वाली है। कुछ खास कठिनाइयों (सामाजिक, आर्थिके तथा कानूनी) जिनका वो सामना करती है, के चलते ऐसी अनेक महिलाए उन बेहद गरीब लोगो मे से है जो शहरी औपचारिक श्रमबाजारो मे केन्द्रित है, और उनमे बडी सख्या ग्रामीण बेरोजगारी तथा अर्ध बेरोजगारी है। उन्हे बहुत कम आर्थिक सामाजिक तथा नैतिक समर्थन मिलता है।

महिलाओ के साथ ऐसी स्थितियो मे स्वास्थ्य के प्रति उनकी लापरवाही या अत्यधिक श्रम से उत्पन्न स्थितियो मे खराब स्वास्थ्य ही है।

महिलाये व स्वास्थ्यः–

भारत मे अधिसख्य महिलाये अनेक कारणो से अच्छे स्वास्थ्य से वचित हैं। गर्भध ारण तथा प्रजनन उसकी विशिष्ट अवस्था है। स्वास्थ्य सम्बन्धी उनकी यह समस्या उनके सम्पूर्ण जीवन चक्र से जुडी है। स्वास्थ्य सम्बन्धी उनकी यह समस्या उनके सम्पूर्ण जीवन चक्र से जुडी है स्वास्थ्य सम्बन्धी उनकी इस समस्या के मूल मे हमारी सस्कृति का आदर्श नारीत्व है। इसलिए भारतीय नारी के जीवन स्तर के आकलन मे महिलाओ का स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण घटक है।

भारतीय समाज मे चूकि महिला का अपने शरीर पर ही अधिकार नही है, इसलिए महिलाओ मे अपने स्वास्थ्य के प्रति सजगता साधारणतया देखने को नही मिलती। इस खराब स्वास्थ्य के मूल कारणो मे गरीबी तथा हमारी पितृसत्तामक व्यवस्था है जो महिलाओ को परिवार के भीतर बचे खुचे ससाधनो से निर्वाह करना सिखाते है। 1 परिवार के भीतर के काम तथा बचे हुए ससाधनो के बीच महिलाओ का स्वास्थ्य निरतर प्रभावित होता रहता है। उपेक्षा की यह प्रक्रिया बालिकाओ के जन्म से ही प्रारम्भ हो जाती है। 2 उत्तर प्रदेश ही नही लगभग सम्पूर्ण भारत मे बालिका का जन्म एक अभिशाप के रूप मे स्वीकार किया जाता है। जन्म से ही वह परिवार के लिए आर्थिक बोझ होती हैं फलत. उन्हे बालको की तुलना मे उपेक्षा का शिकार होना पडता है। उपेक्षा की इन्ही अवस्थाओ के साथ उनका शरीर युवावस्था मे ही कुपोषण का शिकार हो जाता है। प्रजनन सम्बनधी अनिवार्य नैसर्गिक आवश्यकताओ तथा मासिक धर्म के माध्यम से प्रतिमाह होने वाले रक्तस्राव के कारण महिलाओ मे लौह–तत्व की आवश्यकता निरतर बनी रहती है।

इसके लिए उच्च कैलोरी युक्त भोजन की आवश्यकता होती हैजो भारतीय महिलाओ को नही मिलता। महिलाओ की इस कुपोषण का शिकार नवजात शिशु होते है।

उत्तर प्रदेश एक ऐसा राज्य है जो अपनी आवश्यकता का पूरा अन्न उपजाने मे सक्षम है किन्तु दाले, तिलहन तथा दूध जो भोजन की पौष्टिक अनिवार्यत है– कि उत्तर प्रदेश मे कमी है। इसके कारण यहॉ सामान्यत मध्यमवर्गीय परिवारो के भोजन मे,वसा, प्रोटीन तथा विटामिन की कमी हो जाती है विशेषकर लडकियो तथा महिलाओ के भोजन मे इसकी कमी पायी जाती है। एक युवा व्यक्ति को 2200 कैलोरी की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। किन्तु महिलाओ को सामान्यत यह सिर्फ 1200–1400 ही मिलताा है। (1200 ग्रामीण महिलाओ को तथा 1400 शहरी महिलाओ को) जबकि एक युवा पुरूष को 1700 कैलोरी मिलता है जो महिलाओ से बहुत अधिक है।

कई अध्यनो द्वारा प्राप्त आकडो से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकताा है कि परिवारो के भीतर कन्याओ तथा महिलाओ की उपेक्षित स्थिति उनके भोजन को भी प्रभावित करती है। NNBM (नेशनल न्यूट्रीशन मोनिटरिंग बोर्ड) के ग्रामीण सर्वेक्षण के आकडो मे महिलाओ एव पुरूषो के भोजन मे कैलोरी की मात्रा मे कोई बडा अन्तर नही दर्शाया गया है।

---

1 टूवार्डस बीजिग, ए प्रास्पेक्टिव फॉम द इडियन वूमेन्स मूवमेंट पृष्ठ – 25

पूर्वी उत्तर प्रदेश की महिलाओ मे ऊर्जा तथा प्रोटीन का प्रतिशत

ऊर्जा				प्रोटीन			
प्री–स्कूल 1–3,4–6	स्कूल 7–9,10–12	किशोर 13–15,16–18	युवा	प्री–स्कूल 1–3,4–6	स्कूल 7–9,10–12	किशोर 13–15,16–18	युवा
58 6, 63 5	61 1, 71 4	65 5, 88 6	96 2	96 2, 116 5	80 1, 73 7	66 7,96 1	114 8

NNMB के सर्वेक्षण के अनुसार 6 वर्ष तक की उम्र के बच्चो (बालक,बालिकाओ दोनो मे ही) किसी प्रकार के प्रोटीन की कमी नही है और न ही बालक बालिकाओ मे किसी प्रकार का अन्तर है। यह अन्तर 7 वर्ष की उम्र के पश्चात देखने को मिलता है।

लिग आधारित ऊर्जा तथा प्रोटीन का स्तर

लोग	उम्र	
	1–6 वर्ष	7–18 वर्ष
स्त्री	66	72
पुरूष	65	89

स्रोत N.N.M.B. रूरल सर्वे 1975–80

N N M B. के एक प्रमुख सर्वेक्षण से यह बात उभरकर आती है कि 17 से 26 प्रतिशत महिलाये उत्तर प्रदेश मे प्रोटीन की कमी का शिकार है। एक अध्ययन कगे अनुसार 33 प्रतिशत महिलाये ऊर्जा तथा प्रोटीन की कमी का शिकार है। नलिनी अब्राहम ने अपने अध्ययन मे 55 प्रतिशत महिलाओ को लौह–तत्व तथा अन्य पोषक पदार्थो की कमी का शिकार बताया है। उनका कहना है कि 15–50 वर्ष तक के उम्र की महिलाये जो महिलाओ के जीवन का मुख्यकाल है मे उन सभी तत्वो की कमी रहती है जो एक स्वस्थ महिला को इस उम्र मे मिलनी चाहिए। फलस्वरूप 55 प्रतिशत महिलाये ऐनीमिया (रक्त अल्पता) से ग्रसित रहती है। भोज्य पदार्थो मे आवश्यक तत्वो एव ऊर्जा का आभाव नवजात शिशुओ मे रतौंधी, पीलिया तथा विभिन्न प्रकार के रोगो का कारण होता है।

उत्तर प्रदेश मे महिलाओं के आहार का स्तर :–

प्रोटीन तथा ऊर्जा के कुपोषण की समस्या उत्तर प्रदेश की महिलओ की प्रमुख समस्या है, विशेषकर प्रजनन काल मे यह समस्या सबसे अधिक है। वालेन्ट्री हेल्थ ऐसोशिएशन द्वारा किये गये एक अध्ययन से ज्ञात होता है कि ऊर्जा प्रोटीन कुपोषण पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र मे पश्चिमी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र की तुलना मे अधिक है। प्रजनन काल मे महिलाओ का वजन सामान्य वजन से कम बहुत कम होता है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 25 3 प्रतिशत महिलाओ का वजन 38 किलो से भी कम होता है। इस प्रकार कुपोषण, रक्तअल्पता तथा कम वजन के कारण महिलाये सामान्य वजन के बच्चों को जन्म नही देती साथ ही उनके दूध मे भी आवश्यक तत्वो की पर्याप्त कमी रहती है जो बच्चों में कुपोषण का कारण है।

---

1 N N M.B. रूरल सर्वे (1975–80)

2 N.N M.B रूरल सर्वे (1975–80)

उम्र–समूह	प्रतिशत भार 38 किलो से कम	नाप 145 सेमी0 से कम
20–24	17	22
25–29	20	25
30–34	24	22
35–39	25	25
40–44	26	26

स्रोत रिर्पोट ऑन न्यूट्रीशनल स्टेटस इन यू0पी0 (1982)

लिग परीक्षण·–

भारत मे जनसंख्या नियत्रण तथा उससे जुडे लगभग सभी प्रकार के परीक्षणो से अधिकतर महिलाओ को ही गुजरना पडता हैं 1974 मे दिल्ली के आल इडिया मेडिकल इस्टीट्यूट मे गर्भ के अन्दर भ्रूण के अन्दर पायी जाने वाली कमियो को जानने के लिए एक परीक्षण प्रारम्भ किया। 1975 मे AIIMS ने पाया कि इस परीक्षण का दुरूपयोग लिग निर्धारण के आधार पर (बालिका भ्रूण के सम्बन्ध मे) गर्भपात के लिए हो रहा है। इस सूचना की पुष्टि के पश्चात AIIMS ने1979 मे यह परीक्षण बन्द कर दिया। किन्तु पजाब के अमृतसर नगर से यह सूचना मिली कि यहॉ के मेडिकल व्यवसाय से जुडे व्यवसायियो ने इस परीक्षण को व्यवसाय के रूप मे प्रारम्भ किया तथा अपने विज्ञापनो मे लडकियों को परिवार के लिए बोझ तथा भय की सज्ञा दी। इस तरह के परीक्षण भारतीय समाज के लिए वरदान के रूप में सामने आये ओर शहरी क्षेत्रो मे जहॉ भी यह सुविधा उपलब्ध थी लोगो ने बालिका–शिशु के आने से पूर्व ही भ्रूण–हत्या करवाना प्रारम्भ कर दिया। धीरे–2 यह लिग निर्धारण एक सामाजिक समस्या के रूप में उभरकर सामने आने लगा।

RECOMMENDED DIETARY ALLOWANCES FOR INDIANS

Group	Particulars	Body wt kg	Net energy Kcal/d	Protein g/d	Fat g/d	Calcium mg/d	Iron mg/d	Vit A μg/d Retinol	Vit A μg/d β-carotene	Thiamin mg/d	Riboflavin mg/d	Nicotinic acid mg/d	Pyridoxin mg/d	Ascorbic acid mg/d	Folic acid μg/d	Vit B-12 μg/d
Man	Sedentary work		2425							1.2	1.4	16				
	Moderate work	60	2875	60	20	400	28	600	2400	1.4	1.6	18	2.0	40	100	1
	Heavy work		3800							1.6	1.9	21				
Woman	Sedentary work		1875							0.9	1.1	12				
	Moderate work	50	2225	50	20	400	30	600	2400	1.1	1.3	14	2.0	40	100	1
	Heavy work		2925							1.2	1.5	16				
	Pregnant woman	50	+300	+15	30	1000	38	600	2400	+0.2	+0.2	+2	2.5	40	400	1
	Lactation															
	0–6 months	50	+550	+25	45	1000	30	950	3800	+0.3	+0.3	+4	2.5	80	150	1.5
	6–12 months		+400	+18						+0.2	+0.2	+3				
Infants	0–6 months	5.4	108/kg	2.05/kg		500				55μg/kg	65μg/kg	710μg/kg	0.1	25	25	0.2
	6–12 months	8.6	98/kg	1.65/kg				350	1200	50μg/kg	60μg/kg	650μg/kg	0.4			
Children	1–3 years	12.2	1240	22			12	400		0.6	0.7	8	0.9		30	
	4–6 years	19.0	1690	30	25	400	18	400	1600	0.9	1.0	11		40	40	0.2–1.0
	7–9 years	26.9	1950	41			26	600	2400	1.0	1.2	13	1.6		60	
Boys	10–12 years	35.4	2190	54	22	600	34	600	2400	1.1	1.3	15	1.6	40	70	0.2–1.0
Girls	10–12 years	31.5	1970	57			19			1.0	1.2	13				
Boys	13–15 years	47.8	2450	70	22	600	41	600	2400	1.2	1.5	16	2.0	40	100	0.2–1.0
Girls	13–15 years	46.7	2060	65			28			1.0	1.2	14				
Boys	16–18 years	57.1	2640	78	22	500	50	600	2400	1.3	1.6	17	2.0	40	100	0.2–1.0
Girls	16–18 years	49.9	2060	63			30			1.0	1.2	14				

विज्ञान की प्रगति के साथ ही भारतीय कुरीतियो मे भी वैज्ञानिक प्रगति के लक्षण स्पष्ट रूप से दिखने लगे। जहॉ 19वी शती तक बालिका शिशु की हत्या सामाजिक समस्या थी वही अब बालिका भ्रूण की हत्या एक समस्या बन गयी। 1985 मे सरकार का ध्यान इस तरफ दिलाया और उससे यह आग्रह किया गया कि भ्रूण परीक्षणो को बन्द कर देना चाहिए।[1] साथ ही विभिन्न महिला सगठनो ने इस तरह के व्यवसाय के खिलाफ अपना उग्र विरोध दशार्या। मेडिकल काउसिल ऑफ इडिया मे भी इस तरह के व्यवसाय को अनैतिक करार देने का आग्रह किया गया। इसके पश्चात भी यह व्यवसाय 1996 तक लगातार बिना किसी प्रतिरोध के चलता रहा। इन परीक्षणो का परिणाम यह हुआ कि गर्भ मे बालिका शिशु होने के कारण महिलाओ को अपने प्रजनन काल मे कई गर्भपात कराने पडते है जिसका प्रभाव उसके स्वास्थ्य पर लगातार पडता रहता हैं

परिवार नियोजन तथा महिलाये:-

भारत की बढती जनसख्या भारत के लिए ही नही अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए समस्या है। इस समस्या से निपटने के लिए जिन उपायो की खोज की जा रही है वो परिवार कल्याण तथा सुखी परिवार की कल्पना के साथ महिलाओ के उत्तरदायित्व को बढाता है। जनसख्या नियत्रण यह उत्तरदायित्व तब और भी कठिन और पीडादायक हो जाता है जब समस्त सरकारे अपने नीति निर्धारण मे सिर्फ महिलाओं को ही केन्द्र बिन्दु बनाती है। गर्भ-निरोधको के सदर्भ मे अभी तक जितने शोध हुए है उनमें 85 प्रतिशत महिलाओ को ध्यान में रखकर किये गये है। फलस्वरूप गर्भ निरोधक दवा खाने से लेकर आपरेशन तक सभी मे महिलाओं के सहयोग को ही प्राथमिकता दी जाती है। पुरूषो के लिए जो भी साधन उपलब्ध है वो उनके प्रयोग से अपने आपको अलग रखते है। 1 माह मे महिला केवल 72 घण्टे गर्भधारण करने की स्थिति मे होती है जबकि पुरूष हर समय सन्तानोत्पाती के योग्य होते है।

भारत ही नही लगभग सम्पूर्ण विश्व मे गर्भ निरोधक गोलियॉ ज्यादातर महिलाओ के लिए ही है जो अनेक हार्मोनल गडबडियो को उत्पन्न करती है जो महिलाओ के स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होती है।

स्वास्थ से जुडी इन अनेक विसगतियो के कारण ही भारत मे महिला मृत्युदर मे व्यापक बढोत्तरी हुई है। जिसके कारण भारत मे प्रति हजार पुरूषो पर महिलाओ की सख्या निरतर कम होती गयी है।

1977–89 के मध्य महिला आन्दोलन –

स्वतत्रता प्राप्ति का यह चौथा दशक कई दृष्टियो से सकारात्मक विकास को रेखाकित करता है। महिला विषयो से सम्बन्धित प्रश्नो पर स्वय महिलाओ द्वारा किये गये प्रयासो ने इस दशक मे महिलाओ को पहले की तुलना मे अधिक सवेदनशील स्थितियो मे लाकर खडा कर दिया। परिवार तथा समाज के अन्दर होने वाले भेदभाव तथा शिक्षा और विकास की बेहतर स्थितियों के लिए महिलाओ ने अब परम्परागत रूढियो को तोडकर बोलना प्रारम्भ किया। महिलाओ ने अनेक सामाजिक प्रतिबन्धो को मानने से इन्कार कर दिया। दहेज, दहेज–हत्या, बलात्कार, सामाजिक पारिवारिक उत्पीडन के खिलाफ महिला सगठनो की सक्रियता बढी। फलस्वरूप उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो मे महिलाओं के सामाजिक आर्थिक विकास को ध्यान में रखकर स्वय सेवी सगठनो के गठन हुए। अपने प्रारम्भिक चरण में इन संगठनो ने न केवल रचनात्मक कार्य किये अपितु अनेक स्तरो पर सफलता भी प्राप्त की। नारी आन्दोलन ने इस दशक मे निश्चय ही महिलाओ के अन्दर व्यक्ति बोध का पाठ पढाया।

धीरे–2 महिला सगठनो ने स्त्री से जुडे प्रारम्भिक प्रश्नो के बाद समानता जैसे शब्द की अर्थवत्ता को समझने तथा समझाने का प्रयास करना प्रारम्भ किया जिससे समाज मे महिला आन्दोलनो को लेकर प्रश्नचिन्ह खडे होने लगे। साक्ष्यो से बनाये गये नियम कानून जब तर्क और चिन्तन के आगे अपना अर्थ खोने लगे तो लगभग सम्पूर्ण समाज मे एक उथल–पुथल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। प्रारम्भ मे महिलाओ ने जिस सुरक्षा को सहजता से स्वीकार किया था अब वो उन्हे ही तोडने के लिए प्रयासरत हो गयी। निश्चय ही इसके मूल मे अनेक कारण है।

" प्रजनन–कार्य के जरिये मानव जाति के विकास का जैविक मामला हो या सामान्य कामेच्छा की पूर्ति का आदिम प्राकृतिक मसला, काम और सस्कृति के समन्वय पर आधारित उद्यात लैंगिक प्रेम का मसला हो या समाज के क्रिया–कलापो की धुरी के रूप मे परिवार के गठन का सवाल हर जगह यौन–सम्बन्ध स्त्री–पुरुष के रिश्तो मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।" इसलिए, अगर सबसे पहले इसी क्षेत्र मे स्त्री–पुरूष के रिश्तो के तनाव की जटिल अभिव्यक्तियॉ हुई है, तो यह कोई आश्चर्य की बात नही है। सवेदना की पेचीदा बुनावट, व्यक्ति चेतना की प्रखरता और पश्चिमी आधुनिकता के कतिपय प्रभावो के कारण इन अभिव्यक्तियो का अधिकाश मामलो मे प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है। यही कारण है कि बार–2 समाज, परिवार की शाति तथा बच्चो के समुचित विकास के प्रश्न स्त्री–पुरूष सम्बन्धों को प्रभावित करते है। फलस्वरूप स्त्री परिवार, पति, बच्चो के रिश्तो को प्रमुखता देकर समानता जैसे विषय पर बार–2 असहमति व्यक्त कर देती है। हमारे घरेलू और सामुदायिक जीवन मे नारी की जो विकृत स्थिति है उसे साहित्य मे बहुत सुन्दर ढग से व्यक्त किया गया है और यही हमारी सांस्कृतिक इतिहास की सबसे बडी विडम्बना है। आधुनिक समाज की जो विकृतियॉ महिलाओं की पवित्रता, जो महिलाओ की पवित्रता और सामाजिक सम्बन्धो की नैतिकता के समस्त प्रतिमानो को खण्ड–2 कर रही है इसी विडम्बना के परिणाम है।[1]

जिनका समूचा दोष नारी आन्दोलनो को दिया जाता रहा है। इसलिए निश्चय ही हमे नारी आन्दोलनो की सम्पूर्ण भूमिका का मूल्याकन करना होगा। क्योकि इस दशक मे उग्र हुए नारी आन्दोलनो के स्वर ने सम्पूर्ण भारतीय समाज मे भय की स्थिति उत्पन्न कर दी है। फलस्वरूप पुरूषो के बीच चैतन्य तथा प्रखर स्त्रियो के लिए एक प्रकार की भय मिश्रित घृणा का प्रसार हुआ है। [2] समानता तथा बराबरी जैसे तर्को के बीच से वो अपने को निकालकर साहित्य मे वर्णित नारी की चमकदार पितृसत्तावादी भावना से अब छला जाना उसे पसन्द नही है। महिलाओ के विषय मे कहे गये अनेक परम्परागत शब्द तथा व्याख्याये अपनी अर्थवत्ता खो चुके है। परम्परागत मान्यताओ मे हमने महिलाओ को दर्द का दुख दूसरा भय बना डाला था। यही कारण है कि उस दशक के नारी आन्दोलन ने स्वतत्रता, समानता जैसे शब्दो की व्याख्या 5000 वर्षो की पुरूषवादी विचार धारा के विरोध मे बराबरी के साथ करने का प्रयास किया। फलस्वरूप नगरो के कुछ महिला सगठनो ने नारी स्वतत्रता की जो व्याख्या की वह व्यक्तिवादिता की चरमसीमा पर पहुँच गया। जिसने नैसर्गिक नारीत्व को न केवल अपमानित किया अपितु उसे गलत दिशा प्रदान करना प्रारम्भ कर दिया। गॉवो मे जहॉ हमारे सामने महिला उत्थान और विकास के बुनियादी प्रश्न भयानक रूप से हमारे सामने मुँह बाये खडे है वहीं बडे नगरो मे स्वतत्रता की गलत व्याख्या ने अनेक विकृतियो को जन्म देना प्रारम्भ कर दिया इसलिए हमे भारत मे महिला आन्दोलनो के इतिहास को एक बार पुन· समझने का प्रयास करना होगा। भारत मे जिन प्रश्नो को लेकर प्रारम्भिक नारी आन्दोलनो ने अपनी साख बनायी उसमे जनता सहयोग उन्हे बराबर मिलता रहा। इसका कारण था उनका नैतिक मानदण्ड। इन उच्च नैतिक मानदण्डो ने न केवल चरित्र निर्माण तथा चितन की प्रक्रिया के विकास पर बल दिया अपितु एक प्रखर बुद्धिवादी सम्मानजनक पढ़ी लिखी महिला पीढी का निर्माण किया किन्तु जब नयी पीढी न इस आन्दोलनो को अपने हाथ में लेना प्रारम्भ किया तो उन्होने पुरूषो से बराबरी के सभी बिन्दुओं पर विचार कर तर्क देना प्रारम्भ किया जिसने हमारे अनेक तथाकथित समन की परिभाषा को तोडना प्रारम्भ कर दिया।

इसका सबसे अधिक प्रभाव लैंगिक सम्बन्धो पर पडा।

महिला आन्दोलन तथा सामाजिक समस्याये –

अपने उग्र तथा तीखे स्वरो मे इस काल के महिला सगठनो सामाजिक बुराइयो पर चोट करना प्रारम्भ किया। दक्षिण एशिया मे महिलाओ के साथ होने वाली हिसा पर बडे विस्तार से विचार किया गयाा है और लिखित दस्तावेज भी तैयार किये गये है। साथ ही हिसा व महिलाओ का आर्थिक शोषण, हिसा व यौनिकता, हिसा व जाति तथा वर्ग आदि के बीच समझने की कोशिश की गयी है। 1988 मे भारत मे हुए महिला सगठनों के एक सम्मेलन मे निम्न प्रस्ताव पास किया गया–

" औरत को हिसा के विशेष रूपो का सामना करना पडता है जैसे बलात्कार तथा अन्य यौन अत्याचार, गर्भ मे बच्ची की हत्या, डायन के नाम पर महिलाओ की हत्या, सती, दहेज हत्याए, पत्नी के साथ मारपीट। ये सभी हिसा और और उनमे असुरक्षा की भावना भर देते है जिसके कारण वह घर की चहारदिवारी में कैद रहती है। आर्थिक शोषण के सामाजिक दमन का शिकार होती है। घर समाज व सरकार द्वारा की जाने वाली हिसा के खिलाफ हम यह मानते है कि सरकार इस हिसा का बहुत बडा स्रोत है, और वह परिवार, काम की जगह तथा पास पडोस के माहौल मे पुरूषो द्वारा औरतो के साथ की जाने वाली हिंसा में मददगार है। इन्ही कारणो से विशाल नारी आन्दोलनो घर के भीतर व बाहर इसके खिलाफ सघर्ष पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।"[1]

---

1 नारी मुक्ति सघर्ष सम्मेलन, पटना 1988 की रिर्पोट के अंश।

महिलाओ के विरूद्ध होने वाले इन पारिवारिक, सामाजिक राजनैतिक हिसा को समझने महिलाओ की सक्रियता तथा उसके विरूद्ध विरोध के स्वर ने— महिलाओ को और कुछ नही तो इस दशक मे वाणी की स्वतत्रता अवश्य दी है। पारिवारिक तानाशाही का शिकजा महिलाओ पर से कम हुआ है। किनतु महिलाओ की इस स्वतत्रता के विरूद्ध समाज मे अत्यत विकृत प्रतिक्रियाये हुई है। यही कारण है कि पिछले दशको की तुलना मे इस दशक मे महिलाओ पर अत्याचार की घटनाओ मे बढोत्तरी हुई है। बलात्कार, दहेज हत्या, हत्या तथा इस प्रकार की अन्य घटनाओ मे बढोत्तरी हुई है।

महिलाओ के प्रति हिंसा के आंकडे निम्नलिखित है.—

1 प्रति 47 मिनट पर एक महिला के साथ बलात्कार की घटना होती है।
2 प्रति 44 मिनट पर एक महिला का अपहरण होता है।
3 77 महिलाये प्रतिदिन दहेज हत्या का शिकार है।
4 महिलाओ से सम्बन्धित अपराधो की सख्या लिखित दस्तावेजो मे सबसे अधिक है।

स्रोत — क्राइम रिकार्ड ब्यूरो गृहमत्रालय

केवल दिल्ली मे 194 लोगो को बलात्कार के अपराध मे गिरफ्तार किया गया किन्तु आरोप केवल 4 लोगो पर सिद्ध हो आया।
127 दहेज हत्याओ मे से आरोप केवल एक पर सिद्ध हो पाया। [2]

स्रोत — पुलिस रिकार्ड

---

1 क्राइम रिकार्ड ब्यूरो, गृहमंत्रालय, भारत सरकार

2 पुलिस रिकार्ड, दिल्ली

बाल बलात्कार.—

1990 मे 9863 बलात्कार के अपराधो मे से 394 इस वर्ष से कम उम्र की कन्याओ के साथ था तथा 2090 अपराध 10—16 वर्ष कम उम्र के बच्चो के साथ हुआ।[1]

स्रोत — गृह मत्रालय

महिलाओ के प्रति अपराधो मे इस बढोत्तरी के पीछे अनेक कारण है। महिलाओ ने पिछले दो दशको से घर के अन्दर के कडे सरक्षण को तोडा है। सरक्षण की स्थितियॉ जहॉ महिलाओ को शक्तिहीन बनाती है वही सरक्षण के अभाव मे भी महिला शक्तिहीनता की स्थिति का अनुभव करती है किन्तु दोनो ही स्थितियॉ अनेक अर्थो मे भिन्न है। सरक्षित स्त्री के प्रति हिसा केवल परिवार के अन्दर होती है किन्तु पारिवारिक सरक्षण से हीन महिला के प्रति हिसा समाज द्वारा होती है।

पारिवारिक हिसा की अपनी स्थितियॉ है जो परोक्ष, अपरोक्ष दोनो ही रूपो मे दिखाई देती है। अधिकतर अवस्थाओ में इसका अपरोक्ष रूप ही रहता है जिसका कोई साक्ष्य नही होता। यह हिसा समानता की अवधारणा के आधार पर देखे तो कई स्तरो पर है किन्तु जहॉ सामाजिक हिसा का प्रश्न है यह अपने मूर्त अमूर्त दोनो ही रूपों मे बहुत घृणित और व्यापक है।

---

1 क्राइम रिकार्ड ब्यूरो, गृहमंत्रालय, भारत सरकार

पारिवारिक हिसा–

पारिवारिक हिसा का प्रारम्भ लिग परीक्षण से प्रारम्भ माने (जो इस दशक की बडी वैज्ञानिक उपलब्धि थी) तो यह पुत्री के गर्भ मे आने से प्रारम्भ हो जाती है। उत्तर प्रदेश के 5 बडे शहरो मे व्यवसायिक स्तर पर उपयोग किये जा रहे लिंग परीक्षण केन्द्रो पर अधिसख्य लोग लिग निर्धारण की प्रतिकूल स्थितियो मे गर्भपात को प्राथमिकता देते है।[1] और लोग लिग निर्धारण के आर्थिक बोझ को सहन कर पाने मे असमर्थ है वो बालिका शिशु की हत्या के अन्य तरीको का प्रयोग करते है।

उदारवादी मूल्यो के प्रसार तथा स्त्रियो के लिए काम और रोजगार के विभिन्न दरवाजे खुलने के साथ अनेक परिवारो मे बेटी का जन्म अब पहले की तरह मनहूस घटना नही रह गयी है।[2] लेकिन गॉवो मे पुराने नुस्खो का जारी रहना और शहरो मे लिग परीक्षण के लिए बढती भीड बताती है कि चुनौती न केवल बढी है बल्कि नये–नये रूपो मे सामने आ रही है।[3] लिग परीक्षण सम्बन्धी विधेयक की धारा–22 के प्रावधानो मे कहा गया है कि लिग परीक्षण के सम्बन्ध मे किसी प्रकार का विज्ञापन नही दिया जायेगा। विज्ञापन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया है, किन्तु यह विज्ञापन अब अप्रत्यक्ष हो गये है। यह तो है स्त्री का ससार मे आने के लिए सर्घष। यह पारिवारिक हिसा का प्रारम्भ है जो लिग भेद की सुदृढ पृष्ठ भूमि तैयार करता है। परिवार मे बालिकाओ पर दूसरी तरह हिसा विकास के समान् अवसर उपलब्ध कराने पर भेदभाव के रूप मे देखने को मिलती है।[5]

---

1 ये शहर है– इलाहाबाद, आगरा, कानपुर, बनारस, लखनऊ।

2 जैन अरविन्द– औरत होने की सजा, पृष्ठ 46, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।

3 वही

4 यह असमानता भोजन तथा शिक्षा के सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में यह अन्तर अत्यत भयावह है।

5 10 मार्च 1989, चडीगढ़ में भाई होने की खबर सुनकर तीन बहनों ने आत्महत्या कर ली

इन अप्रत्यक्ष तथा अघोषित हिसा के साथ ही परिवारो मे अप्रत्यक्ष घोषित हिसा की हमारे यहॉ परम्परा है जो बालिका वध की मानसिकता के साथ श्रखला बनाती है। इसका उदाहरण है दहेज–हत्याये, चरित्रहीनता के आरोप तथा उसके साथ ही हत्या। इसके अलावा मानसिक उत्पीडना के कारण की जाने वाली आत्महत्याये। ये सभी पारिवारिक हिसा की प्रत्यक्ष उदाहरण है।

इस दशक मे प्रदेश के लगभग सभी क्षेत्रो मे दहेज हत्याये बढी है तथा दूसरी अन्य महिला विरोधी प्रवृत्तियो मे भी बढोत्तरी हुई है। तलाक के प्रतिशत बढ गये है। जहॉ तलाक नही है वहॉ तनाव बढे है जो शहरो मे विशेष रूप से पारिवारिक विघटन के कारण है। परिवार मे जहॉ तेजी से स्त्री की भूमिका बदल रही है, वही पुरूषो की भूमिका मे बदलाव जैसी प्रक्रिया नही है उन्हे बदलते परिवेश के साथ अपने को बदलने का प्रयास करने की सलाह दी जा रही है और यही कारण है कि इस दशक मे टकराव की अवस्थाये बढी है।।

नगरीय क्षेत्रो मे महिलाओं की पारिवारिक स्थितिः–

उत्तर प्रदेश के नगरीय क्षेत्रो मे पिछले दशको की तुलना मे निश्चय ही स्थितियो मे परिवर्तन हुआ। इस दशक मे महिलाओ के लिए शिक्षा के अवसर बढे है। नगरो मे उच्च्,मध्यम तथा निम्न तीनो ही वर्गो की महिलाओ की स्थिति मे सुधार परिवर्तन हुआ तथा विकास के रास्ते खुले है। महिला शिक्षा तीनो ही वर्गो मे समान रूप से आकर्षण का बिदु रहे है। विशेषकर निम्न वर्ग की महिलाओ मे अपने बच्चों विशेष रूप से बच्चियो को शिक्षित करने की प्रवृत्ति बढी है।

---

1 1 दिसम्बर 1980 को अशोक बिहार ,उत्तरी दिल्ली मे गर्भवती सुधा गोयल को ससुराल वालो ने जलाकर मार डाला।

2 आदमी की निगाह में औरत, राजेन्द्र यादव, साप्ताहिक हिन्दुस्तान 1989 पृष्ठ 23

किन्तु शिक्षा, विकास तथा आर्थिक स्थितियो मे परिवर्तन के साथ नवीन सामाजिक विकृतियो ने नगरीय क्षेत्रो मे प्रवेश किया–

– जैसे महिलाओ से सम्बन्धित अपराध जिसमे शारीरिक व मानसिक उत्पीडन बढे है।
– फलस्वरूप मानसिक रूप से विक्षिप्त महिलाओं की सख्या मे वृद्धि हुई है।
– छोटी बच्चियो के साथ अपहरण, बलात्कार की घटनाये बढी है।
– दहेज लेने के साथ वधु को जलाने की सख्या मे भी बढोत्तरी हुई है।

नगरो मे महिलाओ ने इन सभी स्थितियों को पहले की तरह स्वीकार नही किया है परिणामत उनके स्वर महिला सगठनो के समर्थन से प्रतिक्रियात्मक हो गये है और कई स्थितियो मे महिला अपराध के रूप मे परिवतर्तित दिखाई देती है।[2]

ग्रामीण क्षेत्र – ग्रामीण क्षेत्रो मे महिलाओ की स्थिति मे इस दशक मे कोई विशेष परिवर्तन नही आया था। ग्रामीण जाति व्यवस्था के आधार पर होने वाले वर्गीकरण महिलाओ के सदर्भ मे भी दिखते है। निम्नवर्गीय ग्रामीण महिलाये जहॉ असगठित क्षेत्र के रोजगार मे लगी हुई थी वहीं उच्च जातीय महिलाओ के रहन सहन तथा रोजगार परक स्थितियॉ भी पूर्ववत बनी हुई थी। यद्यपि ग्रामीण महिलाओ को ससाधनो के सचालन का अधिकार नही है फिर भी वह परिवार के लिए उत्पादन की प्रक्रिया से सतत रूप से जुडी रहती है तथा परिवार के लिए सस्ती श्रमिक बनकर परिवार के उत्पादन को सहयोग देती रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस दशक तक महिला सबन्धी अपराधो मे कोई खास वृद्धि नही हुई थी। भारतीय परम्पराओ के आदर्श महिलाओ के सम्बन्ध मे थोडे बहुत बचे हुए थे जिसकी वजह से ग्रामीण क्षेत्रों में इस दशक में कोई खास परिवर्तन दिखाई नही देता फिर भी सचार माध्यमो से जुडाव तथा नई शिक्षा नीति ने सम्पूर्ण समाज मे परिवर्तन को जन्म दिया और यह परिवर्तन महिलाओ के सम्बन्ध में भी दृष्टिगत होता है।

---

1 आगरा पागल खाने मे भर्ती 25 प्रतिशत महिलाये ऐसी है जिन्हे पागल बनाकर भर्ती कराया गया है जो वास्तव मे पागल नही है। इसके अलावा सर्वेक्षणो तथा साक्षात्कारों के माध्यम से यह तर्क उभरकर आया कि समाज की प्रवृत्ति महिलाओं के सम्बन्ध मे अत्यत उपेक्षापूर्ण है। यह उपेक्षा महिलाओ में मानसिक विक्षिप्तीकरण का कारण होती है तथा जहॉ ऐसी स्थिति नहीं है वहॉ स्थितियॉ अत्यत तनावग्रस्त है।

2 इलाहाबाद के नैनी सेन्ट्रल जेल के महिला वार्ड में पिछले 20 वर्षो में महिला अपराधियों की सख्या न केवल बढी है बल्कि अपराध और उसकी प्रवृत्तियों मे भी बदलाव आया है।

रूढिवादी प्रवृत्तियॉ तथा महिलायें –

उत्तर प्रदेश से ही भारतीय सस्कृति का केन्द्र रहा है। भारतीय सस्कृति का सदर्भ स्वय ही महिलाओ की स्थिति को स्पष्ट कर देता है। किन्तु स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात हमने सविध-ाान निर्माण के साथ भारतीय जनता को यह विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि भारत मे सभी व्यक्ति को समानता का अधिकार है।[1] हम लिग तथा जाति के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव को प्रश्रय नही देगे।[2] यहॉ के नागरिको को इस देश मे पूरे सम्मान और स्वतत्रता के साथ जीने का अधिकार है।[3] यदि हम इन सदर्भो को देखे तो हमारे भारतीय कानूनो मे बहुत सी असमानता दिखाई पडती है। पहला कि हमने सविधान के अन्तर्गत अपने निजी कानूनो को भी जीवित रखा है।[4] यह निजी कानून हमारी सम्पूर्ण प्रगतिवादी विचारधारा को बाधित करते है।

वस्तुत हमने निजी कानूनो के माध्यम से शोषण के उन समस्त हथियारो को चमकदार बनाये रखा है जो लिग समानता के ऊपर प्रहार कर सके। हमने इन हथियारो द्वारा अपने समस्त मध्यकाल को थोडे बहुत परिवर्तन के साथ जीवित रखा है। यही कारण है कि हम समानता स्वतत्रता जैसे शब्द महिलाओं के सदर्भ मे समझने मे स्वय को असमर्थ पाते है। महिलाओ के लिए हमने उत्तरदायित्वो और व्यक्तित्व के विकास मे सीमाओ का निर्माण किया है ओर इन्हे तोडने वाली महिलाओ के लिए अलग व्यवस्था गढी है। यह हमारी पितृसत्तात्मक व्यवस्था का अग है।

---

१. भारत का संविधान, मूल प्रति से उद्धृत .
२. वही
३. वही
४.

गुजारे भत्ते की समस्याः—

यह समस्या भी हमारे पुरूष—प्रधान समाज द्वारा आरोपित समस्या है। यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था का ही अग है कि पति परिवार के आर्थिक श्रोतो का केन्द्र बिन्दु है जबकि पत्नी आश्रिता।[1] ऐसा नही है कि पत्नी ने अपने श्रम का उपयोग नही किया किन्तु फिर भी चूँकि आर्थिक पक्ष का स्वामी पति है इसलिए परिवार मे उसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। पत्नी केवल गृहणी तथा मॉ जबकि पति आय का श्रोत तथा परिवार का 'सरक्षक' है। परिवार के सरक्षक की भूमिका के रूप मे पति को परिवार मे तानाशाह के रूप मे शासन करने का पूर्ण अधिकार है और वह इन अधिकारो का प्रयोग हमेशा अत्यत कडाई से करता है। वस्तुत यह समस्या मध्यमवर्गीय तथा उच्चवर्गीय समस्या है।[2] इससे पूरी तरह निपट पाना बहुत कठिन है।

उत्तर प्रदेश की कुल जनसख्या का लगभग 9 प्रतिशत इस्लाम को मानने वाले लोग है। इस्लाम के कडे नियमो के अन्तर्गत इस समाज की सम्पूर्ण व्यवस्था महिलाओ के सदर्भ मे अत्यत कट्टरपथी है। 20वी शती के इस अतिम वर्षो में भी इस समाज में मध्यकालीन सामतवादी तत्व पूर्ण रूप से सुरक्षित है। शिक्षा का आभाव, पदा 'प्रथा, बाल विवाह, बहुविवाह, तलाक इस समाज की अलग पहचान प्रदर्शित करते है।

'कुरान' तथा 'हदीस' महिलाओं के सदर्भ में अन्य धार्मिक ग्रन्थो के ही समाना महिलाओं को निर्देशित करते है। उन निर्देशो तथा अन्य पितृसत्तात्मक नियम जो इन निर्देशो को सरक्षित रकते है— को इस समाज मे सुरक्षित पाया जा सकता है। अग्रेजों के आगमन के साथ भारत इस्लामिक प्रगतिवाद तथा प्रभुत्व का अन्त हो चुका था। अंग्रेजी नियम कानूनों तथा चितन शैली के समक्ष तत्कालीन सभी मान्यताओ पर विचार प्रारमी हो गया।

स्त्रियो के सदर्भ मे कुरान मे लिखा है कि " हमने पुरूषो को स्त्रियो पर हाकिम बनाकर भेजा है।" दूसरे शब्दो मे मुस्लिम विधि मे पत्नी की अधीनता की स्वीकार की गयी है। यह अधीनता मुस्लिम समाज मे जीवन के हर स्तर पर देखने को मिलती है। क्योकि विवाह जिसे हेदाया के अनुसार एक विधिक प्रक्रिया माना गया है, को वास्तविक रूप मे स्त्रियो पर थोपा जाता हैं वर एव वधु की स्वीकृति को कोई विशेष महत्व न देकर दोनो की स्वीकृति मान ली जाती है। विवाह के पश्चात जीवन के दाम्पत्य सम्बन्धी लगभग सभी निर्णयो मे पति के अधिकार असीमित है। बिना तलाकनामे के सिर्फ शब्दो के उच्चारण से भी तलाक दे सकता है। यदि " मैने तुम्हे तलाक दे दिया है।" जैसे स्पष्ट आशय वाले शब्द कहे गये है तो तो आशय के प्रमाण की आवश्यकता नही होती। किन्तु पत्नी को यह अधिकार नही हैं मुस्लिम विधि के अनुसार पति–पत्नी अपने दाम्पत्य कर्तव्यो का पालन कर रही हो। पत्नी से सम्बन्धित ये सभी शर्ते पुरूष प्रधानता को प्रदर्शित करते है। इद्दत, इला जिहार जैसे नियम स्त्री पुरूष संदर्भो को स्पष्ट रूप से परिभाषित करने मे सहायक है। कुरान कहता है–" जो कुछ पैगम्बर साहब देते है उसे स्वीकार करो और जिसे वो मना करते है उससे दूर रहो।" मुहम्मद साहब के इन शब्दो का उपयोग लैंगिक सम्बन्धो मे स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आता है।

मई सन 1986 को सरकार ने मुस्लिम कट्टरपथियो के सामने आपने आपको पूर्णत समर्पित कर दिया।[1] मुस्लिम महिला (तलाक सम्बनधी अधिकारो की सुरक्षा) अधिनियम 1986 ने मुस्लिम महिलाओ को दडप्रक्रिया सहिता की धारा 125 के तहत भरण–पोषण के अधिकार से वचित कर दिया जो अभी तक सभी समुदायो के व्यक्तियो को प्राप्त था।[2]

---

1. मजुमदार बीना, चेंजिंग टर्म्स ऑफ पॉलिटिकल डिस्कोर्स, 22 जुलाई 1995 E.P.W
2. देखें · I.P.C. की धारा - 125.

यह कानून तब प्रकाश मे आया जब शाह बानो के प्रकरण मे उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर विवाद प्रारम्भ हुआ। मुस्लिम महिलाओ को मुस्लिम निजी कानून के तहत इस अधिकार से वचित कर दिया गया। न्यायालय की दृष्टि मे यह एक देश मे एक सविधान के अन्दर रहने वाले नागरिको मे विभेद था। अत देश मे समान नागरिक सहिता के निर्धारण पर विचार किये जाने की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने का आग्रह किया। यह मुस्लिम कट्टरपथियो के लिए स्वीकार्य नही था। उनका नारा था "इस्लाम खतरे में है"। मुस्लिम महिलाओ के गुजारे भत्ते की इस समस्या पर जब मुस्लिम कट्टरपथियो ने विवाद प्रारम्भ किया तो ससद ने कट्टरपथियो के समक्ष घुटने टेकते हुए मई 1986 मे एक विधेयक पास किया जिसे मुस्लिम महिला विधेयक के नाम से जाना गया। काग्रेस ने इस विधेयक को पास करने के लिए पार्टी के भीतर तीन लाइन का 'व्हीप' जारी किया और यह विधेयक ससद मे पास हो गया।

एक जनतात्रिक देश मे मुस्लिम महिलाओ की यह तस्वीर स्वतत्रता प्राप्ति के 40 वर्षो बाद सामने आयी जब 50 वर्ष से अधिक अवस्था की शाहबानो को न्यायालय मे जाना पडा अपने भरण–पोषण के लिए। मुस्लिम समाज मे ही नही यह स्थिति सम्पूर्ण भारतीय समाज की है जहॉ महिलाओ के सदर्भ मे अधिकार जैसी कोई अवधारणा स्पष्ट रूप से दिखाई नही देती।

मुस्लिम समाज तथा महिलायें:–

इस्लाम धर्म से पूर्व असीमित बहुपत्नीत्व की प्रथा थी। इस्लाम के अन्तर्गत क्रमिक सुधार के रूप मे बहुपत्नीत्व को चार तक सीमित कर दिया गया है। अरब मे इस्लाम धर्म से पूर्व स्त्री वासना–तृप्ति की वस्तु तथा पति की सम्पत्ति मानी जाती थी। पुरूष स्त्री को कुछ समय या सदा के लिए खरीदता था। वहॉ चार प्रकार के विवाह प्रचलित थे।

प्रथम प्रकार का विवाह आजकल के विवाहो के समान था तथा अन्य तीन वेश्यावृत्ति से बेहतर कोटि के नही थे।

पैगम्बर साहब ने अरब समाज की बहुत सी कुरीतिया दूर की तथा स्त्री की सहमति को विवाह के लिए आवश्यक कर दिया। "इस्लाम मे सन्यास नही है।"[1]

अत मुहम्मद साहब लोगो को सम्बोधित करते हुए कहते है " वह जो विवाह करते है अपना आधा धर्म पूरा कर लेते है और बचा हुआ धर्म अल्लाह से डरकार सदाचार तथा पवित्र जीवन व्यातीत करके पूरा कर सकते है। वो आगे कहते है "विवाह मेरा आज्ञा पत्र है। इसमे से जो लोग अविवाहित है वो विश्वास के योग्य नही है।"[2]

पैगम्बर मुहम्मद साहब के इन सुलझे तथा परिवर्तनकारी विचारो का आदर करते हुए भी मुस्लिम समाज ने अपने समाज मे स्त्री को दमित करने के अनेक शोषणकारी प्रतिबन्ध लगाये जो कुरान और हदीस की मूल भावना के विरूद्ध है। दूसरी तरफ मुस्लिम एव हिन्दू दोनो ही निजी कानून सविधान की मूल भावना तथा लैंगिक समानता का विरोध करते है।जहॉ बाल विवाह अवरोध ा अधिनियम 1929 द्वारा सम्पूर्ण भारत मे बाल विवाह पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया वहीं निजी कानून इसे सुरक्षित बनाये रखने मे अपनी भूमिका निभाते है। मुस्लिम विवाह मे अव्यस्कता कानून मे अभिभावक की भूमिका सिर्फ महिलाओ के सदर्भ मे लागू होती दृष्टिगत होती है। मुस्लिम विवाह विच्छेद अधिनियम 1939 (सशोधित के अन्तर्गत,कोई भी मुसलमान विवाहित स्त्री विवाह–विच्छेद की डिक्री इस आधार पर प्राप्त करने के लिए अधिकृत है कि अपने पिता या अन्य अभिभावक द्वारा 15 साल की उम्र प्राप्त करने से पहले विवाह कर दिये जाने पर 18 वर्ष की उम्र से पहले उसने विवाह से अस्वीकार कर दिया हो।[3]

---

1. मुस्लिम विधि
2. वही
3. वही.

महिला शिक्षा का विकासः—

भारत मे शिक्षा के विकास की समस्या जनसख्या वृद्धि के कारण जटिल रूप धारण कर चुकी हे। बढती हुई जनसख्या के कारण बालको एव बालिकाओ की जनसख्या मे वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा पर अधिक व्यय आवश्यक हो जाता है। इसमे सदेह नही कि शिक्षा पर किया गया व्यय श्रमिको की उत्पादिता मे वृद्धि करता है। प्रत्येक छात्र पर 144 रूपये वार्षिक व्यय का अनुमान लगाया गया है। 1981 मे 5 से 14 वर्ष की आयु के 1,560 लाख व्यक्तियो के होने के कारण शिक्षा व्यय मे 2,246 करोड रूपये वार्षिक वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त डाक्टरी देखभाल और सार्वजनिक स्वास्रूय पर भी अधिक व्यय होगा। 1991 की जनगणना के अनुसार साक्षरता की दृष्टि से उत्तर प्रदेश का स्थान सम्पूर्ण भारत मे 14वा है। मात्र 14 6 प्रतिशत लोग यहॉ साक्षर है। इन आकडो का अर्थ मात्र यह नहीं कि हमारी शिक्षा नीति मे कोई बहुत बडी गलती है साथ ही यह भी है कि जनसख्या का बाझ देश के ऊपर बोझ बनता जा रहा है।

लि ग	निरक्षर	साक्षर तथा प्राथमिक शिक्षा	प्राथमिक पाठशाला शिक्षा पूर्ण	मिडिल स्कूल पास	हाईस्कूल पास	हाईस्कूल से ऊपर	छूटे	कुल प्रतिशत उम्र
कुल पुरूष	36 4	16 8	15 2	12 5	13 8	5 3	0 1	100 00
कुल महिला	61 9	3 9	1.0	5 8	0.5	0 2	0 1	100 00

स्रोत — नेशनल फेमिली हेल्थ सर्वे (1992—93) उत्तर प्रदेश

1 दत्त रूद्र एव सुन्दरम के पी एम भारतीय अर्थव्यवस्था

2 जनसख्या रिर्पोट 1991

3 नेशनल फेमिली हेल्थ सर्वे (1992—93) उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो मे साक्षरता सम्बन्धी अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि महिला साक्षरता

क्षेत्र	साक्षरता दर
पश्चिमी उत्तर प्रदेश	21 7
मध्य उत्तर प्रदेश	24 1
बुन्देलखण्ड	19 5
पर्वतीय प्रदेश	35 7
पूर्वी उत्तर प्रदेश	17 5
सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश मे पुरूष	55 7
महिला	25 3
कुल	41 6

स्रोत – जनसख्या रपट, 1991 सामान्य जनसख्या, उत्तर प्रदेश

उपरोक्त आकडे शिक्षा की क्षेत्रीय विविधता को प्रदर्शित करते हैं जैसा कि स्पष्ट है महिला साक्षरता की दर पर्वतीय क्षेत्रो मे सबसे अधिक 35 7 तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश मे मात्र 17 5 है। शिक्षा के क्षेत्र मे उत्तर प्रदेश की स्थिति अत्यत निराशा जनक है। पूर्वी उत्तर प्रदेश मे जनसख्या के घनत्व ने बेरोजगारी को स्थायी बना दिया है। जिससे महिला शिक्षा के विकास पर प्रभाव पडना स्वाभाविक है। यही स्थिति बुन्देलखण्ड मे भी है।

---

1 जनसख्या रिर्पोट 1991

नगरीय एव ग्रामीण शिक्षा के प्रतिशत –

प्रदेश की कृषि प्रधानता का प्रभाव यहॉ की शिक्षा पर भी पडा फलत नगरो और ग्रामो की शिक्षा प्रतिशतता मे आश्चर्यजनक अन्तर देखने को मिलता हैं यह अन्तर प्राथमिक पाठशाला मे बालको के प्रतिशत से ही ज्ञात हो जाता है। 1991 के जनगणना के आकडे यह दर्शाते है कि 5 से 9 वर्ष के 29 26 प्रतिशत बालक तथा 13 02 प्रतिशत बालिकाये ग्रामीण क्षेत्रो मे प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करने के लिए जाते है वही नगरीय क्षेत्रो मे यह आकडे क्रमश 22 86 तथा 17प्रतिशत है। इन आकडो के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं नगरीय क्षेत्रो मे महिला शिक्षा मे निश्चित विकास हुआ है। NFHS के नवीनतम आकडो के अनुसार उत्तर प्रदेश मे शिक्षा के प्रति सामान्य लोगो की भागीदारी बढी है। ग्रामीण क्षेत्रो मे यह 42 प्रतिशत तथा नगरीय क्षेत्रो यह बढकर 69 5 प्रतिशत है।

अध्याय : 7

स्वतत्रता के इस पचासवे दशक मे उत्तर– प्रदेश मे यदि महिलाओ के समग्र विकास को रेखाकित किया जाय तो निश्चित रुप से जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे उपलब्धियॉ दृष्टिगत होगी। शिक्षा, व्यवसाय, प्रशासन, निर्णयन, विज्ञान सहित लगभग सभी क्षेत्रा इस परिवर्तन में शामिल हैं। आधुनिकता तथा विकास के सम्मिलित प्रारुप ने नारी जीवन के लगभग सभी पूर्ववर्ती बिन्दुओ मे महत्वपूर्ण परिवर्तन किया है। ये परिवर्तन जनसख्या के घनत्व के आधार पर तथा विकास संबधी आकडो के आधार पर नगण्य है। भारत के सन्दर्भ मे जहॉ ये आंकडे विभिन्न क्षेत्रो के हिसाब से थोडे बहुत सतोष जनक भी है। किन्तु उत्तर – प्रदेश महिला विकास की दृष्टि से तथा मूल वैचारिक परिवर्तन की दृष्टि से अत्यत पिछडा हुआ राज्य है। महिलाओ के सदर्भ मे यहॉ का मूल दर्शन आज भी मध्यकालीन है जो यहॉ के समाज मे स्पष्टत दृष्टिगोचर होता है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास ने जहॉ आम घरेलू महिला के जीवन मे महत्वपूर्ण बदलाव की स्थिति पैदा की है वही स्वतत्रता समानता तथा अधिकारो के प्रश्न स्त्री – पुरुष के मध्य स्वाभिमान का विषय बना हुआ है। भारत के ढाचागत विकास मे मूलरुप से दो धाराये प्रवाहित हो रही हैं – वह है नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रो का अलग – अलग स्तरो पर विकास। इस दोहरे विकास ने अलग–अलग स्तरो पर परिवर्तन को भी जन्म दिया है। यह परिवर्तन जहॉ नगरीय क्षेत्र की महिलाओ के लिए क्रान्ति के समान है वही ग्रामीण महिलाओ के जीवन में यह परिवर्तन न के बराबर दिखता है। ग्रामीण क्षेत्रो मे इस धीमी गति के अनेक कारण हैं जिनमें सबसे महत्वपूर्ण है – कृषि आधारित सामाजिक सरचना तथा आर्थिक विपन्नता। यह आर्थिक विपन्नता ग्रामीण परिवारो मे ऐसा जाल बुनती है जहॉ रोटी, कपडा और छत के अलावा अन्य कोई वस्तु आवश्यकता की श्रेणी मे नही आती है।फिर महिलाओं की समानता, स्वतत्राता जैसी विचार धारा वहॉ के समाजिक दृष्टिकोण मे अपनी जगह नहीं बना पाती। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रो की महिलाओ को मूल मानवीय अधिकारो का ज्ञान ही नही है।

दूसरी तरफ सचार माध्यमो के प्रभाव ने ग्रामीण युवा मे परिवर्तन के बीज रोपे है। यही कारण है कि दोनो ही क्षेत्रो मे हमे परिवर्तन का आभास कमोवेश होता है। किंतु फिर भी इन परिवर्तनो मे खासी दूरियॉ है।

ग्रामीण महिलाए –

सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश का ग्रामीण क्षेत्र कृषि आधारित है। और कृषि आधारित व्यवस्थाओ मे परिवार एक महत्वपूर्ण इकाई है। इन परिवारो मे महिलाए अपने सम्पूर्ण रचनात्मक श्रम के साथ समर्पित हैं, किन्तु उनका यह श्रम अपने स्तरीकरण के साथ कमश तुलनात्मक दृष्टि से मूल्यहीन है। उत्तर – प्रदेश का ग्रामीण समाज मूल रुप से दो महत्वपूर्ण आर्थिक वर्गों तथा विभिन्न जातियो मे विभाजित है। ग्रामीण समाज का यह विभाजन महिलाओ के सदर्भ मे भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ग्रामीण क्षेत्रो मे उच्च जातीय महिलाये अपनी सम्पूर्ण मध्यमवर्गीय परम्पराओ का पालन करते हुए घर के भीतर के कार्यों को महत्व देती है। इसमे कृषि से जुडे कार्य भी शामिल है। दूसरी तरफ निम्न जातीय महिलाओ पर साधारणतया व्यवहारिक रुप मे परम्पराओ का पालन आवश्यक नही है और यही कारण है कि ये ग्रामीण महिलाये पुरुषों के साथ कार्य करते हुए दृष्टिगत होती है।

उच्चजातीय ग्रामीण महिलायें : –

ग्रामीण उच्चजातीय महिलाये कृषि के उन कार्यो से जुडी हैं जो अत्यधिक जटिल तथा कठिन है। जैसे खेतों से आये अनाज का संरक्षण । अनाज का सरक्षण अपने आप मे बहुत श्रमसाध्य कार्य है। जो महिलाओं के हिस्स मे आता है। परिवार मुख्यत एक आर्थिक इकाई है।

यद्यपि गृहकार्य और उत्पादन मे अन्तर होता है किन्तु ग्रामीण परिवार इकाई से इसे अलग कर पाना मुश्किल है। गृहणी के कार्य प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रुप से उत्पादन के हिस्से थे और है। परिवार अभी भी एक निजी सहायता प्रणाली है – ऐसी इकाई जिसमे अवैतनिक श्रम होता है। अत उच्चजातीय ग्रामीण महिलाएं निम्न जातीय श्रमिक महिलाओ की तुलना मे अत्यत त्रस्त और बन्धन युक्त जीवन व्यतीत करती है। जहॉ स्वतत्रता, समानता और अधिकार जैसे शब्द अर्थहीन है। सर्वेक्षणो के दौरान यह पाया गया कि सबसे अधिक त्रासद स्थितियॉ युवा ग्रामीण महिलाओ की है। जिनको दोनो ही श्रेणियो मे अत्यन्त कठिन जीवन शैली को अपनाना पडता है जिसे वे अपनी नियति मानती है। साक्षात्कारो के दौरान पूछे गये प्रश्नो के उत्तर मे महिलाओ ने बताया कि समस्त कार्यों को करने मे वह 24 घटों मे से लगभग 18 घटे खर्च करती हैं। ये कार्य उनको दिनचर्या के रुप मे अनिवार्यत करने ही पडते है। इन कार्यो का कोई विकल्प उनके पास नही है। फिर भी उच्चजातीय ग्रामीण परिवारो मे शिक्षा का प्रचार हुआ है और इन परिवारो मे लडकियो की शिक्षा की आवश्यकता के महत्व को लोगो ने समझा है।

भारतीय राजनीति मे महिलाओं की भागीदारी व वर्तमान स्थिति : –

स्वतत्रता प्राप्ति के 50 वर्षों की अवधि के बीत जाने के बाद भी भारत मे महिलाओ को सामाजिक , राजनीतिक, प्रशासनिक और आर्थिक क्षेत्रों मे वह भागीदारी नही प्राप्त हो सकी है जैसा कि संविधान निर्माताओ एवं राष्ट्रीय नेताओ ने कल्पना की थी । भारत मे लोकसभा के अबतक 12 चुनाव सम्पन्न हो चुके हैं। परन्तु किसी भी लोक सभा चुनाव मे 50 महिला सांसद नही चुनी जा सकी। राजनीति के शीर्ष पदों पर महिलाओ के पहुँचने का प्रतिशत काफी कम है। इसके अतिरिक्त प्रशासन के क्षेत्र मे महिलाओं की भागीदारी तो और भी कम है।

जबकि प्रशासनतत्र सामाजिक आर्थिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम हो सकता है। निर्णय लेने तथा इन्हे लागू करने के स्तर पर बडी सख्या मे महिलाओ की प्रशासन मे भागीदारी से न सिर्फ लोकतत्र मे महिलाओं को उभरकर आने का अवसर मिलता है। बल्कि विकास की प्रक्रिया को भी बढावा मिलता है।

यदि उपेक्षित वर्ग के लोग जिनमे महिलाए भी सम्मिलित है अधिकार प्रदान करने वाली राजनीतिक प्रणाली से बाहर रहते हैं तो लोकतात्रिक समाज की स्थापना का लक्ष्य पूरा नही हो सकता। राजनीतिक प्रणाली से आशय केवल वोट देने का अधिकार प्राप्त करना ही नही है बल्कि नीति निर्धारण और निर्णय लेने की प्रक्रिया पर प्रभाव डालना भी सम्मिलित है। भारत मे महिलाओ को व्यवस्थापिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका मे प्रतिनिधित्व अपर्याप्त है। ससद मे यह प्रतिशत 10 प्रतिशत से भी कम है। राज्य सभा मे यह प्रतिशत 8 प्रतिशत मात्र है। 1997 के अर्न्तसंसदीय सर्वेक्षण सघ की रिपोर्ट के अनुसार सर्वेक्षण किये गये 106 देशो में से बाग्ला देश महिला प्रतिनिधियों की दृष्टि से 52वे स्थान पर तथा भारत 65वे स्थान पर था।

भारत मे पार्टी की सकिय राजनीति में स्त्रियो की बढत तो है पर पार्टी प्रमुख पदो पर वे मात्र 11 प्रतिशत हैं। नीचे दी जा रही तालिका से यह स्पष्ट है कि महिलाओ का स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात के 50 वर्षों मे सम्पन्न 12 लोकसभा चुनावो मे प्रतिनिध्वि उत्साहवर्धक नही रहा है।

सन्	1952	1957	1962	1967	1971	1977	1980	1984	1989	1991	1996	1998
लोकसभा मे महिला सासदो का प्रतिशत	4 4	5 4	6 8	5 9	4 2	3 4	7 9	8 1	5 3	7 2	7 2	8
राज्य सभा मे महिला सासदो का प्रतिशत	7 3	7.5	7 6	8 3	7 0	10 2	9 8	11 4	9 7	15 5	9 0	—

इस तालिका से यह स्पष्ट है कि स्वतत्रता के पश्चात हुए आम चुनावो मे लोक सभा के लिए चुनी हुई महिलाओ में अभी तक केवल 4 से 8 प्रतिशत महिला सासद ही सर्वोच्च विधायिका तक पहुची है । विगत 50 वर्षों मे सम्पन्न हुए 12 चुनावो मे महिला उम्मीदवारो व निवार्चित महिला सांसदों की सख्या दर्शाने वाली निम्न तालिका से स्पष्ट है कि 1952 के लोक सभा चुनाव मे महिला सासदो की कुल सख्या 22 थी जो 1962 मे बढकर 35 हो गयी थी लेकिन 1967, 1971, 1977 मे महिला सासदो की सख्या मे कमश कमी आती गयी और 1977 मे केवल 19 सासद रह गयीं। 1984 में सर्वाधिक 44 सासद बनी लेकिन 1989 के चुनाव मे यह सख्या पुन घटकर 27 हों गयी। दसवी तथा ग्यारहवी लोकसभा मे 39—39 सासद थी वर्तमान मे महिला सांसदों की सख्या घटकर 43 हो गयी है।

वर्ष	कुल प्रत्याशी	पुरुष प्रत्याशी	महिला प्रत्याशी	महिला निर्वाचित
1952	1,874	—	—	22
1957	1,518	1,473	45	35
1962	1,985	1,915	70	
1967	2,369	2,302	67	30
1971	2,784	2,698	86	21
1977	2,439	2,369	70	19
1980	4,620	4,478	142	28
1984	5,574	5,406	164	44
1989	6,160	5,962	198	27
1991	8,699	8,374	325	39
1996	13,952	13,353	325	39
1998	4,750	—	271	43

स्रोत के0 बी0 के0 पोलीग्राफिक्स

के0 बी0 के0 पोलीग्राफिक्स के उपरोक्त आकडों से यह स्पष्ट है कि ग्यारहवी लोकसभा तक यद्यपि महिला उम्मीदवारो की संख्या बढी है किन्तु पुरुष उम्मीदवारो की तुलना मे यह नगण्य है। जबकि 1952 के पहले लोक सभा चुनाव में कुल महिला प्रत्याशियों के आंकडे उपलब्ध न होने पर भी यह कहा जा सकता है कि उनकी संख्या अधिक नही थी किन्तु सफल प्रत्याशियो की संख्या आशाजनक थी।

यदि पहले चुनाव में, जबकि जवकि हमारे पास योग्य व कर्मठ महिला नेतृत्व की अच्छी सख्या थी यह परिपाटी डाली गयी होती कि 50 प्रतिशत नही तो 30 प्रतिशत महिलाये होगी तो शायद आज परिदृश्य कुछ अलग होता और हम प्रशासन और निर्णयन मे महिलाओ के योगदान से वचित नही रहते।

के0 बी0 के पोली ग्राफिक्स के उपरोक्त आकडो से यह भी स्पष्ट है कि ग्यारहवी लोकसभा तक यद्यपि महिला उम्मीदवारो की सख्या बढी है। दूसरी लोकसभा मे महिला उम्मीदवार केवल 45 थी। वही ग्यारहवी लोक सभा के चुनाव मे लगभग 599 महिलाए उम्मीदवार थी। यद्यपि 12वी लोकसभा मे महिला उम्मीदवारो की सख्या घटकर 271 हो गयी । कुल महिला प्रत्याशियो मे 15.86 प्रतिशत महिलाये अपनी योग्यता व छवि के बलपर ससद पहुच सकी हैं। परन्तु यह प्रतिशत अभी भी बहुत कम है। राज्य विधान सभाओ मे यह प्रतिशत अभी भी बहुत कम है।

उत्तर – प्रदेश की राजनीति मे महिला भागीदारी :–

उत्तर – प्रदेश भारत के सभी राज्यो में वैचारिक पिछडेपन का प्रतिनिधित्व करता है। इसके अनेक कारणों मे सबसे महत्वपूर्ण कारण इस प्रदेश की सांस्कृतिक विरासत है। जो महिलाओं का सिर्फ धर्म और सस्कृति से जोडकर देखती है। यहाँ ग्रामीण ही नही नगरीय क्षेत्रो में भी महिलाओं को सामाजिक सदर्भो के विशाल क्षेत्र से दूर रखा जाता है। यही कारण है कि 27 विधान सभाओ में सर्वाधिक 425 विधायकों वाली उत्तर – प्रदेश विधान सभा मे महिलाएं मात्र 18 हैं। इसलिए उत्तर – प्रदेश की राजनीतिक भागीदारी एक विचारणीय प्रश्न है।

भारत मे महिलाओ को प्रतिनिधि सस्थाओ मे आरक्षण देने की सर्वप्रथम मई 1989 मे तत्कालीन प्रधानमत्री राजीव गाधी ने बडे उत्साह के साथ 64वा सविधान सशोधन विधयक ससद मे प्रस्तुत किया । यह विधेयक पचायती राज विधेयक के नाम से जाना गया किन्तु यह विधेयक राज्य मे दो तिहाई बहुमत के अभाव मे गिर गया । 1993 मे 73वे एव 1994 मे 74वे सविधान सशोधन के अन्तर्गत कमश पचायती निकायो एव स्थानीय आरक्षण प्रदान किया गया।

यद्यपि यह आरोप है कि पचायत चुनावो मे जो महिलाये चुनकर आती है वे अनपढ है। पच महिलाये अक्सर पर्दे मे रहती हैं और घूघट निकालकर अपने पतियो के इशारो पर काम करती है। उन्हे अपने क्षेत्र की जानकारी भी नही होती है। वे जन प्रतिनिधित्व नियम तक का अर्थ नहीं जानती है।

इस सदर्भ मे निश्चित ही कुछ आरोप सिद्ध हो सकते है किन्तु हमे यह नहीं भूलना चाहिए कि वर्तमान स्वरुप मे पचायत के अस्तित्व मे आने के बाद ही अनपढ होते हुए भी महिलाओ ने प्रत्यक्ष स्वविवेक से अपने निर्णय लेने की क्षमता को पहचाना है। जहॉ तक सवैधानिक समझ और दूसरी राजनीतिक प्रकियाओ का सवाल है तो वह अशिक्षित पुरुषो पर भी उतना ही लागू होता है जितना महिलाओं पर। इसके लिए सम्पूर्ण समाज के साक्षरता के प्रतिशत को उठाना अत्यन्त आवश्यक है। महिलाओं की सत्ता मे भागीदारी न होने का महत्वपूर्ण कारण है कि उन्हें पार्टियो में उचित भागीदारी से वचित रखा जाता है। देश के विभिन्न राजनीतिक दलों की यदि विवेचना की जाय तो वहॉ महिलाओ का प्रतिशत अत्यन्त निराशाजनक है। वर्तमान में किसी भी राजनीतिक दल के संसदीय बोर्ड तथा राष्ट्रीय कार्यकारिणी मे इस समय 73 सदस्य हैं जिनमे महिलाओं की संख्या 9 है। काग्रेस कार्यसमिति के 19 सदस्यो में मात्र 2 महिलाये हैं।

राजनीतिक दल	कुल सदस्य	महिलाओ की सख्या
(1) भारतीय जनता पार्टी		
ससदीय बोर्ड	9	1
राष्ट्रीय कार्यकारिणी	73	9
(2) अखिल भारतीय काग्रेस समिति	19	2
(3) जनता दल राज्य मामलो की समिति	15	0
ससदीय बोर्ड	15	0
राष्ट्रीय कार्यकारिणी	75	11
(4) मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी	70	5
पोलिट ब्यूरो	15	0
(5) भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी	—	—
सचिवालय	9	0
राष्ट्रीय कार्यकारिणी	31	3
राष्ट्रीय परिषद	125	6
(6) सयुक्त मोर्चा		
सचालन समिति	15	0

उपरोक्त आकडे इस बात का प्रमाण हैं कि महिलाओ के सत्ताकरण के प्रति राष्ट्रीय पार्टियो के दृष्टिकोण मे भी गम्भीरता नही है। यही कारण है कि देश के प्रथम आम चुनाव के बाद से निरतर महिलाओ की सकिय भागीदारी तथा राष्ट्र निर्माण के प्रति उनकी सजगता मे कमी आयी है। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात किसी भी राजनीतिक दल ने महिलाओ की भागीदारी पर गम्भीरता पूर्वक ध्यान नहीं दिया।

इसके कारणो मे सबसे महत्वपूर्ण कारण था हमारी सामाजिक सोच क्योंकि हमारी सस्कृति मे महिलाओ की सामाजिक परिदृश्य मे सक्रिय भागीदारी को अच्छा नही समझा जाता अत स्वतत्रता के पश्चात हमने अपने सास्कृति मूल्यो को पुन स्थापित करने का प्रयास किया है। यद्यपि औद्यौगीकरण तथा पूंजीवादी प्रभाव के बाद होने वाले परिवर्तनो को महिलाओ के साथ जोडकर न देखे तो निश्चित रुप से हमारा सामाजिक प्रयास महिलाओ के विकास मे अर्थहीन ही रहा है। यही कारण है कि हमे ससद तथा विधान सभाओ मे महिलाओं के लिए आरक्षण की माग करनी पड रही है और इस माग को अत्यत विरोध का सामना करना पड रहा है।

महिला आरक्षण विधेयक के प्रमुख प्रावधन :–

81 वॉ सविधान सशोधन विधेयक –

1– भारतीय सविधान के अनुच्छेद 330 (1) लोकसभा मे महिलाओ के लिए स्थान आरक्षित रहेगे ।

2– भारतीय सविधान के अनुच्छेद 330(2)के अधीन आरक्षित स्थानो की कुल सख्या के एक तिहाई स्थान यथास्थिति अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन जातियो की महिलाओ के लिए आरक्षित रहेगे।

3– अनुच्छेद 332(1) के अन्तर्गत प्रत्येक राज्य की विधानसभाओं मे भी महिलाओ के लिए स्थान आरक्षित रहेगें ।

4– किसी राज्य या सघ राज्य क्षेत्र में लोकसभा के लिए प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा भरे जाने वाले स्थानो की कुल संख्या के जहां तक सम्भव हो एक तिहाई स्थान अनुसूचित जनजातियो की महिलाओ के लिए आरक्षित स्थानो की संख्या भी है। ऐसे स्थान उस राज्य यासघ राज्य या सघ राज्य क्षेत्र में भिन्न–2 चुनाव क्षेत्रो को चकानुकम द्वारा आवटित किये जा सकेगे ।

5– जहॉ ऐसे नाम निर्देशन लोकसभा के लिए तीन साधारण निर्वाचनो से मिलकर बनने वाले प्रत्येक ब्लाक के सम्बन्ध मे किये जाते है । जहॉ वह स्थान प्रथम दो, दो साधारण निर्वाचनो के पश्चात गठित की जाने वाली प्रत्येक लोकसभा के लिए आग्ल भारतीय समुदाय की महिला के नाम निर्देशन के लिए आरक्षित होगा और तीसरा साधारण निर्वाचन के पश्चात गठित की जाने वाली लोकसभा मे उस समुदाय की महिला के लिए स्थान आरक्षित नही रहेगा

6–इस अधिनियम द्वारा भारतीय सविधान में किये गयें सशोधनो से लोकसभा या दिल्ली की विधान –सभा मे किसी प्रतिनिधित्व पर तब तक प्रभाव नही पडेगा जब तक इस अधि ानियम के प्रारम्भ पर विद्यमान (यथाशक्ति) लोकसभा किसी राज्य की विधान सभा या दिल्ली की विधान सभा का विघटन नही हो जाता ।

स्वतत्रता प्राप्ति के 50 वर्षो की अवधि मे भी महिलाओ को राजनीतिक एव निर्णनयन प्रकिया मे महत्वपूर्ण भागीदारी नही प्राप्त हो सकी है । भाजपा गठबंधन की केन्द्र सरकार मे एक मात्रा कैबिनेट मत्री सुषमा स्वराज हैं। केद्रींय मेत्रिामडल मे कुल महिला मत्रियो की सख्या 3 है । इस प्रकार केन्द्रीय मत्रिपरिषद में महिलाओ का प्रतिशत मात्रा 9 है।

U.N.D.P. की वार्षिक रिपोर्ट , 1997 के अनुसार विकसित देशों मे 12प्रतिशत तथा विकासशील देशों मे 6प्रतिशत महिलाओ केन्द्रीय मंत्रिमडल के सदस्य हैं। विश्व मे केन्द्रीय मत्रिमडल के मंहिलाओ का औसत 7प्रतिशत है ।

रिपोर्ट के अनुसार स्वीडनमे 47 प्रतिशत सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे 21 प्रतिशत नार्वे मे 41 प्रतिशत फिनलैण्ड मे 35 प्रतिशत तथा भारत के पडोसी देशो बागलादेश व पाकिस्तान मे कमश 4 प्रतिशत तथा 5 प्रतिशत केन्द्रीय मत्रिमडल की सदस्य महिलाये है।

इन आकडो से यह स्पष्ट है कि न केवल भारत मे बल्कि विश्व स्तर पर प्रशासन तथा निर्णनयन की प्रक्रिया मे महिलाओं की सीधी हिस्सेदारी पुरूषो की तुलना मे कम है किन्तु विकासशील देशो मे यह स्थिति अत्यन्त विचारणीय है। भारत के सदर्भो मे यह स्थिति किसी से छिपी नही है।

शिक्षा सामाजिक—आर्थिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम है। भारत मे महिला साक्षरता 40 प्रतिशत से भी कम है जिन राज्यो मे महिला साक्षरता का प्रतिशत अधिक है वहा की राजनीतिक एव निर्णयन प्रक्रिया मे महिलाये निचले स्तर से ही भागीदार है। प्रशासन तत्र महिलाओ के विकास तथा उनकी स्थिति में परिवर्तन का महत्वपूर्ण माध्यम सिद्व हो सकता है। जिन राज्यो में महिला साक्षरता का प्रतिशत अधिक है वहॉ महिलाओ की प्रशासन तथा निर्णयन मे भागीदारी भी उत्साहजनक हैं लेकिन जहॉ ऐसा नही है वहॉ स्थितियॉ बेहद निराशाजनक है। इसमे उ0प्र0 अग्रणी राज्यो मे है। उ0प्र0 मे समाज की आन्तरिक गतिविधियो तथा जनता की सांस्कृतिक प्रतिबद्धता मे हमारी सरकारों की कोई भूमिका नही है। जबकि केरल मे अब तक की राज्य सरकारों ने जनता के बीच उसके वैचारिक परिवर्तन में अपनी भूमिका को अग्रणी माना है। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात के राष्ट्रीय आकडे महिलाओ के संदर्भ में इतने निराशाजनक है तो प्रादेशिक स्तर पर इसके उत्साहजनक होने की आशा नही की जा सकती।

अब निर्णयन की न्याय प्रक्रिया मे 23 न्यायाधीशो मे से केवल एक महिला न्यायाधीश है और उच्च नयायालयो के लगभग 420 न्यायाधीशो मे से मात्र 14 महिला न्यायाधीश है भारत सरकार के 75 सचिवो मे सिर्फ एक ही महिला सचिव है। इन आकडो से यह स्पष्ट है कि भारत मे स्वतत्रता प्राप्ति के 50 वर्षो के उपरान्त भी अधिक परिवर्तन नही आया है।

वस्तुत भारत मे पिछले दशक से ही विभिन्न राजनैतिक दलो की महिला नेताओ और महिला अधिकारो की हिमायती लोगो की यह कोशिश रही है कि प्रतिनिधि सस्थाओ मे महिलाओ की पर्याप्त भागीदारी हो, महिलाये भी देश के उन अहम मुद्दो पर अपनी राय रख सके जिन मुद्दो पर उनकी सोच भी उतनी महत्वपूर्ण है जितनी पुरूषो की। राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न मचो पर बार–बार इस माग के बाद भी पुरूष सत्तात्मक राजनैतिक दलो की उम्मीदवारों की सूचियो मे महिलाओ का आकडा 10 प्रतिशत से अधिक नही हो पाया है। परिणामत 1996 के चुनाव मे प्रत्येक राजनैतिक दल ने अपने–2 चुनाव घोषणा पत्र मे महिलाओ को एक तिहाई आरक्षण देने के मुद्दे को प्रमुखता दी।

राजनीतिक दलो द्वारा लिया गया यह निर्णय निश्चय ही महिलाओ के सबलीकरण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगा किन्तु अधिकतर दलों ने इसे मात्रा चुनावी मुद्दें के रूप मे प्रयोग किया । उनका यह प्रसास सार्थक नही कहा जा सकता।

दहेज.–

पिछले दो दशको से दहेज लेने और देने की प्रवृत्ति मे अत्यन्त वृद्धि हुई है, विवाह के लगभग 90 प्रतिशत मामलो मे अनिवार्यत अपने हैसियत के अनुसार दहेज लिया और दिया जाता है। यह एक ऐसा अघोषित सामाजिक समझौता है। जिसको विवाह का व्यवहारिक मापदण्ड बना लिया गया है।

उ0प्र0 के ग्रामीण तथा नगरीय दोनो ही क्षेत्रो मे दहेज विवाह की एक आवश्यक शर्त है। इलाहाबाद विश्वविघालय के 300 छात्रो से से पूछे गये प्रश्नो मे लगभग सभी दहेज लेने के समर्थक थे। उन परिस्थितियो मे जब वह प्रतियोगी परिक्षाओ के उम्मीदवार हो। क्लास प्रथम तथा द्वितीय के पदो पर चयनित उम्मीदवारो की दहेज राशि एक निशचित सीमा है और यह सब आपसी समझ और विवेक का प्रश्न है।

उ0प्र0 मे चौथे वेतन आयोग की रिर्पोट आने के पश्चात नगरीय जीवन शैली तथा उसकी क्रय शक्ति मे विस्तार हुआ है।इसका प्रत्यक्ष प्रभाव लडकियो के विवाह पर पडा है । ऐसा नही है कि दहेज लडके वालो द्वारा ही मॉगा जाता है कुछ ऐसे भी प्रकरण होते है जहॉ दहेज देना लडकी के घर वाले अपनी शान का प्रश्न समझते है । इसलिए समाज का आन्तरिक सम्प्रेषण इतना सघन और जटिल है कि अन्तिम रूप से कोई एक निष्कर्ष निकालना कठिन हैं फिर भी दहेज लेना उ0प्र0 के समाज की पहचान है। दहेज से सम्बन्धित प्रश्न के उत्तर मे अच्छी पढी लिखी और योग्य लडकियो मे भी बेचारगी तथा अनिश्चितता की स्थिति रहती है । ऐसा नही है कि लडकियो के भीतर दहेज को लेकर विरोध की स्थिति हो लडकियॉ भी विवाह में मिलने वाले गहने, कपडे और भौतिक सुख –सुविधा के सामानो के आकर्षण से बची रहती हैं किन्तु फिर भी माता–पिता पर आने वाले अतिरिक्त आर्थिक बोझ का कारण वो अपने आपको स्वयं समझने लगती है। नगरीय क्षेत्राो में इसी कारण लडकियों के विवाह की अवस्था जो पहले 20 से 22 वर्ष थी से बढकर 25–30 वर्ष हो गयी है। इसके पीछे मूल रूप से हमारे समाज की सांस्कृतिक विरासत की बहुत बडी भूमिका हैं। सस्कृति तथा नये आर्थिक ढाचे ने मिलकर भारतीय नारी के जीवन को एक नये आर्थिक सामाजिक सकट में डाल दिया है।

साक्षात्कारों पर आधारित

दहेज हत्या –

पिछले दो दशक पूर्व तक दहेज हत्याये उ0प्र0 के नगरीय क्षेत्रो मे ही मुख्य रूप से होती थी। स्वतत्रता प्राप्ति के इस पाचवे दशक मे स्त्रियो ने जहॉ स्वतत्रता समानता तथा सत्ताकरण के प्रश्न की मुहिम चला दी वही बुनियादी स्थिति मे महिलाओ का सामाजिक स्तर न केवल गिरा है बल्कि उसे अनेक तरह की सामाजिक विकृतियो का सामना करना पड रहा है। इनमे दहेज हत्या, भ्रूण हत्या, तथा बलात्कार प्रमुख है । उ0प्र0 मे ग्रामीण सामाजिक सरचना मे विवाह एक आवश्यक सामाजिक–प्रक्रिया है किन्तु 1970 के पश्चात इस विचारधारा मे थोडा–2 परिवर्तन आया और विवाह को आवश्यकता की मूल विचारधारा से हटकर व्यापारिक दृष्टि से देखा जाने लगा।

महिलाओ के साथ हिसात्मक व्यवहार हमारी अलिखित सामाजिक सहिता है। इसका कार्य व्यापार हमारी आपसी समझ का नमूना है। स्वतत्रता के इस पाचवे दशक मे महिलाओ के प्रति न केवल हिसा मे विस्तार हुआ है अपितु हिसात्मक बिन्दुओ मे भी विस्तार हुआ है, हिसा के नये क्षेत्रा खुले है। यह हिंसात्मक प्रक्रिया कुछ तो नारीवादी चेतना और पितृसत्तात्मक व्यवस्था की टकराहट के कारण होते है। और कुछ सामाजिक प्रक्रिया का अग होते है। राजस्थान की साथिन भवरी देवी के साथ किया गया सामूहिक बलात्कार इसका उदाहरण है, दूसरी तरफ हिसा की अन्य गतिविधियॉ सामाजिक सस्कृति का हिस्सा है। आकडे बताते है कि दहेज हत्याये 1987 से 1997 के मध्य अत्यन्त तीव्र गति से बढी है । 6 जुलाई 1997 को चदौली की एक युवती की रहस्यमय परिस्थितियो मे मृत्यु हो गयी किन्तु छान बीन के पश्चात यह हत्या दहेज के सदिग्ध घेरे मे आ गयी।

विश्व संस्था अन्तरससदीय सघ के 97 के सर्वेक्षण के अनुसार 1988 मे पूरी दुनिया मे उच्च पदों पर (संसदीय सीटों) 14.6% महिलाएँ थी, जनवरी '97 में यह सख्या घटकर 11.7% रह गई।

इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ पब्लिक ओपिनियन के सर्वेक्षण पर आधारित विधायिका मे महिलाओं का प्रतिनिधित्व दर्शाने वाली निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है कि विश्व में स्वीडन की संसद मे सर्वाधिक 40.4% महिलाओं का प्रतिनिधित्व है। सबसे कम महिला प्रतिनिधित्व वाला देश मोरक्को है वहाँ की संसद मे महिलाएँ महज 0 6% है। मोरक्को की 333 सदस्यों वाली संसद मे महज दो महिलाएँ है।

कुछ प्रमुख देशों में वहाँ की संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व

क्र0सं0	देश	कुल सीट	महिलाएँ	प्रतिशत
01	स्वीडन	349	141	40.4
02 -	नॉर्वे	165	65	39.4
03 -	फिनलैण्ड	200	67	33 5
04	डेनमार्क	179	59	33 0
05 -	हालेण्ड	150	47	31.3
06	न्यूजीलैण्ड	120	35	29.2
07 -	जर्मनी	672	176	26.2

08-	स्पेन	350	86	24.6
09-	चीन	2978	626	21.0
10-	स्विटजरलैण्ड	200	42	21.0
11-	वियतनाम	395	73	18.5
12-	कनाडा	295	53	18.0
13	आस्ट्रेलिया	148	23	15.5
14-	जिम्बाबवे	150	22	14.7
15-	मैक्सिको	500	71	14.2
16-	पोलैण्ड	460	60	13.0
17-	इण्डोनेशिया	500	63	12.6
18-	कोलम्बिया	163	19	11.7
19-	अमेरिका	435	51	11.7
20-	फिलीपीन्स	203	22	10.8
21-	रूस	450	46	10.2
22-	जाम्बिया	155	15	9.7
23-	सीरिया	250	24	9.6
24-	ब्रिटेन	651	62	9.5
25-	बांग्लादेश	330	30	9.1
26-	मलेशिया	192	15	7.8
27-	इटली	120	9	7.5
28-	इजराइल	120	9	7.5
29-	भारत	545	39	7.2 *
30-	ब्राजील	513	34	6.6
31-	फ्रांस	577	37	6.4
32-	यूनान	300	19	6.3

*. नोट भारत के सन्दर्भ में वर्तमान लोकसभा में यह प्रतिशत लगभग 8% हो गया है।

13	वेनेजुएला	203	12	5.9
14-	थाइलैण्ड	393	22	5.6
15-	जापान	500	23	4.6
16-	मिश्र	454	9	2.0
17-	मोरक्को	333	2	0.6

[I.I.P.O के सर्वेक्षण पर आधारित]

इस तालिका से स्पष्ट है कि द0 एशियाई देशों में इण्डोनेशिया 12.6% महिला प्रतिनिधियो के साथ तथा बांग्लादेश 9.1% महिला प्रतिनिधियों के औसत के साथ भारत से बेहतर स्थिति में है भारत में वर्तमान लोकसभा चुनावों में महिलाओ की भागीदारी लगभग 8% हो गयी है।

तालिका से यह भी स्पष्ट है कि स्वीडन, नार्वे, फिनलैण्ड और डेनमार्क मे महिलाओ को विधायिका मे 33% या उससे अधिक स्थान प्राप्त है। हालैण्ड, न्यूजीलैण्ड, जर्मनी, स्पेन, चीन और स्विटजरलैण्ड मे 20% से 32% स्थानों पर महिला सांसद है। 10% से कम महिला सांसद- जाम्बिया, सीरिया, ब्रिटेन, बांग्लादेश, मलेशिया, चिली, इजराइल, भारत, ब्राजील फ्रांस, यूनान, वेनेनजुएला, थाइलैण्ड, जापान, मिश्र और मोरक्को में हैं। स्पष्ट है कि जापान और फ्रांस जैसे उन्नत देशों में भी राजनीतिक क्षेत्र मे महिलाओं का कम हस्तक्षेप दिखाई देता है।

रिपोर्ट के मुताबिक विश्व में दस देश ऐसे भी हैं जहाँ की संसद अभी भी महिला प्रतिनिधित्व से पूरी तरह से वंचित है - ये देश है- संयुक्त अरब अमीरात, कुवैत, न्यू गिनी पापुआ, टोंगा आदि। 97 के अर्न्तसंसदीय सर्वेक्षण संघ की रिपोर्ट के अनुसार सर्वेक्षण किए गये 106 देशों में बांग्लादेश महिला प्रतिनिधियों के स्थान की दृष्टि से 52वें स्थान पर तथा भारत 65वाँ स्थान पर था। अर्जेन्टीना 25.3% महिला सदस्यों के साथ विश्व में ग्यारहवें नम्बर पर हैं।

TABLE 11.1 (a)
DISTRICT WISE RANKS ON DEVELOPMENT INDEX (DI)
AND INDEX OF WOMEN DEVELOPMENT (IWD)

REGION/DISTRICT	DEV. INDX.	RANK	I.W.D.	RANK
WESTERN REGION				
1 Bijnor	10.18	16	2 45	43
2 Moradabad	9 00	23	2 02	56
3 Badaun	7 56	47	1.64	62
4 Rampur	10 30	15	1.68	61
5 Bareilly	9.36	21	1.94	57
6. Pilibhit	7.90	38	1.85	59
7 Shahjahanpur	7 52	48	2.19	52
8 Saharanpur	10.14	17	2.50	41
9 Muzaffarnagar	10 05	18	2.70	32
10 Meerut	11 22	13	2 83	24
11 Bulandshahr	8 84	27	2 25	50
12 Aligarh	8.03	34	2.39	47
13. Mathura	7.68	42	2.22	51
14. Agra	9 52	20	2.35	49
15 Etah	7 01	55	2.06	54
16 Mainpuri	7 15	52	2.37	48
17 Farrukhabad	7 97	36	2.72	30
18. Etawah	7 74	40	2 62	37
19 Ghaziabad	11.93	8	2.83	25
20. Haridwar	10.85	14	2.65	34
21. Ferozabad	11.89	9	6.11	3
CENTRAL REGION				
22. Sitapur	6.18	63	1.92	58
23. Hardoi	6.38	62	2.03	55
24 Unnao	7.04	53	2.50	40
25 Lucknow	12.31	5	3.48	12
26 Barabanki	6 89	59	2.44	44
27 Rae Bareli	7 31	50	2.78	27
28 Kanpur Dehat	6.92	58	2 72	31
29 Kanpur	14.42	2	3 64	10
30 Fatehpur	7.60	45	3.16	18
31 Lakhimpur Kheri	6 92	57	1.85	60
BUNDELKHAND REGION				
32 Jalaun	8.55	29	2.77	28
33 Hamirpur	7.69	41	2.88	22
34 Banda	7.75	39	3.23	15
35. Lalitpur	7.34	49	2.42	45
36 Jhansi	9.95	19	3.20	16
HILL REGION				
37 Uttar Kashi	13.52	3	6.18	2
38 Dehra Dun	15.10	1	4.48	9
39 Tehri Garhwal	11.61	12	5 49	6
40 Garhwal	11 79	11	5.22	7
41. Chamoli	12.12	7	5.68	5
42. Pithoragarh	11.83	10	5.97	4
43 Almora	12.16	6	6.23	1
44 Nainital	12.56	4	3.90	9

TABLE 11.1

INDEX OF DEVELOPMENT AND INDEX OF WOMEN DEVELOPMENT FOR THE DIFFERENT DISTRICTS OF UTTAR PRADESH: A REGIONAL ANALYSIS

REGION / DISTRICT	CPR	FEMALE	SEX	LITERACY	WPR	WPR	%OF HH	%OF HH	%OF HH
	91-92	AGE AT MARRIAGE	RATIO	(F)	MALE	FEMALE	WITH ELE.	WITH DK WATER	WITH TOILET
	INDI-1	IND-2	IND-3	IND-4	IND-5	IND-6	IND-7	IND-8	IND-9
	1991	1991	1991	1991	1991	1991	1991	1991	1991
WESTERN REGION									
1 Bijnor	35 40	19 00	871	26 97	47 90	3 02	28 53	85 47	38 85
2 Moradabad	38 70	18 40	852	18 34	50 08	2 37	20 80	79 44	30 87
3 Badaun	31 30	16 80	810	12 82	54 03	1 58	11 27	66 52	26 16
4 Rampur	39 40	14 70	858	15 31	52 42	2.34	27 60	82 34	53 05
5 Bareilly	32 80	17 60	839	19 85	51 65	1 40	24 06	80 64	38 74
6 Pilibhit	31 10	17 10	853	17 22	52 08	1 80	15 20	83 25	20 58
7 Shahjahanpur	28 20	16 70	816	18 59	45 06	5 10	14 30	57 28	20 62
8 Saharanpur	30 30	18 50	851	28 10	51 50	3 45	38 13	88 96	30 23
9 Muzaffarnagar	34 40	18 00	850	29 12	51 05	5 42	31 10	92 00	27 56
10 Meerut	36 90	18 50	852	35 62	49 23	3 93	45 36	91 71	34 56
11 Bulandshahar	31 40	17 90	855	24 30	47 04	2 73	24 78	86 84	23 21
12 Aligarh	27 40	17 90	842	27 17	47 90	3 02	19 68	70 18	17 08
13 Mathura	31 90	17 30	816	23 04	47 87	3 26	21 03	56 75	14 66
14 Agra	41 30	16 10	832	30 83	48 15	2 25	36 57	60 49	27 10
15 Etah	30 90	17 10	824	22 91	50 58	1 72	10 60	57 89	12 85
16 Mainpuri	30 30	16 90	833	33 05	49 16	1 10	10 82	56 25	10 71
17 Farrukhabad	33 10	17 10	835	31 97	45 06	5 10	14 34	50 18	18 11

उपसंहार

मानव सभ्यता के प्रारम्भ से लेकर स्वतत्रता प्राप्ति के उपरान्त बीते 50 वर्षो मे अगर महिलाओ की स्थिति को रेखाकित किया जाय तो यह स्वतत्रता, समानता तथा लैंगिक न्याय जैसे बिन्दुओ पर आज भी निराशाजनक स्थिति मे ही है। यद्यपि एक समय था जब वर्ग और लिग के आधार पर कोई विभाजन नही था किन्तु धीरे–धीरे जिन बिन्दुओ पर स्त्रियो ने समझौतावादी दृष्टिकोण अपनाना प्रारम्भ किया वह उनकी नियति बन गयी। इस नियति को स्त्रियो ने केवल स्वीकार किया अपितु आत्मसात कर लिया। यद्यपि भारत की सबसे प्राचीन सभ्यता को मातृ–प्रधान सभ्यता की सज्ञा दी जाती है किन्तु विचारणीय प्रश्न यह है कि जिस समाज मे सुगठित राजतत्र के लक्षण परिलक्षित हो वहाँ मातृ–सत्ता का होना विरोधाभास से अधिक कुछ नहीं है। यदि सिन्धुकालीन सभ्यता मे ऐसे लक्षण दिखते भी हैं तो ये परिवार तथा धर्म की सीमा तक ही रहे होगे। जहाँ तक आर्य स्त्रियो का प्रश्न है पितृसत्तात्मक परिवारो ने उन पर काफी हद तक अपना नियत्रण रखा। हलाकि उस चरवाही अर्थव्यवथा मे स्त्रियो को सक्रिय उत्पादक भूमिका का अत्यधिक महत्व था। समय के साथ धीरे–2 खेतिहर अर्थव्यवस्था विकसित हुई। 600 ई0पू0 तक वर्ग तथा जाति का भेद पैदा हो चुका था। ब्राह्मण वर्ग एक बडी ताकत के रूप मे उभर चुका था। यह वर्ग समस्त समाज की भूमिका निर्धारित करने तथा उसे सचालित करने का कारक बना। यही से स्त्रियो के लिए कार्यो का विशेष बटवारा तथा उसकी भूमिका का निर्धारण प्रारम्भ हो गया। यही समय था जब स्त्रियो की सक्रिय भूमिका पर नियत्रण लगाने की दिशा मे कार्य प्रारम्भ हुआ। इसके अनेक कारण थे। इसमे सबसे प्रमुख था व्यक्तिगत सम्पत्ति का विकास और इसके उत्तराधिकार का प्रश्न। यहीं से स्त्रियो की यौनिकता पर नियत्रण स्थापित किया गया। इसके लिए अत्यत आवश्यक था कि इसके मनोवैज्ञानिक आधार विकसित किये जाये। यह आधार विचार धारा के स्तर पर परम्पराओ तथा कानूनो के स्तर पर तथा शासन के स्तर पर सुगठित तथा सुनियोजित रूप से विकसित किये गये। राजतत्र के विकास तथ उत्तराधिकार की सुनिश्चितता ने जिस कालखण्ड मे स्त्री की स्वतत्रता पर प्रतिबध लगाया वह उत्तर वैदिक काल से लेकर स्वतत्रता प्राप्ति के पूर्व तक एक सीधी रेखा मे विकसित होती रही।

मौर्यकालीन राजतत्रीय ढॉचे मे महिलाओ का सुनियोजित शोषण प्रारम्भ हुआ। कौटिल्य के निरकुश नियमो ने एक तरफ राज्य के हित के लिए महिलाओ का अपमानजनक उपयोग किया वही दूसरी तरफ सामान्य मध्यम वर्गीय स्त्री की बची खुची स्वतत्रता पर भी प्रतिबध लगा दिया। इस काल तक आते–आते पितृसत्तात्मक व्यवस्था अपने निरकुश तथा स्वेच्छाचारी रूप मे प्रकट हुई। फलस्वरूप महिलाओ को पुरूषो की सम्पत्ति के रूप मे देखा जाने लगा। महिलाये धीरे–2 सम्पूर्ण सामाजिक परिप्रेक्ष्य से अलग कर दी गयी। मौर्य कालीन सदर्भो मे महिलाओ पर अकुश शासन तथा कानून के स्तर पर किया गया किन्तु गुप्त काल तक आते–आते पितृसत्तात्तमक परिवारो ने महिलाओ पर विचारधारा के स्तर पर नियत्रण स्थापित करना प्रारम्भ किया। यह कार्य उन्होने रामायण, महाभारत जैसे ग्रथो के चरित्रों के माध्यम से करने का प्रयास किया। जिसमे उन्हे अत्यत सफलता मिली। यही कारण था कि यह काल भारतीय नारी के आदर्श को सृजित करने वाला काल बन गया। इस काल मे आदर्श महिला चरित्र की जो परिकल्पना की गयी वो आज तक स्थापित है। सभी परम्परावादी पितृसत्ता को जैवकीय रूप से निर्धारित मानते है। पुरूष का पुरूषत्व और नारी का नारित्व जैविकीयता पर आधारित नहीं है बल्कि यह तो लम्बी ऐतिहासिक प्रक्रिया का नतीजा है।

राष्ट्रीय आन्दोलन के समय महिलाओ से सम्बन्धित जो विषय विचारणीय ने जिन पर राष्ट्रीय नेताओ ने अनेक विचार प्रस्तुत किये वो सभी विषय स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात् उतने मुखर नही रह गये थे फिर भी महत्वपूर्ण 'हिन्दू कोड बिल' के पश्चात दहेज निरोधक कानून जैसी सवैध ाानिक प्रक्रिया इस बात का प्रबल सकेत थी कि भारतीय राष्ट्रीय सरकार महिला विषयक प्रश्नो पर उदासीन नही थी। यही कारण था कि सामाजिक समानता का प्रश्न महिलाओ के सदर्भ में हमेशा महत्वपूर्ण रहा।

उत्तर प्रदेश का सामाजिक एव सास्कृतिक वातावरण, इसके लगभग सभी क्षेत्राो मे समान है। नगरीय एव ग्रामीण दोनो ही स्तरो पर महिलाओं एव बालिकाओ की उपेक्षा यहॉ की सामान्य जीवन शैली है। शिक्षा से लेकर सम्बलिगत अधिकारों तक उसे दूसरे श्रेणी की नागरिकता प्राप्त है। कन्या का जन्म दु:ख का कारण माना जाता है। उ0 प्र0 के सभी क्षेत्रो मे व्यवस्था के इस स्वरूप को सामाजिक समझदारी के साथ उपरोक्ष तथा परोक्ष दोनो ही रूपो मे बडे पैमाने पर स्वीकार किया जाता है। पारिवारिक पदानुक्रम मे पुरुष सदैव ऊपर रहता है। इसलिए उत्तर–प्रदेश पितृ सन्नात्मक व्यवस्था का सबसे उपयुक्त रूप है। यही कारण है कि यहॉ सामाजिक पिछड़ापन आज भी अपने मूल रूप मे अनेक विसगतियो के साथ विद्यमान है। उदाहरण के लिए दहेज को ही ले। 1961 मे दहेज प्रतिषेध अधिनियम बनने के बाद भी दहेज स्त्री जीवन की सबसे बडी त्रासदी है। 1952 तक दहेज हत्यायें समाचार पत्रो के पृष्ठों का अंग नहीं थी किन्तु शिक्षा पूँजीवादी सगठन तथा महिला विकास की विसंगतियो के साथ दहेज हत्यायें सी जीवन का एक सबसे महत्वपूर्ण विषय बन गया। इस कानून के बनने के पश्चात दहेज तथा दहेज सम्बन्धी अन्य अपराओ मे आश्चर्यजनक रूप से वृद्धि हुई है।

स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात महिला सम्बन्धी जिन दो कुप्रथाओ ने प्रमुख रूप से अपना स्थान बनाया है उनमे दहेज–हत्या तथा भ्रूण–हत्या प्रमुख हैं जबकि दोनो ही अपराधो के लिए सरकार ने कडे कानून बनाये हैं।

उत्तर–प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रो मे यह सामाजिक विकृतियॉ अपने पूर्ण प्रभावी तरीके से परिलक्षित हैं। महिलाओ के प्रति हिसात्मक व्यवहार हमारी अलिखित सामाजिक। इसका कार्य व्यापार हमारी आपसी समझ का नमूना है। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात महिलाओ के प्रति हिसात्मक व्यवहार मे पर्याप्त वृद्धि हुई है और हिसा के नये क्षेत्र खुले हैं।

आधुनिक विचारधारा तथा जीवन–पद्धति से परिवारो मे तनाव बढा है फलस्वरूप पति–पत्नि के रिश्तो मे टकराहट आयी है। कारण है कि भारतीय न्यायालयो मे लम्बित मुकदमो मे तलाक से सम्बन्धित मुकदमो की सख्या सबसे अधिक है। तलाक कानूनो ने जहॉ परिवारो के टूटने के दृश्य प्रस्तुत किये हैं वहीं महिलाओ की स्थिति को अत्यत जटिल बना दिया है। तलाक के अधिकाश मामलो मे वैचारिक टकराव के कारण नवविवाहिताओ को पारिवारिक क्रूरता का सामना करना पडता है। पिछले 50 वर्ष इस क्रूरता के साक्षी हैं।

प्रत्येक देश और समाज मे महिलाये पूरुषों की तुलना मे कठिन श्रम तथा दोहरे दायित्व का निर्वहन करती हैं। परिवार के लिए किये गये इस असाध्य श्रम के बाद भी उनके प्रति परिवार का रवैया उपेक्षापूर्ण ही रहता है। भारत चूँकि कृषि–प्रधान देश है अत यहॉ महिलाए बडी सख्या मे कृषि कार्यो से जुडी हुई हैं किन्तु उन्हे उत्पादन के बिन्दुओ से जोडकर नही देखा जाता। यही कारण है कि उन्हे साधनो के सचालन तथा नियत्रण का अधिकार नहीं है। दूसरी तरफ शिक्षा के विकास के साथ महिलाओ के लिए अन्य रोजगार के अवसर बढ़े है, विशेषकर नगरीय क्षेत्रो मे। चिकित्सा, शिक्षा जैसे क्षेत्र व्यापक रूप से महिलाओ के लिए खुले हैं।

1991 की जनगणना के अनुसार उ0 प्र0 मे बेरोजगारी का प्रतिशत सबसे अधिक है तथा उत्तर–प्रदेश की कुल जनसख्या का 32 27% ही रोजगार युक्त है, साथ ही इसमे लिग अनुपात मे भारी अन्तर है। इसके अनुसार 50 15% पुरुष तथा 14 72% महिलाये ही कार्यरत है।

स्वतत्रता प्राप्ति के 50 वर्ष बीत जाने के बाद भी महिलाओ को राजनीति एव निर्णयन प्रक्रिया मे महत्वपूर्ण भागीदारी नही प्राप्ति हुई है। यू एन डी पी की वार्षिक रिपोर्ट 1997 के अनुसार विकसित देशो मे 12 तथा विकासशील देशों मे 6 महिलाए केन्द्रीय मत्रिमडल की सदस्य हैं। भारत मे आज भी महिलाओ को निर्णनयन की मुख्य धारा से दूर रखा जाता है। 27 विधान सभाओ मे सार्वाधिक 425 विधायको वाली उत्तर–प्रदेश विधान सभा मे मात्र 18 महिलाये हैं। महिलाओ के राजनीतिक सबलीकरण की दिशा मे उठाया गया पहला ठोस कदम 73 वे तथा 74 वे सविधान सशोधन पचायती राज निकायो मे एक तिहाई महिलाओ का आरक्षण सुनिश्चित करना।

भारत मे महिलाओ को सभी क्षेत्रों व्यवस्थामिका, न्यायपालिका और कार्य पालिका मे महिलाओ का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है। महिलाओ के सामाजिक स्तर से सबधित एक समिति ने अपने प्रतिवेदन मे 20 वर्ष पूर्व कहा था कि भारत मे राजनीतिक दलों का दावा पुरुष प्रधान है और कुछ विशेष अपवादो को छोडकर अधिकाश राजनीतिक दलों के कार्यकर्ता सामान्य पूर्वाग्राहो तथा सामाजिक मान्यताओ से युक्त नहीं है। वे महिला नागरिकों को पुरुषो का पिछलडगू मानते हैं। दुर्भाग्यवश आज भी स्थिति मे कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है।

इन तमाम राजनैतिक तथा सामाजिक स्थितियों के बीच कुछ महिला सगठनो, गैर सरकारी सगठनो तथा चिंतको ने महिलाओ के विषय में तथा उनकी स्थितियो के लिए जिम्मेदार मूल कारणो पर विचार करना प्रारम्भ किया। इन विचारको ने भारत मे पितृसत्ता व उससे जुडे प्रश्न जेडर जाति और वर्ग को ध्यान मे रखते हुए पितसत्ता के आरम्भ को समझने का प्रयास किया गया।

भारत जैसे देश मे जहॉ सामती अवशेष अभी बहुत मजबूत हैं मे महिला मुक्ति का सवाल तथा महिला–विकास और भी अधिक जटिल है। भारत के बडे–बडे विकसित शहरो मे रहने वाली महिलाये अभी भी सामती जकडन मे बधी हुई है क्योकि वहॉ महिलाये महिला प्रश्नो के मूल बिन्दु को समझने का प्रयास नहीं करती। दूसरी तरफ स्वतंत्र नारी आन्दोलन की ताकते भी उभरकर सामने नही आयी हैं। किन्तु उत्तर–प्रदेश के कुछ क्षेत्रो में महिलाये सामाजिक मुद्दो पर सक्रिय रही है और वही से उनका सबलीकरण प्रारम्भ हुआ है। उदाहरण के लिए उत्तराखण्ड के तीन प्रमुख आन्दोलन–शराब बन्दी, चिपको तथा अलग राज्य बनाये जाने की माग सभी मे महिलाये सक्रिय ही नही अगुआ रही हैं। महिलाओ द्वारा सचालित इस विशाल और व्यापक आन्दोलनो के पश्चात भी उत्तराखण्ड मे महिलाओं की सामाजिक स्थिति बहुत अच्छी नही कही जा सकती।

नारी आन्दोलनो की सक्रियता तथा मूल समस्याओ की समझ के पश्चात नारी चितको ने जब स्त्री–पुरुष समानता का प्रश्न खडा किया और उसके लिए सघर्ष प्रारम्भ किया तो इस आन्दोलन को परम्परावादियो तथा शासक दोनो ही तरफ से अपने–अपने स्तरो पर विरोध का सामना करना पडता है और कर रहे है। इसका सबसे उपयुक्त उदाहरण है 33% महिला आरक्षण विधेयक का ससद मे पास न होना तथा उस पर काग्रेस प्रवक्ता अजित जोगी की टिप्पणी।

अजित जोगी का कहना था कि "अगर महिलायें ससद तथा सरकारी दफ्तरो के चक्कर काटने लगेगी तो समाज की सबसे मूलभूत ईकाई परिवार का क्या होगा।" यह नारीवाद के खिलाफ शासक वर्ग का सचेत प्रचार है जो मूल रूप से महिला विकास मे बाधक तत्व हैं।

हमेशा से परिवार के नाम पर, सम्बन्धों की मधुरता के नाम पर, प्रेम व करुणा के नाम पर, महिलाओ से ही बलिदान मांगा गया है और इस बहाने उसे दोयम दर्जे का नागरिक बनाकर पहलकदमी से वचित रखा गया है। फिर भी हमारे परिवार अहकार से भरे हुए हैं।

वश के नाम पर मर मिटते हैं लोग वश पुत्रो के नाम से चलता है। पुत्रियो की अवहेलना होती है। यही पितृसत्तात्मक व्यवस्था ऊपर उठकर सार्वजनिक पितृसत्ता का रूप ले लेती हैं। इसके उदाहरण हमे काम काजी महिलाओ के अनुभवो तथा उसके अध्ययन से हमे मिलते हैं।

इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था की जडे महिलाओ के स्वास्थ को भी प्रभावित करती हैं। महिलाओ के स्वास्थ सम्बन्धी आकडे बताते हैं कि भारतीय महिलाओ मे रक्त अल्पता, पोषक तत्वो की कमी तथा अत्यधिक कार्य–भार के कारण महिलाओ में मृत्यु–दर की अधिकता है तथा नवजात बच्चो के स्वास्थ पर इसका सीधा प्रभाव पडता है।

महिला विकास के ये बिन्दु मूल–रूप से मध्यम वर्गीय महिलाओ से अधिक जुडे हैं जबकि निम्न वर्ग की महिलाये अनेक स्वतत्रताओ के साथ भी विभिन्न प्रकार के सामाजिक–शोषणो का शिकार होती हैं। दैनिक वेतन भोगी महिलाये हमारी सैद्धातिक समानता के दावो के विपरीत–पुरुषो से कम वेतन पाती हैं जबकि उनके काम के धन्टे अधिक हैं। उनको अपने घर तथा बाहर के काम के दायित्व को अधिक सक्रियता से निपटाना पडता है। इनको सामाजिक तथा पारिवारिक दोनो ही प्रकार के शोषण का सीधे सामना करना होता है। परिवार मे प्रताडना तथा काम के समय शोषण के साथ बलात्कार जैसी हिसा का सीधे सामना करना पडता है। इसलिए दिहाडी पर कार्य करने वाली महिलाओ के लिए स्थितियॉ और भी विचित्र तथा विकट हैं।अब यही स्थितियाँ मध्यमवर्गीय काम–काजी महिलाओ की भी है। उन्हें प्रति–दिन शोषण तथा हिसा के विभिन्न तरीको से गुजरना पडता है।

दूसरी तरफ उ0 प्र0 की मुस्लिम महिलाओ की स्थिति और भी चिताजनक है। धर्म जहॉ व्यक्ति की आस्था के मनोविज्ञान से जुडा हैं वही महिलाओं के सदर्भ में यह अत्यत ही ह्रदयहीन और नकारात्मक भूमिका निभाता है। इस्लाम में जहॉ पुरुषो को स्त्रियो पर हाकिम बनाकर भेजने की बात कही गयी है वहीं दिन्दू धर्म अनेक परोक्ष–अपरोक्ष कुरीतियों से ग्रस्त है।

पिछले लगभग 50 वर्षों मे महिलाओ तथा महिला–सगठनो ने वास्तविक समानता के सिद्धान्त पर कार्य करने की दिशा मे सोचकर कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियॉ हासिल की। यद्यपि व्यवहारिक समानता का प्रश्न आज भी अनुत्तरित है फिर भी महत्वपूर्ण हिन्दू कोड बिल से लेकर अनेक कानूनी अधिकार जो स्त्री की समानता की राह मे महत्वपूर्ण थे स्त्रियो ने प्राप्त किये हैं। इन्ही सदर्भों के तहत महिला समस्याओ का वैश्वीकरण भी हुआ जिससे महिलाओ मे अपने अधिकारो को लेकर पिछले दस वर्षों मे अत्यत सजगता आयी और यही कारण है कि महिला चितक अब सिर्फ समानता की बात नहीं करती बल्कि राजनैतिक सत्ताकरण की बात करती हैं। 1975 मे मैम्सिको से लेकर 1995 बीजिंग तक आते–आते महिलाये अपने अधिकारो को प्राप्त करने के लिए राजनीति मे भागीदारी को विशेष महत्व दे रही है।

उत्तर–प्रदेश महिलाओ से सम्बन्धित इन सभी बिन्दुओ से पूरी तरह आन्दोलित है किन्तु यहॉ की परम्परागत सामतवादी जीवन शैली महिलाओ को महत्वपूर्ण अधिकार देने के पक्ष मे पहल नही करती। महिला विकास–क्रम मे उ0 प्र0 भारत के अन्य राज्यो की तुलना में सबसे पीछे है।

1947 मे देश के स्वतत्र होने के उपरान्त प्रदेश तथा देश मे गठित नयी सरकार ने अपना कार्य प्रारम्भ किया। राष्ट्रीय स्तर पर तो महिलाओ से सम्बन्धित प्रश्न मुख्य विषय बने रहे किन्तु प्रादेशिक स्तर पर इसकी आवश्यकता को महसूस नहीं किया गया फलस्वरूप प्रदेश मे महिलाओ के विकास की गति बहुत धीमी है। स्वतत्रता के 50 वर्षों के उपरान्त कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ है।

पिछले 50 वर्षो मे युग बदला है परिस्थितियॉ बदली है। सबसे अधिक समाज की आर्थिक सरचना बदली है। स्त्री के आत्मगत और वस्तुगत स्थितियो मे परिवर्तन हुआ है किन्तु यह विकास गुणात्मक विकास नही है। महिलाए सम्पूर्ण मानव जाति का लगभग आधा हिस्सा है और किसी भी देश, राज्य व क्षेत्र के विकास के लिए यह अत्यत आवश्यक है कि वह अपनी इस आध ी दुनिया को विकास की मुख्य धारा के साथ ले चले क्योकि यदि यह आधी जनसख्या परम्पराओ मे बधी रही तो किसी भी देश, राज्य, क्षेत्र का समुचित विकास नही हो सकता। स्वतत्रता के बाद उत्तर प्रदेश मे यदि महिलाओ के विकास को रेखाकित किया जाय तो निश्चित रूप से उपलब्ध ियॉ दृष्टिगत होगी। शिक्षा, व्यवसाय,प्रशासन, निर्णयन तथा राजनीति के क्षेत्र महिलाओ के लिए व्यापक रूप से खुले है। साथ ही समाज की विचारधारा मे भी परिवर्तन दिखता है। नयी आर्थिक,सामाजिक सरचना मे महिलाओ के प्रति हिसा तथा शोषण की प्रवृत्तियॉ बढी है इसलिए हमे महिलाओ के प्रति दृष्टिकोण को दो तरह से देखना होगा। 1 महिलाओ के विकास से सम्बन्ध ित राजकीय दृष्टिकोणए 2. महिलाओ के विकास से सम्बन्धित समाजिक दृष्टिकोण। दोनो ही विकास की दृष्टि और गति भिन्न–भिन्न होती है।

राजकीय दृष्टिकोण व्यापक होते हुए भी समाज द्वारा सचालित होता हैं अत· राजकीय दृष्टिकोण केवल बडा और क्रियाशील दिखता है। वास्तव में होता नही है। चूँकि इसकी सम्पूर्ण कार्यविधि समाज के लिए होती है इसलिए इसकी गति का निर्धारण भी समाज करता है। उदाहरण के लिए 1947 का वर्ष राष्ट्र निर्माण जैसे प्रमुख सवालो का वर्ष था। अत महिला विषयक प्रश्न उपेक्षित ही रहे। यदि राष्ट्रीय आन्दोलन में स्त्री–पुरूष भागीदारी के आकडे एकत्रित कि ये जाये तो निश्चित रूप से महिलाओं की भागीदारी लगभग पुरूषो के समान ही होगी। किन्तु इन महिलाओ को राष्ट्र निर्माण की सक्रिय भूमिका से अलग रखा गया। विचारणीय प्रश्न है कि यदि हमारे पास नेहरू, पटेल, सुभाष जैसे राष्ट्रीय व्यक्तित्व थे तो योग्य और पढी लिखी महिलाओ की पूरी श्रृखला भी थी। जिन्हे उपयुक्त भागीदारी का अवसर प्रदान नही किया गया। यह उपेक्षा महिलाओ के प्रति हमारी परम्परागत नीति और दृष्टिकोण का उदाहरण है।

उत्तर प्रदेश महिला विकास की दृष्टि से तथा मूल वैचारिक परिवर्तन की दृष्टि से अत्यत पिछडा हुआ राज्य है। इस प्रदेश मे पितृसत्ता की वैचारिक जडे इतनी गहरी और मजबूत है कि यहॉ परिवर्तन और विकास सम्बन्धी दोनो ही क्रियाए अत्यत जटिल और दुरूह है। सम्पूर्ण भारत की तरह यहॉ भी विकास द्विस्तरीय दिखता है। नगरो के स्तर पर इस विकास की गति अपेक्षाकृत तेज तथा ग्रामीण स्तर पर यह गति अत्यत धीमी है। जहॉ नगरीय स्तर पर विकास के सरकारी आकडे तथा गैरसरकारी आकडे सतोषजनक है वहीं ग्रामीण स्तरो पर यह आकडे राज्य की सम्पूर्ण स्थिति का खुलासा कर देते है। यही कारण है कि उत्तर प्रदेश के ढाचागत विकास में स्त्रियो के योगदान तथा स्त्रियो के लिए समग्र रूप से कुछ कह पाना अत्यत कठिन काम है।

50 वषो मे स्त्रियो की दशा मे जो परिवर्तन हुए है वो मुख्य रूप से नगरो मे तथा बहुत धीमी गति से गॉवो मे दिखते है। किसी भी आर्थिक,समाजिक परिवर्तन मे सास्कृतिक व मानसिक सोच का परिवर्तन सबसे बाद मे आता हैं। चूँकि महिलाओं से सम्बन्धित विकास समाज के सहयोग से सम्बन्धित विकास है साथ ही यह समाज की प्राथमिक इकाई परिवार के विकास का प्रश्न हैं इसलिए हम इसके एकतरफा विकास की कल्पना नही कर सकतें। यह न केवल आधी दुनिया के विकास का प्रतिबिम्ब है बल्कि यह सम्पूर्ण समाज से जुड़ा विकास है। इसलिए 50 वर्षो के महिला विकास को रेखाकित करना आसान नही है। सविधान निर्माण प्रक्रिया तथा हिन्दू कोड बिन्दु के प्रस्ताव के बाद भी महिलाओ के विकास के सरकारी प्रयास राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक स्तर पर चलते रहे किन्तु वास्तविक विकास की प्रक्रिया का आरम्भ व्यक्तिगत तथा सामाजिक चेतना पर आधारित है। 1970 के पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मुखर हुई महिला चेतना का प्रभाव भारत पर भी पडा। फलस्वरूप ऐसे साहित्यो तथा संगठनों का सृजन किया गया जिसने महिलाओ के व्यक्तिगत चितन को विस्तार देकर सामूहिक बना दिया। यही कारण है कि नगरों मे जटिल तथा सर्घषपूर्ण स्थितियों के साथ परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते है।

नगरो मे सयुक्त परिवार के विखडन तथा एकल परिवारो के गठन ने परिवार मे स्त्री की स्थिति को निरतर सशक्त बनाया है नगरो मे बदलती आर्थिक सरचना तथा विकास ने सम्पूर्ण भारतीय चितन के तथा सस्कृति के पुर्नमूल्याकन की स्थिति उत्पन्न कर दी है इसलिए गॉव से नगरो की तरफ पलायन बढा है। मध्यकालीन व्यवस्था के रूढिगत ससकार लगभग खत्म हो चुके है। इसलिए नगर अपनी जनसख्या के सर्वागींण विकास मे भारतीय गॉव की तुलना मे अधिक सफल रहे है। इसका परिणाम यह हुआ कि बडी सख्या मे लोगो ने गॉव से नगरो की तरफ पलायन किया है। इन परिवर्तनो के बाद भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था के नगरीय मूल्यो के परिवर्तन की भी अपनी सीमा है। समय व काल के अनुसार यह रूढिवादिता के स्वरूप को बदलने का प्रयास किया गया है। फिर भी सम्पूर्ण नियत्रण परिवार के मुखिया के रूप मे पुरूषो के पास ही है। ऐसा नही है कि नगरीय क्षेत्रो मे महिलाओ को पूर्ण समानता प्राप्त है किन्तु गॉव की तुलना मे वैचारिक परिवर्तन स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है।

उत्तर प्रदेश के नगर तुलनात्मक दृष्टि से अत्यत पिछडे तथा रूढिग्रस्त है। इसलिए यहॉ का महिला विकास ही नही बल्कि समग्र विकास के आकडे निराशाजनक है। महिलाओ के सदर्भ मे राष्ट्रीय आकडे प्रादेशिक आकडो से अच्छी स्थिति मे है। सामान्य भारतीय महिलाओ की तुलना मे उत्तर प्रदेश मे महिलाओ की सामान्य उम्र 9 वर्ष कम है तथा साक्षरता दर 14 प्रतिशत कम है। मृत्युदर जन्मदर तथा प्रजननदर तीनो ही सबसे अधिक है। समग्र विकास की यह दर सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के परिप्रेक्ष्य मे अत्यत निराशाजनक है। यू0एन0डी0पी0 ने विकास की क्रमसख्या में सबसे नीचा स्थान उत्तर प्रदेश को दिया हैं। 16 प्रमुख राज्यो मे उत्तर प्रदेश जेन्डर डेवलपमेट इन्डेक्स मे सबसे नीचे है। यहॉ के समाज के जातिगत बटवारे तथा असमान सम्पत्ति विभाजन ने सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के विकास को बाधित किया है। सामाजिक विकास की श्रेणी मे महलाओ का स्थान सबसे नीचे तथा उसके विकास से सदर्भित बाते परिवार तथा समाज की प्राथमिक आवश्यकता नही है।

यद्यपि पिछले कुछ दशको से पारिवारिक मूल्यो मे कुछ परिवर्तन आया है किन्तु यह पर्याप्त नही है। महिला विकास से सम्बन्धित परिवर्तन के रूप में हम जिन बिन्दुओ पर मुख्य रूप से बात कर सकते है वह है शिक्षा,राजनीति,निर्णयन रोजगार तथा रहन–सहन। इन क्षेत्रो मे प्रदेश की निश्चित उपलब्धियाँ रही है किन्तु इस विकास के साथ सामाजिक विसगतियाँ कम चिता का विषय नही है राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया मे महिलाओ को सबसे अधिक प्रोत्साहन मिला वह था शिक्षा के क्षेत्र मे प्रवेश। यद्यपि शिक्षा के परम्परागत दृष्टिकोण और स्वतत्रता के पश्चात स्वतत्र महिला चेतना की टकराहट मे समाज मे उद्वेलन की स्थिति पैदा कर दी है। हलाकि इस क्षेत्र मे परम्परागत दृष्टिकोण को बदलने मे नारीवादी लेखन का महत्वपूर्ण योगदान है। पिछले 50 वर्षो मे नारी शिक्षा का विकास उत्तर प्रदेश मे सामाजिक परिवर्तन का मूल कारक बिन्दु है।

पिछले 50 वर्षो मे समाज के दृष्टिकोण में जो महिलाओ से सम्बन्धित महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है, वह महिला शिक्षा की आवश्यक्ता को लेकर है। उत्तर प्रदेश मे स्वतत्रता प्राप्ति के प्रथम दशक से अन्तिम दशक तक के अतिम आकडे इसका प्रमाण है कि प्रदेश में महिला शिक्षा में पहले की तुलना मे बढोत्तरी बहुत अधिक है। 1991 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में 55 7 प्रतिशत पुरूष तथा 25 3 प्रतिशत महिलाए साक्षर है। इसमें सबसे अधिक पहाडी महिलाएं है। जिनका प्रतिशत 35 7 प्रतिशत है। यद्यपि शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओ का प्रतिशत पुरूषो का लगभग आधा है किन्तु फिर भी महिला शिक्षा के विकास पर संतोष किया जा सकता है। आवश्यक्ता है इस दिशा मे सार्थक प्रयत्नों की। जहाँ तक प्रदेश में प्राथमिक शिक्षा का प्रश्न है यह बालक तथा बालिका दोनो के विषय मे संतोषजनक है। प्राथमिक शिक्षा मे महिलाए 1950–51 के 12 प्रतिशत से बढकर 1991–92 तक 39 3 प्रतिशत तक हो गयी यह आशाजनक सकेत है। ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रो मे शिक्षा के विकास को लेकर अतर बहुत बडा है। नगरीय क्षेत्रो की
69 5 प्रतिशत लडकिया जो 6–14 वर्ष की है नियमित स्कूल जाती है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रो मे यह प्रतिशत मात्र 42 2 प्रशित है।

प्रदेश मे पढी लिखी स्नातक महिलाओ का प्रतिशत मात्र 4 41 प्रतिशत तथा तकनीकि शिक्षा मे मात्र 1 प्रतिशत महिलाए हैं उपरोक्त आकडो के आधार पर कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि 50 वर्षो मे महिला शिक्षा का विकास तो हुआ किन्तु अभी इसे बहुत सतोषजनक नही कहा जा सकता है।

यहॉ के ग्रामीण समाज पर आज भी वर्णव्यव्था की मजबूत पकड है। ब्राहमण वर्ग सबसे प्रभावी वर्ग है जो शिक्षित भी रहा है। ग्रामीण समाज मे गरीबी,बेरोजगारी, बीमारी, भुखमरी वैज्ञानिक समझ का आज भी आभाव हैं। ऐसे मे धर्म का नागपाश मनुष्य को जकडे रखता है। यह स्थिति सचेतन रूप से ही समाज के प्रभावशाली हिस्सो द्वारा अन्य लोगो पर आधिपत्य के लिए प्रयोग की जाती रही है। चूँकि भारत की मूल्य निर्माण तथा सस्कृत निर्माण प्रक्रिया मे प्राचीनकाल से ही ब्राह्मणो का वर्चस्व रहा है। यह वर्चस्व धर्म तथा महिलाओ के माध्यम से हमेशा पोषित रहा है। सामान्य जाति और वर्ग में विभाजित ब्राह्मणीय समाज में पूर्व समाजों की तुलना मे महत्व घट गया जो स्वतत्रता प्राप्ति तक यथावत बना रहा। यही कारण है कि पिछले 50 वर्षो मे प्रदेश का आर्थिक विकास अत्यत धीमा रहा है। शिक्षा के अभाव के कारण जन्मदर मे बढोत्तरी हुई है जिसका सीधा असर यहॉ की ग्रामीण संरचना पर पडा है। उत्तर प्रदेश के ग्रामीण परिवारो में जो जटिलता तथा कडे कानूनी कसाव हैं वो महिलाओ के संदर्भ में सबसे अधिक है। यही कारण है कि नगरीय जीवन के प्रति भारतीय महिलाओं मे अत्यधिक आकर्षण है और अवसर मिलने पर वो नगरीय जीवन ही चुनाव पसद करती हैं। इसके अनेक कारण है इसमें सबसे प्रमुख है महिलाओ पर काम का बोझ साथ ही घरेलू ससाधनो से उनका वचित होना। प्रदेश की ग्रामीण महिला दिन के 24 घटे में से 16 घटे घरेलू कामो मे लगी रहती है। उसके इस कार्य की उपयोगिता तथा महत्व को परिवारों में नजरअदाज किया जाता है। काम के इन अत्यधिक घटो तथा अतरिक्त बोझ का बुरा प्रभाव महिलाओ के स्वास्थ्य पर पडता है। भारतीय परिवारो में महिलाओं के स्वास्थ्य की चिता का प्रश्न ही नही उठता।

महिलाओ का अस्वस्थ होना परिवार के लोगो की दृष्टि मे कोई गम्भीर चिता का विषय नही होता है। आर्थिक पिछडेपन के साथ ही स्वतत्रोत्तर भारत की सामाजिक स्थितियो मे परिवर्तन हुआ है। यद्यपि विकास प्रक्रिया मे अन्तर्विरोध स्पष्ट रूप से परिलक्षित है किन्तु इस विकास के सकारात्मक पक्ष से अधिक नकारात्मक पक्ष की ओर अधिक ध्यान आकर्षित करता है। पूँजीवाद के आगमन तथा औद्योगिक विकास ने मानव के सम्पूर्ण दर्शन तथा मनोविज्ञान को प्रभावित किया है। इस परिवर्तित मनोविज्ञान का सबसे बुरा असर महिलाओं के सदर्भ मे पडा है। विवाह स्त्री जीवन का ऐसा बिन्दु है जहॉ विकास की अवधारणा अर्थहीन हो जाती हैं । पिछले 25 वर्षो के समाचार पत्रो के अध्ययन तथा अस्पतालो के बर्नवार्डो, परिवार कल्याण तथा सोनोग्राफी से सम्बन्धित आकडो से ज्ञात होता है कि हमने महिला विकास सम्बन्धी चितनो मे नकारात्मक विकास अधिक किया है। उत्तर प्रदेश मे 60 के दशक के पश्चात दहेज हत्या के समाचार कभी–कभी समाचार पत्रो के पृष्ठो पर हुआ करते थे। किन्तु पिछले दो दशको मे दहेज लेने और देने की सख्या तथा राशि मे बढोत्तरी हुई हैं। 60 के दशक तक ऐसी घटनाए जहॉ नगरीय परिवेश की घटनाये थी अब वो मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रो की घटना हो गयी। विवाह संस्कारो मे पूँजीवादी प्रभाव के कारण आडम्बर बढे है। परिवार के अदर महिलाओ का विकास इस तरह से किया जाता है कि वह अपने अस्तित्व को समझ ही नही पाती। फलस्वरूप 100 प्रतिशत महिलाए दहेज देने के लिए विवश है दूसरी तरफ 40 प्रतिशत से अधिक महिलाए दहेज हत्या तथा 30 प्रतिशत से अधिक दहेज उत्पीडन का शिकार है। व्यवहारिक रूप से अचल सम्पत्ति मे हिस्सा न होने के कारण लडकियों की स्थिति परिवार मे एक निश्चित समय सीमा के पश्चात विचारणीय हो जाती हैं। लैंगिक समानता तथा महिला सत्ताकरण को इस प्रदेश में व्यापक स्वीकृति नही मिली है यही कारण है कि उत्तर प्रदेश ही नही सम्पूर्ण भारत मे राजनीतिक और प्रशासनिक स्तर पर महिलाओं की उचित भागीदारी आज भी नही हैं। स्वतत्रता प्राप्ति के पश्चात सविधान द्वारा लैंगिक समानता के सिद्धान्तो को सुनिश्चित किया गया है (भारतीय संविधान अनुच्छेद 14) किन्तु यर्थाथ इससे अलग रहा है।

पिछले 50 वर्षो मे महिलाओ की भागीदारी सामाजिक, आर्थिक,सास्कृतिक व शैक्षिक क्षेत्रो मे जिस गति से बढी है उसी गति से राजनीतिक क्षेत्र मे यह सहभागिता दिखाई नही देती। आकडे बताते है कि स्वतत्रता के पश्चात हुए आम चुनावो मे लोकसभा के लिए चुनी हुई महिला प्रत्याशियो मे अभी केवल 4 से 8 प्रतिशत महिला सासद ही सर्वोच्च विधायिका तक पहुँची है। इसका सीधा असर सामाजिक विकास पर पडा है। उत्तर प्रदेश के सदर्भ मे तो यह स्थिति और भी अधिक उलझी हुई है। प्राचीन आर्य सभ्यता की पहचान रखने तथा भारतीय सस्कृति के गढ होने की छवि ने यहॉ के समाज को थोडे बहुत परिवर्तनो के बाद भी बनाये रखा है। यहॉ महिलाओ की राजनीतिक सक्रियता को आज तक सहर्ष स्वीकार नही किया गया है। इस सदर्भ मे विश्वविद्यालयो तथा अन्य शिक्षण सस्थानो मे युवाओ से लिये गये साक्षात्कार अत्यत महत्वपूर्ण है। अधिकतर युवाओ को महिलाओ की राजनीतिक सहभागिता पर आपत्ति थी उनका कहना था कि महिलाओ को अपने परम्परागत कार्यो को रूचिपूर्वक करना चाहिए। इससे उनके नारीत्व का विकास होता है। पुरूष प्रधान समाज की यह युवा विचारधारा महिला विकास मे मुख्य बाधक तत्व है। यही कारण है कि उत्तर प्रदेश मे महिलाए राजनीति ही नही निर्णयन प्रक्रिया से बहुत कम जुडी हुई है। इसके विपरीत सविधान के 73 तथा 74वे सशोधन द्वारा सबलीकृत करने का प्रयास किया गया हैं जिसमे उन्हे पचायती राज के अतर्गत 33 प्रतिशत आरक्षण द्वारा सत्ताकृत किया गया है। यू0एन0डी0पी0 की वार्षिक रिर्पोट 1997 के अनुसार विकसित देशो मे 12 प्रतिशत तथा विकासशील देशो मे 6 प्रतिशत महिलाएं केन्द्रीय मंत्रीमडल की सदस्य है। सम्पूर्ण प्रतिशत 7 हैं यह प्रतिशत महिलाओ की सत्ता मे भागीदारी का संकेत मात्र है।

अधिकाश देशो मे कानूनी व्यवस्था पितृसत्तात्मक तथा बुर्जुआ है। भारत का सविधान इससे अछूता नही है। स्वतत्रता के पश्चात निर्मित सविधान मे महिलाओ को एक ओर जहॉ समानता का सैद्धान्तिक अधिकार दिया गया है वहीं निजी कानूनों को अनुच्छेद 26 के अनुसार वैधानिक मान्यता दे दी गयी है।

यह देश के विकास के लिए विशेषकर स्त्रियो के विकास मे बाधक रहा है। हिन्दू विधि मे फिर भी 1955–56 के पश्चात सुधार के लिए प्रयास किया गया किन्तु मुस्लिम विधि अपने मूल स्वरूप मे ज्यो की त्यो बनी हुई हैं। इसका परिणाम यह है कि महिलाओ की आधी जनसख्या आज भी वही है जहॉ 400 वर्षो पहले थी।

यू0एन0डी0पी0 ने 1995 मे इन सभी बातो को ध्यान मे रखते हुए Human Development Report के माध्यम से Gender Development Index का निर्माण किया। जिसमे भारत सबसे नीचे है भारत की इस स्थिति का कारण हमारी राजनीतिक अक्षमता भी है। हमने निर्माण प्रक्रिया मे महिलाओ के प्रश्न को हमेशा उपेक्षित रखा है। उदाहरण के रूप मे उसके स्वास्थ्य को ही ले भारत की स्वतत्रता के 50 वर्ष बीत जाने के बाद भी उत्तर प्रदेश मे एक सामान्य महिला को उसकी कुल कैलोरी का मात्र 54 प्रतिशत गॉवो मे तथा 64 प्रतिशत शहरो मे मिलता है। यह एक अत्यत महत्वपूर्ण तथ्य है कि प्रदेश की महिलाएं अनेक पोषक तत्वो जैसे प्रोटीन, ऊर्जा, लौहतत्व तथा रक्त अल्पता की शिकार है। इतना ही नही 90 प्रतिशत महिलाओ का भार उनकी आयु के हिसाब से कम होता है। ज्यादातर महिलाओं के गर्भधारण की उम्र 16 वर्ष तक मृत्युदर जो 15 से 35 वर्ष की उम्र मे लगभग 48 प्रतिशत है। इसके मूल मे निरक्षरता है क्योकि 1991 की जनगणना रिर्पोट के अनुसार मात्र 25 प्रतिशत महिलाए साक्षर है। आकडे बताते है कि उत्तर प्रदेश मे महिलाओ की घरेलू स्थिति तथा सामाजिक स्तर दोनो ही चिताजनक है। पुरूषो की तुलना मे वो भोजन, स्वास्थ्य तथा शिक्षा तीनो मे ही उपेक्षित है।

पिछले 50 वर्षो में महिला विकास सम्बन्धी सभी आकडो के अध्ययन के पश्चात यह कह पाना अत्यत आसान दिखता है कि भारतीय महिलाओ की समस्त समस्याए एक दूसरे से जुडी हुई है परिवार इसके मूल मे है। जहॉ हम पदानुक्रम द्वारा शोषण तथा उत्पीडन की व्यवस्थाए गढते हैं और हम यह स्वीकार करने से घबराते है कि हमारे सस्कारो मे कहीं कुछ विकास बाकी रह गया है।

मानव ने देशो को तो उपनिवेश बाद मे बनाया सबसे पहले तो व्यक्ति को ही उपनिवेश बनाया है। उपनिवेश यानि अस्मिता विहीन अस्तित्व जो प्रथमत अपने लिए नही अपने स्वामी के लिए हो। भारत जैसे गरीब देश मे वह एक सामती समाज मे इस उपनिवेश को बनाये रखने के लिए धर्म का सहारा लिया गया और धर्म के विस्तार के लिए सबसे अधिक उपजाऊ जमीन महिलाओ मे मिलती है क्योकि महिलाओ को इस किस्म की शारीरिक एव मानसिक गुलामी मे रखा गयाा है कि उनका कोई स्वतत्र अस्तित्व ही नही बनता उन्हे अपने जिन्दगी पर सबसे कम नियत्रण का अधिकार है। इसलिए राधाकृष्णन ने हिन्दू व्यू आफ लाइफ मे लिखा कि "जहॉ तक नर और नारी के सम्बन्धो के प्रश्न उठते है तो इस सम्बन्ध मे हमे गम्भीर कम और ईमानदार अधिक होना उचित होगा। जीवन मे इन गम्भीर मामलो मे हमारी प्रवृत्ति यह होती है कि हम ससार के सामने मिथ्या सा अभिनय करे। जहॉ सच्चाई और आतरिक इमानदारी होनी चाहिए वहॉ छल व कृत्रिमता व्याप्त है। अच्छा है इन तथ्यों का सामना ईमानदारी से किया जाय और ऐसी योजनाए बनाई जो अत्याधिक आदर्शवादी न हो। हम मनुष्य के सामने अच्छाई का जो नमूना और नैतिक कार्यो का जो विधान प्रस्तुत करे वो ऐसा होना चाहिए जिसका वो पालन कर सके। वह उस ससार के साथ सगत होना चाहिए जिसमे सामाजिक आधार व व्यवहार का ढाचा खोखला हो रहा है और समाज घुल–घुल कर नये रूप मे ढल रहा है। पुरूषो ने स्त्रियो के सम्बन्ध मे जो विचार प्रस्तुत किये वो अधिकाश दृष्टिकोण के लिए उत्तरदायी है। स्त्रियो के स्वामाव के विषय में और स्त्रियो की अपेक्षा पुरूषो की श्रेष्ठता के विषय मे मनगढंत कहानियॉ बना डाली। उसने सारी सूझ–बूझ नारी की रहस्यमयता और पवित्रता के साथ–साथ सौन्दर्य में लगा दी।"

ग्रन्थ सूची

(अ) (1) सस्कृत विधान संहिता

ऋग्वेद

अथर्ववेद

शतपथ ब्राह्मण (आवश्यकतानुसार अन्य)

धर्मसूत्र (प्रमुख रूप से गौतम धर्मसूत्र)

मनुस्मृति

कामसूत्र

मनुस्मृति की टीकायें-

(1) मिताक्षरा

(2) दाय भाग

(3) शुत्रनीतिसार

(4) याज्ञवल्कस्मृति

(5) विष्णु धर्मेत्तर पुराण

प्रमुख पुराण—

(1) वायु पुराण

(2) अग्नि पुराण

(3) भागवत पुराण

(2) प्रतिनिधि संस्कृत साहित्य

(1) वाल्मीकि रामायण

(2) महाभारत

(3) हर्षचरित

(4) मालती माधव

(5) मुद्राराक्षस

(6) अभिज्ञान शाकुतलम

(7) काव्य मीमासा

(8) कादम्बरी

(9) स्वप्न वासवदत्ता

(10) विक्रमाकदेव चरित

(3) प्रतिनिधि साहित्य

(1) राजतरंगिणी

(2) पद्मावत

(3) मृगावती

(4) चद्रायन

(5) पृथ्वीराज रासो

(6) परमाल रासो (आल्ह खण्ड)

(4) प्रतिनिधि इस्लामिक संहिता

(1) कुरान

(2) हदीस

(5) प्रतिनिधि मुस्लिम साहित्य

अकबरनामा—

तुजके जहाँगीरी—

तारीखे हिन्द—

(6) समकालीन हिन्दी साहित्यकारों की रचनाये

—महादेवी का साहित्य

—अमृता प्रीतम

—कृष्णा सोबती

—नासिरा शर्मा

—जयशंकर प्रसाद

—प्रेम चन्द

—मैथिलीशरण गुप्त

—शरत चन्द

—अन्य साहित्यकारो की अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी रचनाये

(7) पत्र-पत्रिकायें

—सरस्वती

—हंस

—चाद

—फेमिना

—सहेली

—मनोरमा

—धर्मयुग

—हिन्दुस्तान

—लीडर

—टाइम्स ऑफ इंडिया

—जनसत्ता

—सहारा

—महिलाओ पर प्रकाशित तमाम रचनाये व जर्नल इत्यादि

1 Agrawal M.N - Education in second five year plain university of Allahabad 1957-58

2. Agrawal J C- Indian women education and status 1976- New delhi

3. Ahuja Ram - Crims Against women , Jaipur 1987

4. Aiyer S.P- Modernization of traditional society and other essays macmillan of India 1973

5. Alatas , S.H.- Modernization and social change studies in social change in south East Asia ,Angus and Roberston publication,Sydney, 1972

6. Aleen shamin- Women police and social change 1992

7. Alteker A.S.- The position of women in the hindu civilizetion Banaras, 1947

8. Adray J.P- Crimes againest women , Jaipur New Delhi 1988

9. Ashraf K N.- Life and condition of the people of Hındustan New Delhı-1970

10 Asthama Pratima- Womens movement in India New Delhi-1970

11 Basham A.L. - Basham A.L.- Wonder that was India New Yark-1947

12 Beg,Tara Ali ed- Women in india, publicatıon division govt of India Delhi, 1958

13 Bhatnager G.S.- Education and social change the Minerva Associates Calcutta 1972.

14 Bashby H J - Window burning Londan .1855.

15 Chaudharı J.B- The position of women in vedic Rituals, vol II Calcutta 1956

16. Chaturvedi S.N.- History of rural Education in U.P Allahabad

17. Chaudhuri A.B.- Witch Killing among the santhals Allahbad 1985.

18 Cormack Margarde- she who rides a peacock Indion students and social change A Research analyis Asia publication house, Delhi 1961

19 Das R - Women education in the post independence period (1947-1971) and its impact on the social change

20. Dak T.M.- Women and work in indian society (Delhi,1988)

21. Deshpande V.S. - Women and New low (New Delhi, 1984)

22 De souza Alfred - Women and contemprory India (New Delhi,1977)

23. DeSai Neera - Women in modern india (Bombay 1963)

24. Everet J.M. - Women and social change in India (New Delhi 1981)

25. Gandhi M.K- Women and social justice 4th ed Ahemdabad 1959.

26. Gand M.K.- Women role in society Navjeevan publishing house 1959.

27 Gandhi M.K.-	Women Ahmedabad 1959.
28 Gandhı M.K.-	To the women ed hingorani A.T. vol I ,II Karanchi 1991.
29 Gupta Giri Raj -	Marriage religion and society pattern of change in Indian village Vikas publishıng house New Delhi.
30. Ghosh J. -	Daughter of Hındustan Cal cutta-1989.
31.Hate Chandrakala-	changing status of women Bombay- 1969
32 Hate Chandrakala -	changing status of women in post independence India allied publishers, New Delhi 1969.
33.Leela dube & Rajani Patriwala(eds) 1990-	stuctures of strategies women work and family New Delhi Sage.
34.M.C.-	Raja Ram Mohan Ray and Indian awakening New Delhi-1975
35.Mathed Asha -	Fair sex in unfair society 1992

36.Mahadevan- Women and population Dynamics.

36.Mehta Chetan Singh- Women and law 1992

37 Mehta Vimal - Attitude of Education women towards social issues New Delhi-1979.

38 Mitra Ajanta - Women in chaging society 1993.

39 Mishra Sheila- Womens Participation in poli tics and political parties New Delhi.

40.Mishra Rekha- Women in mugal India (1526-1748 AD) New Delhi.

ANNEXE

BIBLIOGRAPHY

1.Bose, Ashish Demographic Diversity of India, 1991, census state and District level Data Reference book B.R publishing corportation, Delhi july 1991.

2 Banerjee, B. world bank to help educate all the pioneer october 1, 1992.

3 Census of India occasional paper no.5 of 1994, housing and amenities.

4 Census of India series 1, paper 1 of 1981,1991.

5. Census of India series 22, occasional paper no.2, bassed on 5 persent sampling Uttar Pradesh, 1981.

6. Census of india series 22. provisional paper 1 of 1991 Uttar Pradesh.

7. Chandshekhar, c.p.&sen a. all india rural poverty: an esti mate frontline february 23, 1996.

8. Children and women in uttar pradesh a situtation analysis UNICEF Lucknow April 1994.

9. Children and women a situtation analysis (1990) UNICEF New Delhi 1991.

10. Draft five year plan (1992-97) U.P. vol. II.

11. EPW research foundation poverty levels in India norms estimats and trends August 21, 1993.

12 Glittering threads a social economic study of women Zari workers SEWA Bharat Lucknow 1989.

13. Health information of India 1990, 1991, central bureau of health intelligence directrote of health and family welfare govt of India.

14. Kabber N.& Murthy R.K. compensating for institutional Exclusion& Lessons from indian goverment and non goverment credit interventions for the poor insitute of devlopment studies discussion paper 356 1996, England.

15. Ministry of health and family welfare yearbook 1987-88 family welfare programes in India govt of India.

16 Mishra R. status of working women in Uttar Pradesh un published thesis giri institue of development studies lucknow (1989)

17. Naini a health scenario of u.p. voluntary health association Lucknow may 1989.

18. National family health survey population research centre Lucknow univercity Lucknow & IIps Bombay Uttar Pradeash 1992-93.

19 NSSO 27th round (oct.72-sep.73) for Uttar Pradesh NSSO, Nov 1975.

20 NSSO 43rd round (july1987-june1988)- Uttar Pradesh NSSO jan 1992.

21 National nutritinol monitoring board (NNMB) rural survey food and nutrition section state health secation Lucknow 1992.

22. Pulley r.v. making the poor creditworthy: a case study of IRDP in India world bank discussion paper 58 Washington 1989.

23. Registar generals news letter vol 20, 1990 vol 21 1991.

24. Sen B. situational analysis and strategy thrust in Uttar Pradesh study done for novib 1994. devlopments assocaates Lucknow.

25. Shiv kumar A.K. (1996) UNDP's Gender Realeted Devlopments Index (DI): A computation of indian status eco nomic and political weekly April 6, 1996.

26. State of India health voluntary health associnal of India New Delhi 1992.

27. Singh M.A. and Burra N. (ed) women in waste land devlopment Sage publications.

28. Saxena N.C. women and waste land devlopments in India policy issue (1993) Sage publication.

29. Singh K.S. ecology social organization economy linkages and devlopment process national series VII (1996) Oxford university press.

30 State of health in U.P. UPVHA Lucknow 1995.

31 Trivedi H.R. scheduled caste women studies women stud ies in explotation (1970) concept publishing company New Delhi

32. Who's who of U.P. legislative assembaly secreatry U.P. leg islative assembali.

33. Women in India A. Statistical profile department of women and child devlopments ministry of Human Resource Devlopments Goverment of India 1988